ISSN 0975-4083

Centre for Research Studies
REWA (M.P.)

रिसर्च जरनल ऑफ आर्ट्स, मैनेजमेन्ट एण्ड सोशल साइन्सेस

Peer-Reviewed Research Journal
UGC Journal No. (Old) 2138 Impact Factor 4.875 (IIFS)
Indexed & Listed at: Ulrich's Periodicals Directory
ProQuest, U.S.A. Title Id : 715204

अंक - 24, हिन्दी संस्करण, वर्ष-12, अक्टूबर-मार्च 2023

2023

www.researchjournal.in

आई. एस. एस. एन. 0975-4083

रिसर्च जरनल ऑफ आर्ट्स, मैनेजमेन्ट एण्ड सोशल साइन्सेस

Peer-Reviewed Research Journal
UGC Journal No. (Old) 2138
Impact Factor 4.875
Indexed & Listed at: Ulrich's Periodicals Directory ©, ProQuest, U.S.A. Title Id : 715204

अंक-24	हिन्दी संस्करण	वर्ष-12	अक्टूबर 2022- मार्च 2023

डॉ. अखिलेश शुक्ल
प्रधान सम्पादक (ऑनरेरी)
प्राध्यापक, समाजशास्त्र एवं समाजकार्य विभाग
उच्च शिक्षा उत्कृष्टता संस्थान, नैक 'ए' ग्रेड
शासकीय ठाकुर रणमत सिंह महाविद्यालय, रीवा (म.प्र.)
प्रतिष्ठित भारतेन्दु हरिश्चन्द्र एवार्ड तथा पं. गोविन्द वल्लभ पंत एवार्ड से सम्मानित
akhileshtrscollege@gmail.com

डॉ. संध्या शुक्ल
प्राध्यापक एवं विभागाध्यक्ष, राजनीति विज्ञान विभाग
उच्च शिक्षा उत्कृष्टता संस्थान, नैक 'ए' ग्रेड
शासकीय ठाकुर रणमत सिंह महाविद्यालय, रीवा (म.प्र.)
drsandhyatrs@gmail.com

डॉ. गायत्री शुक्ल
अतिरिक्त निदेशक, सेन्टर फॉर रिसर्च स्टडीज, रीवा
shuklagayatri@gmail.com

डॉ. आर. एन. शर्मा
सेवानिवृत्त आचार्य, उच्च शिक्षा, रीवा
rnsharmanehru@gmail.com

सेन्टर फॉर रिसर्च स्टडीज, रीवा
की मुख्य शोध पत्रिका

Experts & Members of Advisory Board

- Prof. Hemanta Saikia, Assistant Professor, Department of Rural Development,Debraj Roy College, Circuit House Road, Golaghat, Assam, India.Pin-785621
  jio84hemant@gmail.com
- Dr. K. S. Tiwari, Professor, Regional Director, Regional Centre Bhopal, IGNOU, Bhopal
  kripashankar19954@gmail.com
- Dr. Puran Mal Yadav, Department of Sociology, Mohan Lal Sukhadia University
  UDAIPUR – 313001 (Rajasthan)
  pnyadav1964@gmail.com
- Dr. Ram Shankar. Professor of Political Science, RDWVV Jabalpur University, (M.P.)
  rs_dubey@yahoo.com
- Prof. Anjali Bahuguna, Department of Economics, School of Humanities and Social Sciences (SHSS),, HNB Garhwal University, (A Central University), Srinagar-246174 (Garhwal)
  anjali shss@gmail.com
- Dr. Sanjay Shankar Mishra, Professor of Commerce, Govt. TRS PG College, Rewa (M.P.)
  ssm6262@yahoo.com
- Dr. Pramila Shrivastava, Associate Professor, Department of Economics, Govt. Arts College Kota (Raj),
  dr21pramila@gmail.com
- Dr Alka Saxena, D. B. S. College, Kanpur (U.P.)
  alknasexna65@yahoo.com
- Dr. Deepak Pachpore, Journalist
  deepakpachpore@gmail.com
- Dr. C. M. Shukla, Professor of History Government Maharaja College, Chhatarpur District Chhatarpur(M.P.),
  rajan.19shukla@gmail.com

Guide Lines

- **General:** English and Hindi Editions of Research Journal are published separately. Hence Research Papers can be sent in Hindi or English.
- **Manuscript of research paper:** It must be original and typed in double space on the one side of paper (A-4) and have a sufficient margin. Script should be checked before submission as there is no provision of sending proof. It must include Abstract,Keywords, Introduction, Methods, Analysis, Results and References. Hindi manuscripts must be in Devlys 010 or Kruti Dev 010 font, font size 14 and in double spacing. All the manuscripts should be in two copies and in Email also. Manuscripts should be in Microsoft word program. Authors are solely responsible for the factual accuracy of their contribution.
- **References :** References must be listed cited inside the paper and alphabetically in the order- Surname, Name, Year in bracket, Title, Name of book, Publisher, Place and Page number in the end of research paper as under- Shukla Akhilesh (2018) Criminology, Gayatri Publications, Rewa : Page 12.
- **Review System:** Every research paper will be reviewed by two members of peer review committee. The criteria used for acceptance of research papers are contemporary relevance, contribution to knowledge, clear and logical analysis, fairly good English or Hindi and sound methodology of research papers. The Editor reserves the right to reject any manuscript as unsuitable in topic, style or form without requesting external review.

लेखकों से निवेदन-

- रिसर्च जरनल ऑफ आर्टस एण्ड मैनेजमेन्ट एण्ड सोशल साइंसेज (ISSN-0975-4083) सेन्टर फॉर रिसर्च स्टडीज की मुख्य शोध पत्रिका है।

  शोध पत्रिका उलरिच इन्टरनेशनल पीरियाडिकल्स डाइरेक्ट्री प्रोक्वेस्ट, संयुक्त राज्य अमेरिका से इंडेक्स्ड और लिस्टेड हैं।
- शोध पत्रिका का अंग्रेजी एवं हिन्दी संस्करण अलग-अलग प्रकाशित होता है।
- रिसर्च जरनल ऑफ आर्ट्स, मैनेजमेन्ट एण्ड सोशल साइंसेस का प्रकाशन प्रतिवर्ष मार्च तथा सितंबर में किया जाता है।
- रिसर्च जरनल ऑफ आर्ट्स, मैनेजमेन्ट एण्ड सोशल साइंसेस को इम्पैक्ट फैक्टर एवं आई.एस.एस.एन प्राप्त हैं। शोध पत्रिका Peer-Reviewed हैं।
- शोध पत्रिका के नवीनतम अंक में प्रकाशित शोध पत्रों को हमारी वेबसाइट www.researchjournal.in (Current Issue) में देखा जा सकता है तथा डाउनलोड किया जा सकता है।
- शोध पत्रिका का प्रिंट एडीशन सदस्यों को अलग से डाक द्वारा भेजा जाता है।
- शोध पत्र में शीर्षक, नाम, पद, पदस्थापना का विवरण, पत्र व्यवहार का पता तथा दूरभाष क्रमांक, मोबाइल नं., ई-मेल एड्रेस अवश्य दिया जाये।
- शोध पत्र के प्रारम्भ में कम से कम 50-100 शब्दों का सारांश दिया जाये।
- मुख्य शब्द सारांश के नीचे टाइप कराया जाये।

- शोध पत्र में शोध पद्धति तथा शोध में प्राप्त तथ्यों का विश्लेषण किया जाना चाहिए।
- शोध पत्र में निष्कर्ष और अंत में संदर्भ ग्रंथ सूची दी जाये। संदर्भ ग्रंथों का विवरण पूरा दिया जाये। लेखक का नाम, वर्ष, पुस्तक का नाम, प्रकाशक का विवरण, प्रकाशक का स्थान और पृष्ठ संख्या आदि का विवरण दिया जाना चाहिए।
- शोध पत्र माईक्रोसॉफ्ट वर्ड की फाइल में टाइप किया हुआ होना चाहिए। (नोट- पेज मेकर की फाइल, पी.डी.एफ. फाइल, स्कैन मैटर आदि में कदापि शोध पत्र न भेजें) शोध पत्र हिन्दी लिपि में कृतिदेव या देवलिस फांट 010 (फॉन्ट साइज 14, स्पेस डबल, मार्जिन ए-4 साईज के कागज में चारो तरफ 1 इंच) में भेजा जाना चाहिए।
- शोध पत्र के साथ यह घोषणा अवश्य संलग्न करें कि शोध पत्र मौलिक है तथा इसे कहीं अन्यत्र प्रकाशनार्थ प्रेषित नहीं किया गया है।

सर्वप्रथम शोध पत्र ई-मेल द्वारा भेजें-

- **researchjournal97@gmail.com,**
- **researchjournal.journal@gmail.com**
- शोध पत्र की स्वीकृति की सूचना सम्पादकीय कार्यालय द्वारा लेखक को ई-मेल एवं दूरभाष द्वारा प्रदान की जाती है।

© सेन्टर फॉर रिसर्च स्टडीज

एक अंक रुपये 500.00	-सदस्यता शुल्क -	
अवधि	व्यक्तिगत सदस्यता	संस्थागत सदस्यता
वर्ष एक	2000-00	2500-00
वर्ष दो	2500-00	4000-00

सदस्यता शुल्क की राशि गायत्री पब्लिकेशन्स के स्टेट बैंक ऑफ इण्डिया, ब्रांच-रीवा सिटी (आईएफएस कोड 0004667 MICR Code 486002003) के खाता क्रमांक 30016445112 में जमा की जाय, नगद जमा की स्थिति में 75 रु. अतिरिक्त बैंक चार्ज जोड़ा जाय।

प्रकाशकः गायत्री पब्लिकेशन्स
रीवा- 486001 (म.प्र.)

मुद्रकः ग्लोरी ऑफसेट
नागपुर

संपादकीय कार्यालय

186/1, विन्ध्य विहार कालोनी
रीवा- 486001 (म.प्र.)
E-mail- researchjournal97@gmail.com, researchjournal.journal@gmail.com
www.researchjournal.in
दूरभाष - 7974781746

रिसर्च जरनल में प्रस्तुत किये गये विचार और तथ्य लेखकों के हैं, जिनके विषय में सेन्टर फॉर रिसर्च स्टडीज, सम्पादक मण्डल, प्रकाशक तथा मुद्रक उत्तरदायी नहीं हैं। रिसर्च जरनल के सम्पादन एवं प्रकाशन में पूर्ण सावधानी रखी गई है, किन्तु किसी त्रुटि के लिए सेन्टर फॉर रिसर्च स्टडीज, सम्पादक मण्डल, प्रकाशक तथा मुद्रक उत्तरदायी नहीं हैं। सम्पादन का कार्य अव्यावसायिक और ऑनरेरी है। सभी विवादों का न्यायालय क्षेत्र, रीवा जिला रीवा (म.प्र.) रहेगा।

सम्पादकीय

रिसर्च जर्नल ऑफ आर्ट्स मैनेजमेन्ट एण्ड सोशल साइंसेज का 24 वां अंक अक्टूबर -मार्च 2023 आपके समक्ष प्रस्तुत है। यहां हम भारतीय लोक सेवाओं के संबंध में यह कहना चाहेंगे कि प्रत्येक प्रशासन के लिए प्रशासनिक सेवाएं आवश्यक होती हैं क्योंकि यह प्रशासन में परिपक्वता, स्थायित्व, निर्भिकता, विकास और निश्चितता लाती है। आधुनिक प्रशासनिक सेवा विकसित और विकासशील राज्यों के संदर्भ में इन तकनीकी रूप में प्रशिक्षित स्थायी अधिकारियों द्वारा निर्मित है जो प्रशासन में अपना पूरा समय व जीवनकाल लगा देते है- जिसके कारण प्रशासनिक सेवाएं राजनीति के प्रति उदासीन, निष्पक्ष, क्रियाशील, लोककल्याण के प्रति जागरूक और उत्तरदायित्व से पूर्ण मानी जाती है । नौकरशाही किसी राष्ट्र के जीवन में बाधक नहीं है, जैसा कि बहुत से लोग मानते हैं। हमारी राष्ट्रीयता राजनैतिक नेताओं और चुनाव पद्धति पर टिकी हुई नहीं है, बल्कि इसकी बुनियाद देश की नौकरशाही है। हमारा देश ठीक-ठाक ढंग से चल रहा है, तो केवल इसलिए क्योंकि हमारे पास एक सुदृढ़ और सुव्यवस्थित नौकरशाही व्यवस्था है, जो एक खास तरीके से प्रशिक्षित है।

'नौकरशाही' की अवधारणा के आधुनिक संस्करण का विकास होता गया और ''मैक्सवेबर'' ने नौकरशाही का समाजशास्त्रीय अध्ययन करते हुए इस शब्द को विभिन्न अर्थों से मुक्त किया और इस बात पर बल दिया कि किसी संगठन के उद्देश्यों अथवा लक्ष्यों की उचित प्राप्ति के लिए नौकरशाही अनिवार्य है। इस संबंध में पिफनर महोदय ने लिखा है कि नौकरशाही कार्यों और व्यक्तियों के एक ऐसे रूप में व्यवस्थित संगठन है जो अधिकतम प्रभावशाली रूप में सामूहिक प्रयासों के लक्ष्यों को प्राप्त कर सके। देश का प्रशासन चलाने का कार्य एक बहुत बड़ी जिम्मेदारी है। यह उन जिम्मेदारियों से कहीं, बड़ी है जो राजनेताओं को पांच सालों के लिए मिलती है। इसलिए एक नौकरशाह के जीवन को इस तरह से सशक्त करना जरूरी हो जाता है जिससे उसका जीवन तनाव और रोगों से मुक्त रहे, ताकि राष्ट्र अपने ही भार से दबकर चरमरा न जाए। अगर आज यह चरमरा रहा है तो इसका कारण यह है कि इसके बुनियादी ढांचे को उसकी सीमाओं से आगे खींचा जा रहा है। हमारे नौकरशाहों को हद से ज्यादा और अतर्कसंगत कार्य करने के लिए कहा जा रहा है। कानूनों को लागू करने की बजाए उनको तोड़ने-मरोड़ने के लिए उनसे कहा जा रहा है। इन वजहों से एक नौकरशाह की जिंदगी बेहद चुनौतीपूर्ण और अपेक्षाओं से भरी हो गई है। जनतांत्रिक व्यवस्था में सरकारें बदलना एक सहज-स्वाभाविक प्रक्रिया है और यह भी एक सच्चाई है कि हर सरकार अपनी पसंद के अफसरों को उन स्थानों पर रखना चाहती है, जिन्हें वह महत्वपूर्ण समझती है। लेकिन यदि इस प्रक्रिया में अधिकारियों की प्रतिबद्धता किसी सरकार या मंत्री विशेष के साथ होना एक शर्त बन जाती है, तो यह स्थिति चिंता की भी होती है और खतरनाक भी। नौकरशाही की प्रतिबद्धता यदि किसी के प्रति होनी चाहिए तो वह देश की जनता एवं उसके हितों के प्रति ही हो सकती है। यह सही है कि सरकारी अधिकारियों को सरकार के निर्देशों के अनुसार कार्य करना होता है, पर उनसे यह भी अपेक्षा की जाती है कि यदि ऐसे निर्देश राष्ट्रीय हितों एवं सांविधानिक

मर्यादाओं के अनुरूप न हों, तो वे आदेश देने वालों को इस बारे में आगाह अवश्य कर दें। उनकी प्रतिबद्धता की कसौटी जनहित ही होनी चाहिए। ऐसा नहीं है कि सरकारें अथवा नेता इस बात को, और इस बात के महत्व को समझते नहीं हैं। ऐसा भी नहीं है कि इस भावना के विपरीत काम करने वाली सरकारों को इसके दुष्परिणामों से परिचित नहीं किया गया। लेकिन इस सबके बावजूद वे यह मानने के लिए तैयार नहीं कि उनके निर्देशों के पालन के अलावा भी सरकारी अधिकारियों की कुछ भूमिका हो सकती है।

सच तो यह है कि इस तरह के कर्तव्यनिष्ठ अधिकारियों को प्रोत्साहित किया जाना चाहिए। पर राजनीति के समीकरण इतने सीधे और सरल नहीं होते। यदि राजनेताओं का व्यवहार और सोच अपने स्वार्थों की सीमाओं से पार जा सके, तो शायद स्थिति में कुछ बदलाव आए, पर आज जैसी स्थितियां हैं, वे कोई आशा जगाने वाले नहीं हैं। हां, वे अधिकारी अवश्य आशा जगाते हैं, जो जनहित के लिए अपनी प्रतिबद्धताओं के प्रति ईमानदार हैं।

हमारे यहां सरकार किसी भी दल की हो, पर अफसर वहीँ रहते हैं। जो तबादले होते भी हैं तो उन्ही में से जाते हैं। ऐसा नहीं है यह नौकरशाही राजनीतिक गुटबाजी से अलग है, पर पूरी अफसरशाही ही गुटबाजी में लिप्त हो ऐसा भी नहीं है। हाँ कुछ अफसरों का ग्रुप जरूर राजनीतिक गुटबाजी में लिप्त हो जाता है। यह प्रवृत्ति भी इधर हाल ही में आयी है। लेकिन नौकरशाही का मूल चरित्र अभी भी काफी हद तक राजनीतिक प्रतिबद्धता से मुक्त ही है।

यह बहुत जरूरी हो जाता है कि हर नौकरशाह अपने भीतर एक स्वाभाविक और सहज सुख की स्थिति में रहे। जब तक हम खुद अपने भीतर एक सुख की स्थिति में न हों हमें किसी दूसरे की जिंदगी को छूने का कोई हक नहीं है।

आशा है हमें आपका पूर्व वक्त अकादमिक सहयोग प्राप्त होता रहेगा

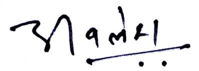

डॉ. अखिलेश शुक्ल
प्रधान सम्पादक

अनुक्रमणिका

01.	पुलिस कर्मियों की समस्याओं का विश्लेषण (रीवा जिले के विशेष संदर्भ में) **अखिलेश शुक्ल**	09
02.	घरेलू हिंसा : एक समाजशास्त्रीय अध्ययन (मथुरा जिले पर आधारित) **अनिता सोनी, ब्रजेश कुमार सिंह**	21
03	भारत के ग्रामीण क्षेत्रों में प्रमुख स्वास्थ्यसंकेतकों की स्थिति का अध्ययन (छत्तीसगढ़ राज्य के विशेष संदर्भ में) **अश्वनी कुमार, मनदीप खालसा**	31
04	बिहार में मानव संसाधन विकासः प्रतिरूप एवं परिवर्तनीयता **गणेश कुमार शर्मा**	39
05	वाक् एवं अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता के परिप्रेक्ष्य में: सूचना के अधिकार की प्रासंगिकता **पी. एस. बोरा**	47
06	गढ़वाल हिमालय के प्रणय गीत **डी. एस. भण्डारी**	52
07	हिन्दी मीडिया : प्रगतिशील चिन्तन की व्यवहारिक भूमिका **वीरेन्द्र सिंह यादव**	58
08	लोकगीतों में छुपा इतिहासः 1857 की क्रांति के विशेष संदर्भ में **भूपेश, पूजा साहू**	64
09	सर्वोदय विचार का उदय और विकास **नवरत्न सिंह**	75
10	वर्तमान समय में स्वामी विवेकानन्द जी के मानव निर्माण शिक्षा के उद्देश्य **सोना राम वर्मा, कविता साहू**	82
11	उत्तर-प्रदेश के शिक्षक-शिक्षा संस्थानों की नैक मान्यता का एक अध्ययन **योगेश कुमार सिंह**	89
12	जनदेवता-भगवान शिव **आशुतोष शुक्ल**	97
13	भारतीय हिमालय क्षेत्र में अवधाव आपदा प्रबंधन की जटिलताएँ **अजय कुमार, एम. एस. शेखर**	102
14	जनपद शाहजहाँपुर में कृषि व्यावसायिकरण का कृषि आधारित उद्योगों के विकास पर प्रभावः एक भौगोलिक विश्लेषण **भूपेन्द्र कुमार, सन्नवर**	109
15	व्यावसायिक आकांक्षा एवं संज्ञानात्मक विभेदन **सोना राम वर्मा**	118
16	लिंग प्रादुर्भाव एवं लिंगार्चन **आशुतोष शुक्ल**	125

17	आधुनिक युग और गांधी की अहिंसा **सत्यनारायण**	129
18	स्त्री चेतना का पुरुषात्मक विमर्श **नीरज चौबे**	134
19	प्राचीन भारत में मुद्राओं पर प्रतीक चिन्ह एक अध्ययन **प्रीतम कुमार**	138
20	आयोनिक मत में परम तत्व **सत्यनारायण**	142
21	अवतारवाद **आशुतोष शुक्ल**	148
22	भारत का आर्थिक विकास **मंजरी अवस्थी**	154
23	पुस्तकालय एक सर्वेक्षण **स्वाति पाण्डेय**	160
24	मध्य प्रदेश एवं भारत की प्रति व्यक्ति आय का तुलनात्मक अध्ययन **राकेश कुमार दिलावरे**	164
25	भारतीय पुनर्जागरण और दिनकर–काव्य **डॉ. जय शंकर शाही**	168

UGC Journal No. (Old) 2138
Peer-Reviewed Research Journal
Impact Factor 4.875, ISSN 0975-4083
Vol.- 24, Hindi Edition, Year-12, Oct. 2022- March 2023

पुलिस कर्मियों की समस्याओं का विश्लेषण (रीवा जिले के विशेष संदर्भ में)

•अखिलेश शुक्ल

सारांश- वर्तमान समाज में बढ़ती समस्याओं के कारण जहाँ एक ओर पुलिस वर्ग का दायित्व बढ़ता जा रहा है, वहीं दूसरी ओर पुलिस के अधिकार क्षेत्र की कमी और आर्थिक समस्याएँ उन दायित्वों को पूरा करने में बाधक भी बन रही हैं। वर्तमान परिवेश में जहाँ समाज में आपराधिक गतिविधियों में वृद्धि हुई है वहीं पुलिस प्रशासन में भी अपने कर्तव्य संबंधी कार्यो को सुचारू रूप से करने में कठिनाइयाँ बढ़ी हैं। पुलिस संगठन पर सामाजिक व राजनैतिक हस्तक्षेप का दबाव अपराध में कमी करने के स्थान पर बढ़ावा देता दिखाई दे रहा है। एक पुलिस कर्मचारी को अपने कार्यकाल में अनेक व्यक्तिगत एवं प्रशासनिक समस्याओं का सामना करना पड़ता है। इस शोध पत्र में पुलिस की व्यक्तिगत एवं प्रशासनिक समस्याओं का अध्ययन करने का प्रयास किया गया है।

मुख्य शब्द-पुलिस, तनाव, कर्तव्य, दायित्व

अवधारणात्मक विश्लेषण- पुलिस समाज में कानून और व्यवस्था बनाए रखने वाली ऐसी कार्यकारी संस्था है,जो समाज की स्थिरता और सुरक्षा को सुनिश्चित करती है। समाज में होने वाले प्रत्येक न्यायिक व प्रशासनिक आदेश संबंधी कार्यो का सुचारू रूप से कार्यपालन का उत्तरदायित्व पुलिस संगठन का ही होता है। एक लोकतंत्रात्मक समाज में पुलिस का महत्व और अधिक बढ़ जाता है, क्योंकि लोकतंत्रात्मक प्रशासन व्यवस्था में प्रत्येक व्यक्ति को आजादी प्राप्त होती है और यदि उसकी इसी आजादी और सुरक्षा में कोई व्यवधान उत्पन्न होता है तो जनता के ध्यान में सर्वप्रथम पुलिस संगठन ही आता है। ऐसे में पुलिसकर्मी अपनी सुख सुविधाओं और व्यक्तिगत समस्याओं से परे हटकर सेवा में तत्पर रहता है किन्तु विडम्बना यह है कि फिर भी जनता असंतुष्ट रहती है तथा उनकी समस्याओं को नजर अंदाज करते हुए दोषारोपण करने से नहीं चूकती।यद्यपि किसी भी समाज में पुलिस की भूमिका को महत्वपूर्ण माना जाता है किन्तु यदि समाज लोकतंत्रात्मक और धर्म निरपेक्ष हो तो पुलिस की रचनात्मक भूमिका तथा जनता के साथ सहयोगात्मक एवं सहानुभूतिपूर्ण संबंध की महत्ताा और अधिक बढ़ जाती है जिसमें पुलिस कर्मचारी को न केवल शांति और व्यवस्था बनाए रखने का उत्तरदायी समझा जाता है बल्कि उससे जनता का मित्र, पथ प्रदर्शक व दार्शनिक जैसी भूमिका का निर्वहन करने

• प्राध्यापक, समाजशास्त्र, शासकीय ठाकुर रणमत सिंह महाविद्यालय, रीवा (मध्य प्रदेश)

की भी अपेक्षा की जाती है। लोकतंत्र में पुलिस की विधि के शासन के प्रति प्रतिबद्धता अत्यंत महत्वपूर्ण एवं अपरिहार्य होती है।[1] भारतीय संविधान में प्रत्येक व्यक्ति, वर्ग, संस्था को विधिक समता प्रदान की गई है। किन्तु यह आश्चर्य नहीं तो क्या है कि विधिक संबंधी व्यवस्था को नियंत्रित व सुचारू रूप से चलाने वाली पुलिस संस्था को यह अधिकार प्राप्त नहीं है। भारत वर्ष में किसी भी संस्था के किसी भी अधिकारी और कर्मचारी को अविश्वसनीय नहीं माना जाता, उसके द्वारा दी जाने वाली गवाही को कानून द्वारा महत्व प्रदान किया जाता है किन्तु पुलिस संगठन में यह अधिकार किसी भी कर्मचारी और अधिकारी को प्राप्त नहीं है।[2] दूसरे शब्दों में कानून पुलिस वर्ग के किसी भी व्यक्ति को विश्वसनीय नहीं मानता और उसकी गवाही को न्यायालय में मान्यता प्राप्त नहीं होती। यह विडम्बना नहीं तो क्या है कि न्यायिक और कानूनी व्यवस्था बनाए रखने वाली संस्था के व्यक्तियों को ही न्याय और कानूनी व्यवस्था में अविश्वसनीय माना जाता है। यह अविश्वास उस संस्था पर जो इस समाज पर नियंत्रण के लिए अत्यंत महत्वपूर्ण है कितना उचित है यह एक शोचनीय प्रश्न है।

समाज में बढ़ती समस्याओं चाहे वे जनसंख्या संबंधी हो, आपराधिक हो या साम्प्रदायिक किसी भी समस्या के पैदा होते ही जनता के मन, मस्तिष्क में सर्वप्रथम पुलिस की छवि ही उभरती है और जनता की यह अपेक्षा होती है कि पुलिस उस समस्या को ध्यानपूर्वक सुने। किसी भी स्थान पर अचानक उत्पन्न समस्या का समाधान करने पुलिस तत्काल पहुँचे तथा किसी भी प्रकार की असुरक्षा के वातावरण में पुलिस द्वारा उन्हें सुरक्षा प्राप्त हो। यदि किसी आवश्यक स्थान पर पुलिसकर्मियों को पहुँचने में विलंब हो तो यह पुलिस की लापरवाही समझी जाती है और इसे पुलिस की उस कार्य के प्रति अवहेलना समझा जाता है किन्तु कार्य को समय पर न कर पाने की मजबूरी पर ध्यान नहीं दिया जाता। अनेक बार किसी घटना के घटने पर पुलिस स्टाफ की कमी कार्य पूरा न हो पाने का कारण बन जाता है। यह स्वाभाविक ही है कि यदि स्टाफ में पुलिसकर्मियों की संख्या में कमी है तो प्रत्येक कार्य उचित समय पर सुचारू रूप से करना अत्यंत कठिन होगा।[3]

यदि किसी स्थान पर अपराधियों की संख्या अधिक हो और वे अपराध में लिप्त हो तो ऐसी स्थिति में यदि पुलिसकर्मी को अपराध की जानकारी प्राप्त भी हो जाए तो वह उस स्थान पर नहीं पहुँच पाता क्योंकि पुलिस स्टाफ की अपेक्षा अपराधियों की संख्या भी अधिक होती है और अपराधियों की अपेक्षा उनके पास अपराध से निपटने की सुविधाएँ भी अपर्याप्त होती हैं। इसी प्रकार दंगे या सभाओं में होने वाली अव्यवस्थाए कोई दुर्घटना आदि की स्थिति में भी पुलिस थानों में कार्यरत स्टाफ की कमी के कारण भी जनता में असंतोष बढ़ता है जिसका ज्ञान जनता को नहीं होता।

पुलिस जनसंख्या अनुपात- भारत में प्रति लाख जनसंख्या में सन 2018 में पुलिस जनसंख्या अनुपात 198.65 पाया गया है जबकि यह अनुपात सन 2017 में 192.95 था भारत में पुलिस जनसंख्या अनुपात मणिपुर में सर्वाधिक 1314.84 पाया गया है।[4]

पुलिस क्षेत्र अनुपात- भारत में प्रति 100 वर्ग किलोमीटर में सन 2018 में पुलिस अनुपात 78.45 था। सर्वाधिक उच्चतम क्षेत्र चंडीगढ़ में 7719 पाया गया है। सन 2018 में 500.40 व्यक्तियों में आनुपातिक रूप में एक पुलिसकर्मी आता है, जबकि 2017 में यह संख्या 518.27 थी। दादर नगर हवेली में यह अनुपात उच्चतर स्तर पर पाया गया है, यहां 1302.26 व्यक्तियों में एक पुलिसकर्मी की तैनाती पाई गई है। सन 2018 में प्रति वर्ग किलोमीटर में 1.27 पुलिसकर्मी की पदस्थापना के आंकड़े सामने आए हैं। यह स्थिति अरुणाचल प्रदेश में उच्चतम स्तर में पाई गई है। यहां 5.75 वर्ग किलोमीटर में एक पुलिसकर्मी की तैनाती की स्थिति पाई गई है।

तालिका 01

भारत में स्वीकृत एवं वास्तविक पुलिस बल

स्वीकृत पुलिस बल		वास्तविक पुलिस बल	
सिविल पुलिस	16.51 लाख	सिविल पुलिस	13.03 लाख
सशस्त्र बल	03.17 लाख	सशस्त्र बल	02.66 लाख
राज्य सशस्त्र बल	06.27 लाख	राज्य सशस्त्र बल	04.98 लाख
योग पुलिस बल	25.95 लाख	योग पुलिस बल	20.67 लाख

भारत में उत्तर प्रदेश राज्य स्वीकृत और वास्तविक पुलिस बल की स्थिति में प्रथम स्थान पर आता है। उत्तर प्रदेश में स्वीकृत पुलिस बल 4.14 लाख है, जबकि वास्तविक पुलिस बल 2.94 लाख पाया गया है।

पुलिस बजट- भारत में सन 2018-19 में पुलिस का बजट 1,33,324.94 करोड़ का रहा है, जबकि 2017-18 में यह राशि 1,18,211 .24 करोड़ की रही है। अखिल भारतीय स्तर पर 2018-19 में पुलिस प्रशिक्षण मद में 1675.50 करोड़ रुपए की राशि आवंटित की गई थी।

महिला पुलिस- भारत में महिला पुलिस की वास्तविक संख्या 01.01.0219 की स्थिति में 1,85,696 पाई गई है, जबकि 01.01.2018 में यह स्थिति 1,69,550 कि रही इस तरह 9.52: की वृद्धि यहां पर परिलक्षित होती है, जो एक सुखद संकेत है। भारत में महाराष्ट्र में महिला पुलिस की सर्वाधिक संख्या 27660 पाई गई है।

पूर्व साहित्य की समीक्षा- अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर पुलिस विषय पर अध्ययन Joseph. A. Schater, Southern Illionis University Carbondable, Illinois द्वारा 21वीं शताब्दी के प्रारम्भ में किया गया है। इस शोध में उन्होंने पुलिसजनों के संघर्षों का अध्ययन करते हुए पुलिस छवि पर अपने निष्कर्ष प्रस्तुत किये हैं। सन् 2006 में William J. Woska. ने इस विषय पर कार्य किया है, उनके निष्कर्षों का प्रकाशन The Police Chief (New York) के अक्टूबर 2006 के अंक में हुआ है। Sanuel Walker के अध्ययन का प्रकाशन Sage Publications द्वारा सन् 2005 में किया है। North Washington esa Police Image and Ethics Commitee, द्वारा इस दिशा में कुछ शोध कार्य किये जा रहे हैं। भारत में भी पुलिस अनुसंधान एवं विकास ब्यूरो, भारत सरकार नई दिल्ली द्वारा भारतीय पुलिस पर अध्ययन कराये एवं प्रकाशित किये गये हैं। राष्ट्रीय स्तर पर पुलिस सम्बंधित विषयों पर अरुण प्रसाद मुर्कजी, ए.पी. मोहम्मद अली, बी. रामन, बी.पी. शाह, बी.आर. लाल, बी.एल. बोहरा, किरण वेदी, अखिलेश शुक्ल आदि ने

महत्वपूर्ण कार्य किये हैं।

उद्देश्य- प्रस्तुत शोध पत्र का मुख्य उद्देश्य रीवा जिले के पुलिस कर्मियों की व्यक्तिगत एवं प्रशासनिक समस्याओं का अध्ययन करना है

अध्ययन क्षेत्र- भारत के मध्य में स्थिति रीवा जिला स्वतंत्रता पूर्व रीवा रियासत का मुख्य भाग था, जहाँ राज्य की राजधानी थी। स्वतंत्रता के बाद नवगठित विंध्य प्रदेश में भी इस जिले की यही स्थिति रही।[5] नवम्बर 1956 से मध्यप्रदेश का संभागीय मुख्यालय है। मध्यप्रदेश के उत्तर पूर्वी भाग में स्थित रीवा जिला 23.11से 24.18 उत्तरी अक्षांस एवं 81. 03 से 82.10 डिग्री पूर्व देशान्तर में स्थित है। रीवा जिला मध्यप्रदेश के उत्तर-पूर्वी कोने में स्थित है। इसके उत्तर में बाँदा और इलाहाबाद जिले, पूर्व तथा उत्तर प्रदेश का ही मिर्जापुर जिला, दक्षिण में मध्यप्रदेश का सीधी जिला और दक्षिण-पश्चिम में सतना जिला है। रीवा जिले का कुल क्षेत्र 6314 वर्ग किमी. है। 2011 की जनगणना के अनुसार ग्रामीण क्षेत्रों में जहाँ प्रतिवर्ग किमी. 374 लोग निवास करते हैं, वहीं नगरीय क्षेत्र में प्रतिवर्ग किमी. 316 लोग रह रहे हैं। नगर निगम रीवा क्षेत्र में तुलनात्मक रूप से यह सघनता और भी बढ़ गई है। यहां प्रतिवर्ग किमी. 3119 लोग निवास कर रहे हैं। 2011 की जनगणना के अनुसार रीवा जिले में प्रतिवर्ग किमी. 374 लोग निवास करते हैं। 2011 में सम्पन्न जनगणना के प्रावधिक आँकड़ों के अनुसार रीवा जिले में 2363744 लोग रहते हैं। 2001-2011 के बीच यहाँ की जनगणना में 19.79 प्रतिशत की वृद्धि हुई। जिले की साक्षरता दर 73.42 प्रतिशत है। रीवा जिला में पुरुष साक्षरता दर 83.67 प्रतिशत तथा महिला साक्षरता दर 62. 49 है। जिले में प्रति हजार पुरुष की तुलना में महिलाओं की संख्या 930 है। 2011 की जनगणना के अनुसार रीवा जिले की कुल जनसंख्या 2263744 है, जिसमें पुरुष 1224918 तथा महिला 1138826 हैं। सन् 2011 में रीवा जिले में स्त्री-पुरुष अनुपात 930 पाया गया है।

रीवा जिला में 28 पुलिस थाने हैं। अतरैला, अमहिया, बैकुंठपुर, चाकघाट, चोरहटा, सिविल लाइंस, डभौरा, गढ़, गोविंदगढ, हनुमना, जवा, कोतवाली, लौर, मनगवां, मऊगंज, नईगढ़ी, पनवार, रायपुर कर्चुलियान, सगरा, सेमरिया, शाहपुर, सिरमोर, सोहागी, विश्वविद्यालय, त्योंथर, यातायात, महिला, अनुसूचित जाति जनजाति। इनके अलावा रीवा जिले में 21 पुलिस आउट पोस्ट भी है।

अध्ययन विधि- प्रस्तुत शोध पत्र में पुलिसकर्मियों की समस्याओं का विश्लेषण करना था इसलिए रीवा जिले के 300 पुलिसकर्मी उत्तरदाताओ का चयन उद्देश्य पूर्ण निदर्शन प्रणाली के आधार पर किया गया है। तथ्यों का सारणीयन एवं विश्लेषण- साक्षात्कार से प्राप्त तथ्यों को सारणी में प्रस्तुत करते हुए उनका विश्लेषण किया गया है और तथ्यों को डायग्राम में भी प्रस्तुत किया गया है।

उपकल्पना- अनुसन्धान या अध्ययन के क्षेत्र में पूर्व कल्पना या उपकल्पना का महत्वपूर्ण स्थान होता है। इसका निर्माण और प्रयोग वैज्ञानिक अध्ययन पद्धति का एक महत्वपूर्ण चरण होता है। सरल शब्दों में उपकल्पना का अर्थ होता है, एक ऐसा विचार या सिद्धांत जिसे शोधकर्ता अध्ययन के लक्ष्य के रूप में रखता है, उसकी जांच करता है और प्रमाणित करता है। इस शोध पत्र की कुछ उपकल्पना इस प्रकार है-

1. पुलिसकर्मी अपने कार्य की तुलना में पाने वाले वेतन से संतुष्ट नहीं है
2. पुलिसकर्मी अपनी कार्य अवधि को लेकर संतुष्ट नहीं है
3. पुलिसकर्मी मिलने वाले अवकाश से संतुष्ट नहीं है

अध्ययन का महत्व- प्रस्तुत शोध के आधार पर पुलिसकर्मियों की वास्तविक स्थित को ज्ञात किया जा सकता है।

अध्ययन की कठिनाई- साक्षात्कार हेतु पुलिसकर्मियों की समय पर उपलब्धता व उनसे समय प्राप्त करने मे कठिनाई आयी।

तथ्यों का सारणीयन एवं विश्लेषण- उत्तरदाता पुलिसकर्मियों से प्राप्त तथ्यों का विश्लेषण यहां प्रस्तुत किया जा रहा है।

कार्य व वेतन की स्थिति- उत्तरदाता पुलिसकर्मियों से जब उनके कार्य के घंटे और प्रकार तथा उन्हें प्राप्त होने वाले वेतन और भत्ते के संबंध में तथ्य एकत्रित कर उनका विश्लेषण यहां प्रस्तुत किया जा रहा है।

तालिका 02

क्या आप अपने कार्य व वेतन से संतुष्ट हैं?

राय	संख्या	प्रतिशत
हाँ	90	30 प्रतिशत
नहीं	210	70 प्रतिशत
योग	300	100 प्रतिशत

उक्त स्थिति को नीचे पाई डायग्राम में प्रस्तुत किया जा रहा है–

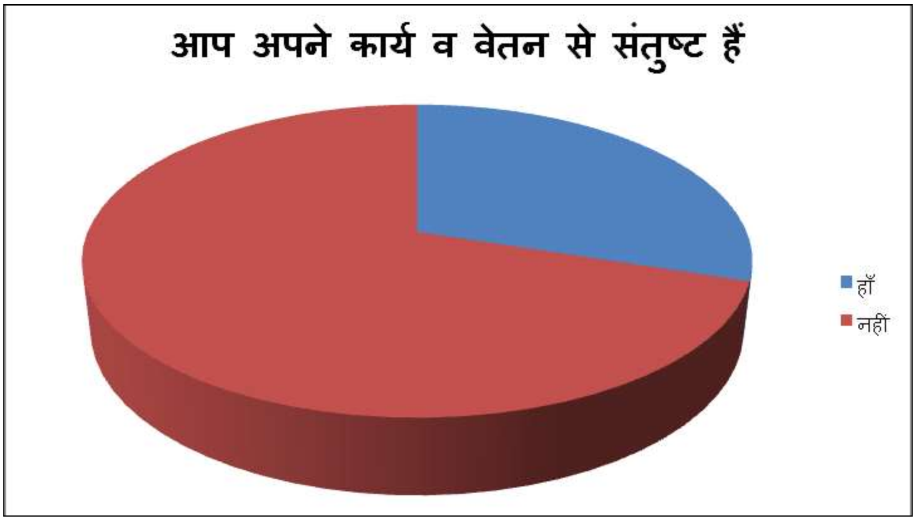

उक्त प्रश्न के उत्तर में प्राप्त तथ्यों से यह स्पष्ट होता है कि 30 प्रतिशत पुलिसकर्मी ही पाने वाले वेतन और भत्ते से संतुष्ट हैं, जबकि 70 प्रतिशत उत्तरदाता अपने कार्य की तुलना में पाए जाने वाले वेतन एवं भत्ते से असंतुष्ट हैं। असंतुष्ट उत्तरदाताओं ने प्राप्त परिलब्धियों से आवश्यकता पूर्ति करने में असमर्थता बताते हुए कहा कि बढ़ती मंहगाई के कारण संतानों की शिक्षा, गृहस्थी की दैनिक आवश्यकताओं की पूर्ति में परिवार

को अनेक कठिनाइयों का सामना करना पड़ता है। उपरोक्त विश्लेषण से उपकल्पना क्रमांक 01 सिद्ध होती है। राष्ट्रीय पुलिस अकादमी के द्वारा किये गए सर्वेक्षण में भी यह पाया गया है कि पुलिस कर्मियों को निम्नलिखित समस्याओं से जूझना पड़ रहा है-

1. लम्बी कार्यावधि।
2. कार्यावधि के दौरान अत्यधिक मानसिक तनाव।
3. कार्य स्थलों पर आवश्यक सुविधाओं की कमी।
4. पारिवारिक दायित्व निर्वहन के लिए समयाभाव।
5. पदोन्नति की अल्प संभावनाएँ।

बचत की स्थिति- उत्तरदाताओं से जब बचत के संबंध में प्रश्न पूछा गया तो स्थिति निम्नवत सामने आई।

तालिका 03

क्या आप अपने वेतन से बचत कर पाते हैं?

राय	संख्या	प्रतिशत
हाँ	12	4 प्रतिशत
नहीं	288	96 प्रतिशत
योग	300	100 प्रतिशत

उक्त स्थिति को नीचे पाई डायग्राम में प्रस्तुत किया जा रहा है-

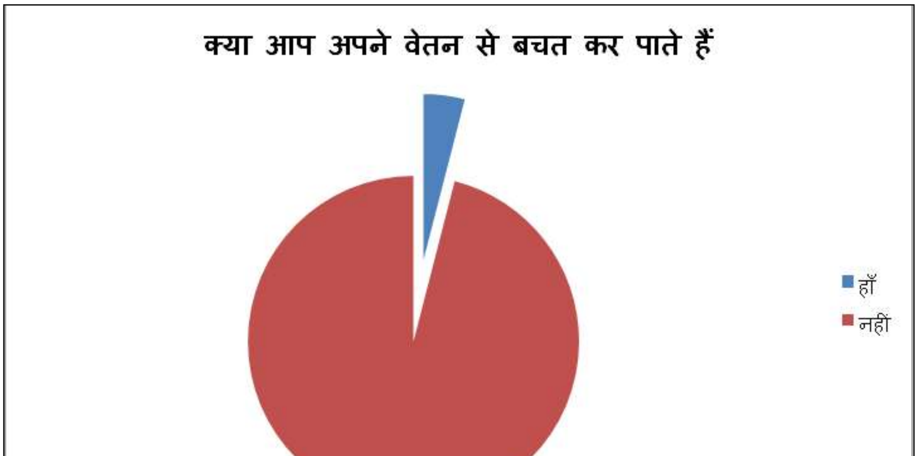

क्या आप अपने वेतन से बचत कर पाते हैं। प्रस्तुत प्रश्न के जवाब में केवल 04 प्रतिशत पुलिसकर्मियों ने यह माना कि वे वेतन से कुछ बचत कर पाते हैं, जबकि 96 प्रतिशत पुलिसकर्मियों द्वारा बचत के संबंध में नहीं में उत्तर प्राप्त हुआ जो प्रशासन के समक्ष प्रस्तुत कर विचाराधीन होना आवश्यक है।

कार्यावधि की स्थिति- तमिलनाडु पुलिस कमीशन 1971 ने पुलिस की स्थिति को निम्नलिखित शब्दों में स्पष्ट किया है, सभी पुलिस कर्मचारी कार्य की अधिकता के दबाव में हैं। उनके कार्य के घण्टे बहुत लम्बे और अनियमित हैं, उन्हें साप्ताहिक अवकाश प्रायः

नहीं मिल पाता और सार्वजनिक छुट्टियाँ और त्योहारों में प्रायः उन्हे अतिरिक्त घण्टों की भी ड्यूटी देनी पड़ती है तथा सामान्यतः उन्हे अपने परिवार के साथ त्योहार मनाने का अवसर ड्यूटी के कारण नहीं मिलता है। वास्तविक रूप में उपर्युक्त सर्वेक्षण पुलिस अधिकारियों की वास्तविक स्थिति का मूल्यांकन करने के लिए पर्याप्त हैं परन्तु इतने वर्षों में भी इन स्थितियों में सुधार के लिए अल्प प्रयास एक शोचनीय प्रश्न है कि वस्तुस्थिति के स्पष्ट होने पर भी आवश्यक कदम क्यों नहीं उठाए गए। अन्य प्रशासनिक समस्याओं के अतिरिक्त वर्तमान वेतनमान और भत्ते से संबंधित समस्या भी पुलिस वर्ग के लिए गंभीर है। ऐसा नहीं कहा जा सकता कि इस वर्ग के लिए प्रशासन ने वेतनमान में वृद्धि नहीं की है परन्तु उनकी कठिन ड्यूटी और मंहगाई को यदि ध्यान में रखा जाय तो यह वेतनमान व भत्ते अपर्याप्त हैं। वेतनमान और भत्तों से असंतुष्टि भी पुलिस वर्ग में अनुशासनहीनता की समस्या का एक महत्वपूर्ण कारण है।

यह स्वाभाविक ही है कि यदि व्यक्ति दिन में चौबीस घण्टे अपनी ड्यूटी के लिए तत्पर है तो वह इसके लिए परिवार की सुख-सुविधाएँ और अच्छे वेतनमान की आकांक्षा रखेगा, जो उसके मनोबल और उत्साह को बनाए रखने के लिए बहुत आवश्यक है परन्तु यदि व्यक्ति अपनी ड्यूटी भी कर रहा है, अपने परिवार से दूर है और परिवार और बच्चों के लिए उसे पर्याप्त धन की भी कमी है तो वह निश्चित ही उन आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए कोई अन्य कदम उठाएगा ही। पर्याप्त वेतनमान में कमी भी पुलिस वर्ग में असंतोष और असुरक्षा की भावना विकसित करती है।

तालिका क्रमांक 04

क्या आप अपनी कार्यावधि से संतुष्ट हैं?

राय	संख्या	प्रतिशत
हाँ	168	56 प्रतिशत
नहीं	132	44 प्रतिशत
योग	300	100 प्रतिशत

उक्त स्थिति को नीचे पाई डायग्राम में प्रस्तुत किया जा रहा है-

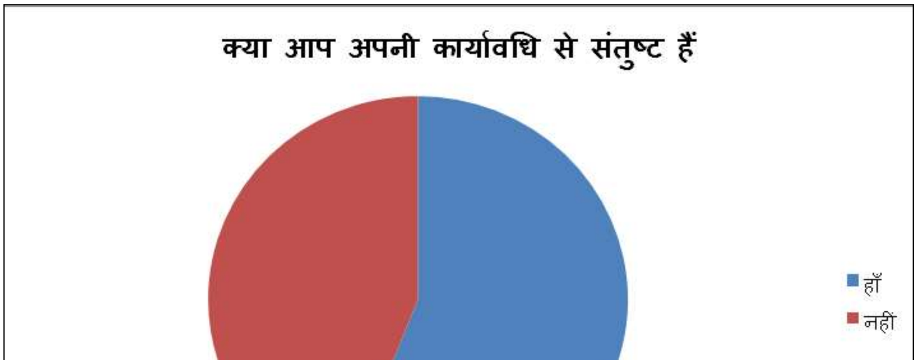

कार्यावधि से संतुष्टि के प्रश्न में 56 प्रतिशत पुलिसकर्मी संतुष्ट हैं, किन्तु 44 प्रतिशत पुलिसकर्मी असंतुष्ट हैं। उनके अनुसार कार्यावधि का निर्धारण होना अत्यंत आवश्यक है। तथ्यों के उपरोक्त विश्लेषण से उपकल्पना क्रमांक 02 आंशिक रूप से सिद्ध पाई गई।

अवकाश की स्थिति- सभी संगठनों में केवल पुलिस संगठन ही ऐसा है जहाँ कार्यालयीन अवधि सुनिश्चित नहीं की गई है। प्रशासन की ओर से उन्हे सार्वजनिक अवकाश की सुविधा भी प्राप्त नहीं है। अत्यंत आवश्यक कार्य की स्थिति में भी वह अपने उच्चाधिकारियों की सहमति के बिना अवकाश प्राप्त नहीं कर सकता। इस स्थिति को न्याय संगत तो नहीं का जा सकता। ऐसी स्थिति में पुलिसकर्मी की उदासीनताए लापरवाही, अपने कार्य प्रति जागरुक न होना आदि लक्षण अस्वाभाविक नहीं कहे जा सकते और एक पुलिसकर्मी की मनोवृत्ति व मानसिकता को परिवर्तित करने में यह कारक अपनी महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। यद्यपि पुलिस रेग्युलेशन के पैरा 183 के अनुसार एक वर्ष में पुलिस कर्मचारी को 16 दिनों का आकस्मिक अवकाश प्राप्त होता है।5 इसके अतिरिक्त 15 दिनों का विशेष आकस्मिक अवकाश भी शासन द्वारा प्रदान किया जा सकता है क्योंकि शासन के अन्य कर्मचारियों के समान अन्य सामान्य अवकाशों में अवकाश प्राप्त नहीं कर पाते और त्योहारों तथा अन्य सामाजिक उत्सवों में इनकी डयूटी की कार्यावधि बढ़ जाती है। पुलिस रेग्यूलेशन के पैरा 186 के अनुसार सामान्य और खुले मौसम में स्वीकृत बल के पांच प्रतिशत एवं बरसात के मौसम में स्वीकृत बल के दस प्रतिशत व्यक्तियों को ही अवकाश प्राप्त हो सकता है जिसके लिए निर्धारण प्रपत्र में पहले से आवेदन दिया जाता है। पैरा 188 में निर्देशित किया गया है कि अर्जित अवकाश कुल मिलाकर 240 दिनों तक खाते में एकत्रित हो सकता है किन्तु किसी भी एक समय में 120 दिनों से अधिक अवधि तक अर्जित अवकाश प्रदान नहीं किया जा सकता। पैरा 189 में यह प्रावधान किया गया है कि एक वर्ष में 20 दिनों तक के लिए आधे वेतन पर अवकाश अर्जित किया जा सकता है। ऐसे अवकाश के लिए कोई सीमा नहीं है यदि उसे चिकित्सा प्रमाण पत्र पर या निजी कार्यों पर एक समय में लिया जाता है। पैरा 191 के अनुसार अवकाश समाप्ति के पश्चात् भी पुलिस अधिकारी की अनुपस्थिति में उस अवधि का वेतन उस अधिकारी को प्राप्त नहीं होता। पुलिस रेग्यूलेशन के पैरा 193 के अनुसार अवकाश पर रवाना होने से पहले पुलिस अधिकारी द्वारा छुट्टी जाने की तारीख, वापस आने की तारीख, अवकाश स्थल की जानकारी देना आवश्यक होता है और उस जानकारी प्रपत्र पर अधीक्षक, रक्षित निरीक्षक या थाना प्रभारी के हस्ताक्षर होने चाहिये।

प्रशासन द्वारा प्रदान किये गए अवकाशों में पुलिस वर्ग को अन्य संस्था वर्ग की अपेक्षाकृत अवकाश संबंधी सुविधा कम है जिसके कारण उन्हें अपने परिवारजनों, ईष्ट मित्रों, सगे संबंधियों से दूर चाहे वह कोई त्योहार हो या कोई भी मौसम अपनी डयूटी निभानी पड़ती है जो उनके मानवाधिकार का हनन कहा जा सकता है। पुलिस कर्मचारी भी इंसान हैं वे भी समाज में रहते हैं तो क्या अन्य सामाजिक प्राणियों की तरह उन्हें भी सामान्य जीवन यापन का अधिकार नहीं है, यह एक गंभीर प्रश्न है? जिसके हल के लिए

प्रशासन और समाज को गंभीरता से सोचना चाहिये। कठोर ड्यूटी करने के बाद भी समाज से मिलने वाला अविश्वास उनके मनोबल को तोड़ने में महत्वपूर्ण भूमिका अदा करता है।

तालिका क्रमांक 05

क्या आपको अवकाश संबधी संतुष्टि है?

राय	संख्या	प्रतिशत
हाँ	158	52 प्रतिशत
नहीं	142	48 प्रतिशत
योग	300	100 प्रतिशत

अवकाश प्राप्ति के संबंध में संतुष्टि के प्रश्न में 52 प्रतिशत पुलिस कर्मी असंतुष्ट हैं जबकि 48 प्रतिशत संतुष्ट हैं। पुलिसकर्मियों के अनुसार उन्हें अवकाश प्राप्ति कम से कम इतनी तो हो कि वे अपनी अन्य कर्तव्यों को पूरा करने के साथ अपने मानसिक, शारीरिक स्वास्थ्य पर भी ध्यान दे सकें। उपरोक्त विश्लेषण से उपकल्पना क्रमांक 03 आंशिक रूप से सिद्ध होती है।

पदोन्नति की स्थिति- किसी संगठन में किसी कर्मचारी का पद बदलकर उसे उससे ऊपर वाला पद देना पदोन्नति कहलाता है। किसी भी संगठन में कार्यरत कार्मिकों की कार्यकुशलता उनकी संतुष्टि तथा मनोबल के स्तर से भी प्रभावित होती है। पदोन्नति आधुनिक कार्मिक प्रशासन का महत्वपूर्ण आयाम है। पदोन्नति पद स्तर सम्मान में वृद्धि करने या योग्यता के आधार पर आगे बढने से सम्बद्ध है। उत्तर दाताओं से इस संबंध में मैं जानने का प्रयास किया गया कि क्या उन्हें पदोन्नति के पर्याप्त अवसर उपलब्ध है। उत्तरदातों से प्राप्त तथ्यों को सारणी में प्रस्तुत किया जा रहा है।

तालिका क्रमांक 06

क्या आपको पदोन्नति के पर्याप्त अवसर प्राप्त होते हैं?

राय	संख्या	प्रतिशत
हाँ	26	09 प्रतिशत
नहीं	274	91 प्रतिशत
योग	300	100 प्रतिशत

पदोन्नति के अवसर प्राप्ति के प्रश्न से प्राप्त उत्तर चौंकाने वाले प्राप्त हुए। पुलिसकर्मियों में 92 प्रतिशत ने इसका उत्तर नहीं में दिया जबकि 09 प्रतिशत पुलिसकर्मी ही पदोन्नति के अवसर प्राप्ति से संतुष्ट हुए। आरक्षण और न्यायालीन प्रकरणों की स्थिति के कारण भी पुलिस कर्मियों को पदोन्नति प्राप्त नहीं हो पा रही है। यदि सही समय में पदोन्नति प्राप्त हो तो पुलिसकर्मियों का मनोबल बढ़ेगा और वह अपने कार्य को बेहतर तरीके से कर सकेंगे।

परिवार की आवश्यकता एवं वेतन- उत्तरदाताओं से जब यह प्रश्न किया गया की क्या उन्हें मिलने वाली वेतन से परिवार की आवश्यकताओं की पूर्ति हो जाती है। प्राप्त तथ्यों को सारणी में प्रस्तुत किया जा रहा है

तालिका 07

क्या उन्हें मिलने वाली वेतन से परिवार की आवश्यकताओं की पूर्ति हो जाती है?

राय	संख्या	प्रतिशत
हाँ	58	19 प्रतिशत
नहीं	242	81 प्रतिशत
योग	300	100 प्रतिशत

उपर्युक्त प्रश्न में 81 प्रतिशत लोगों द्वारा यह बताया गया कि संबंधित व्यक्ति के वेतन से उनकी आवश्यकताओं की पूर्ति नहीं हो पाती जबकि 19 प्रतिशत लोगों के अनुसार पूर्ति हो जाती है। 81 प्रतिशत लोगों के अनुसार मंहगाई, शिक्षा का बढ़ता स्तर, दैनिक आवश्यकताओं की पूर्ति करने में अनेक समस्याओं का सामना करना पड़ता है। इनके अनुसार महीने के अंत में अनेक आवश्यक कार्यों की पूर्ति भी असंभव हो जाती है।

तकनीकी एवं वैज्ञानिक उपकरणों के अभाव से उत्पन्न समस्यायें- वर्तमान विज्ञान के युग में विज्ञान की अभूतपूर्व प्रगति के साथ-साथ जहाँ एक ओर मानव को अनेक सुविधाएँ प्राप्त हुइं वहीं दूसरी ओर इन्हीं वस्तुओं ने मानव समाज को संघर्षमय स्थिति में भी पहुँचा दिया है। समाज में प्रत्येक क्षेत्र में विकास के साथ ही अपराध जगत ने भी अपने आधुनिकए वैज्ञानिक व तकनीकी स्वरूप को प्राप्त कर लिया है।

प्रत्येक संगठन के सुचारू ढंग से कार्य करने के लिए उसमें वैज्ञानिक व नवीनतम तकनीकी उपकरणों का समावेश अत्यंन्त आवश्यक होता है। यद्यपि स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात् से पुलिस में आधुनिकीकरण वैज्ञानिक व तकनीकी उपकरणों से सुसज्जा पर योजनाएँ बनाई गई हैं और उनका क्रियान्वयन भी हुआ है किन्तु वास्तव में भारतीय पुलिस संगठन में आज भी वैज्ञानिक व तकनीकी आवश्यकताओं की पूर्ति पर्याप्त मात्रा में नहीं हो पाई है और इसी साधनहीनता के कारण भारत में अपराधियों के हौसलों में वृद्धि हुई है। पुलिस की अपेक्षा अपराधी अधिक साधन संपन्न हैं, जिनके कारण उनके द्वारा किये जाने वाले अपराध भी कुशाग्र बुद्धि से सुनियोजित ढंग से किये जा रहे हैं साथ ही साक्ष्य मिटाने के भी पर्याप्त साधन अपराधियों को उपलब्ध हैं। विकसित संचार माध्यम ने अपराध जगत को और अधिक ताकतवर बना दिया है। इन अपराधियों व असामाजिक तत्वों की अपेक्षाकृत पुलिस की साधनहीनता समाज के लिए अत्यंत चिंताजनक व शोचनीय है। उक्त संबंध में उत्तरदाताओं से जब प्रश्न किया गया तो निम्नलिखित तथ्य दृष्टिगोचर हुए।

तालिका क्रमांक 08

क्या वर्तमान परिप्रेक्ष्य में आपके विभाग में तकनीकी एवं वैज्ञानिक उपकरण उपलब्ध हैं?

राय	संख्या	प्रतिशत
हाँ	232	77 प्रतिशत
नहीं	68	23 प्रतिशत
योग	300	100 प्रतिशत

तकनीकी एवं वैज्ञानिक उपकरणों की उपलब्धता के संबंध में 77 प्रतिशत कर्मचारियों ने हाँ में उत्तर दिया और 23 प्रतिशत लोगों ने नहीं में।

तालिका 09
क्या इन उपकरणों की कमी या अभाव आपके कार्य कौशल को प्रभावित करता है?

राय	संख्या	प्रतिशत
हाँ	84	28 प्रतिशत
नहीं	216	72 प्रतिशत
योग	300	100 प्रतिशत

तकनीकी एवं वैज्ञानिक उपकरणों की कमी या अभाव पुलिस कर्मचारियों की कार्य कुशलता को प्रभावित करता है। इस संबंध में पुलिस कर्मचारियों में 28 प्रतिशत पुलिसकर्मी सहमत हैं जबकि 72 प्रतिशत पुलिसकर्मियों के अनुसार इन उपकरणों का उनके कार्य कौशल पर कोई प्रभाव नहीं पड़ता।

निष्कर्ष- प्रस्तुत शोध पत्र में अध्ययन के दौरान यह पाया गया कि अधिकांश पुलिसकर्मियों की समस्याएं वास्तविक है और इनका निदान करना आवश्यक है। शोध के निष्कर्ष इस प्रकार रहे हैं-

- 30 प्रतिशत पुलिसकर्मी ही पाने वाले वेतन और भत्ते से संतुष्ट हैं, जबकि 70 प्रतिशत उत्तरदाता अपने कार्य की तुलना में पाए जाने वाले वेतन एवं भत्ते से असंतुष्ट हैं।
- 04 प्रतिशत पुलिसकर्मियों ने यह माना कि वे वेतन से कुछ बचत कर पाते हैं, जबकि 96 प्रतिशत पुलिसकर्मियों द्वारा बचत के संबंध में नहीं में उत्तर प्राप्त हुआ जो प्रशासन के समक्ष प्रस्तुत कर विचाराधीन होना आवश्यक है।
- कार्यावधि से संतुष्टि के प्रश्न में 56 प्रतिशत पुलिसकर्मी संतुष्ट हैं, किन्तु 44 प्रतिशत पुलिसकर्मी असंतुष्ट हैं।
- अवकाश प्राप्ति के संबंध में संतुष्टि के प्रश्न में 52 प्रतिशत पुलिस कर्मी असंतुष्ट हैं जबकि 48 प्रतिशत संतुष्ट हैं।
- पदोन्नति के अवसर प्राप्ति के प्रश्न से प्राप्त उत्तर चौंकाने वाले प्राप्त हुए। पुलिसकर्मियों में 92 प्रतिशत ने इसका उत्तर नहीं में दिया जबकि 09 प्रतिशत पुलिसकर्मी ही पदोन्नति के अवसर प्राप्ति से संतुष्ट हुए।
- 81 प्रतिशत लोगों द्वारा यह बताया गया कि संबंधित व्यक्ति के वेतन से उनकी आवश्यकताओं की पूर्ति नहीं हो पाती जबकि 19 प्रतिशत लोगों के अनुसार पूर्ति हो जाती है।
- तकनीकी एवं वैज्ञानिक उपकरणों की उपलब्धता के संबंध में 77 प्रतिशत कर्मचारियों ने हाँ में उत्तर दिया और 23 प्रतिशत लोगों ने नहीं में।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची-

1. शर्मा रामकृष्ण दत्त, शर्मा सविता-भारत में मानवाधिकार संरक्षण एवं पुलिस, पृ. 170, पुलिस अनुसंधान एवं विकास ब्यूरो नई दिल्ली, 2003
2. भारत का संविधान, विधि एवं विधायी विभाग, नई दिल्ली, 1993

3. स्वामी, डॉ. मीनाक्षी-सामाजिक चेतना एवं विकास के परिप्रेक्ष्य में पुलिस की भूमिका का उद्भव, पुलिस अनुसंधान एवं विकास ब्यूरो, नई दिल्ली, 1993

4. पुलिस संगठनों के आंकड़े 1 जनवरी 2019 तक पुलिस अनुसंधान एवं विकास ब्यूरो नई दिल्ली

5. डॉ. एस. अखिलेश- संगठन और प्रशासन, पृ. 155, 156, गायत्री पब्लिकेशन, रीवा, 2017-18

UGC Journal No. (Old) 2138
Peer-Reviewed Research Journal
Impact Factor 4.875, ISSN 0975-4083
Vol.- 24, Hindi Edition, Year-12, Oct. 2022- March 2023

घरेलू हिंसा : एक समाजशास्त्रीय अध्ययन (मथुरा जिले पर आधारित)

•अनिता सोनी
•• ब्रजेश कुमार सिंह

सारांश- भारतीय समाज में अनेक प्रकार की समस्याएं पाई जाती है जिनमें महिलाओं के प्रति हिंसात्मक व्यवहार एक प्रमुख समस्या है, जिससे न केवल पीड़ित महिला प्रभावित होती है, बल्कि उसका पूरा परिवार भी प्रभावित होता है। परिवार में किसी पुरुष सदस्य के द्वारा किसी महिला के साथ मारपीट, गाली-गलौच या अन्य हिंसात्मक व्यवहार किया जाता हो तो उसे पारिवारिक अथवा घरेलू हिंसा कहते हैं। पारिवारिक जीवन पूरी तरह से सगे सम्बन्धी के साथ जटिल रूप से अंतर सम्बन्धित होता है। महिला को जहां सबसे ज्यादा सामाजिक सुरक्षा परिवार एवं नातेदारों के मध्य मिलती है, वहीं वर्तमान सामाजिक परिवेश में यह भी कटु सत्य है कि सबसे ज्यादा मानसिक, आर्थिक, सामाजिक एवं शारिरिक शोषण व हिंसा महिलाओं के प्रति परिवार एवं नातेदारों के द्वारा ही की जाती है, जो कि ज्यादा खतरनाक हैं क्योकि पारिवारिक लोक लाज के कारण महिलाएं अपने प्रति अपराध के खिलाफ मुखर आवाज नहीं उठा पाती। वर्तमान समय में सरकार ने घरेलू हिंसा से बचाव के लिए महिलाओं को अनेक कानूनी उपचार उपलब्ध कराये हैं, जिनमें से घरेलू हिंसा से महिला संरक्षण अधिनियम 2005 प्रमुख है, फिर भी कोई ठोस प्रभाव परिलिक्षित नहीं दिख रहा। प्रस्तुत शोध पत्र के माध्यम से घरेलू हिंसा के कारणों, बच्चों, परिवार व समाज पर पड़ने वाले प्रभाव तथा समस्या समाधान के उपाय तलाशने का प्रयास किया गया है।

मुख्य शब्द - महिला, परिवार, नातेदारी, घरेलू हिंसा, अपराध

प्रस्तावना- परिवार समाज की महत्वपूर्ण संस्थाओं में से एक है और महिला परिवार रूपी गाड़ी का एक पहिया है तो दूसरा पहिया पुरूष को माना जाता है, जिसमें दोनों का संतुलन गृहस्थी की गाड़ी चलाने के लिए अत्यन्त आवश्यक है। परन्तु पुरूष प्रधान सोच या व्यवस्था ने महिलाओंको गृहस्थी की चक्की में पिसने वाला पहिया बनाकर स्वयं सर्वेसर्वा बन बैठा। परिवार व नातेदारों द्वारा महिलाओं के प्रति हिंसा आज से नहीं बल्कि

• शोध छात्रा, समाजशास्त्र, महात्मा गांधी विद्यापीठ, वाराणसी
•• प्राध्यापक, समाजशास्त्र, महात्मा गांधी विद्यापीठ, वाराणसी

प्राचीन समय से ही चला आ रहा है। महाभारत काल में परिवार के ही सदस्य दु:शासन द्वारा द्रोपदी का चीर हरण कर निर्वस्त्र करने की चेष्टा की गयी थी। उस समय सभा में उपस्थित सभी पारिवारिक जनो व नातेदारों द्वारा मौन धारण कर लिया गया, जैसा आमतौर पर परिवारों में होता है। जब एक महिला परिवार के किसी सदस्य द्वारा प्रताड़ित की जाती है तो परिवार के अन्य सदस्यों व स्वयं महिला के द्वारा विरोध न करने पर अपराध को बढ़ावा मिलता है। महिला पर अत्याचार करने वाले उसके अपने परिवारीजन पुत्र, पति, पिता या सगे सम्बन्धी होतें है, इसलिए वह चुपचाप अपने दुख दर्द को सह लेती है क्योंकि वह अपने परिवार का बुरा नहीं सोचती। वह अपने परिवार की इज्जत व मान-मर्यादा के लिए भी विरोध नहीं करती। जब महिला अत्याचार से थक जाती है और पानी सर के ऊपर चला जाता है तभी वह मुखर होकर विरोध करती है और परिवार को कटघरे में लाकर खड़ा करती है। ऐसा करने के बाद भी कभी-कभी महिलाएं इस डर से कि वे बेघर हो जायेंगी, उनके बच्चों का भविष्य खराब होगा या नातेदारों द्वारा डराने धमकाने पर अपना केस वापिस ले लेती है और जीवन भर सहती रहती है या कि जीवन लीला समाप्त कर लेती है।

महिलाओं के लिए बने घरेलू हिंसा कानून, 2005- महिलाओं के लिए बने घरेलू हिंसा कानून, 2005 के सख्त होने के बावजूद भी देश में हर तीन महिलाओं में से एक महिला घरेलू हिंसा की शिकार है। पति पर आर्थिक रूप से निर्भर होने के कारण व घरेलू हिंसा के मामलों में अनभिज्ञ होने के कारण अधिकतर घरेलू हिंसा के केस दर्ज ही नहीं कराए जाते। इस हिंसा में वहीं मामले रिपोर्ट होते है, जिनमें हिंसा गंभीर किस्म की होती है। पत्नी के साथ घर में मारपीट, गाली-गलौच, समान रूप से व्यवहार न करना, घरेलू हिंसा है लेकिन अधिकतर गांवों कस्बो के साथ शहरों में भी इसे गम्भीरता से नहीं लिया जाता।

महिलाओं के खिलाफ अपराधों में दण्ड दिए जाने की दर महज 23.7 फीसदी है। वहीं इस तरह के लंबित मामलों का प्रतिशत 91.2 है, इसका कारण विशेष अदालतों की कमी, पुलिस जांच में ढिलाई, गवाहों का मुकर जाना व समाज का नकारात्मक रूख है। यह बात विधि स्पीक्स के सर्वे में सामने आई जिसमें 'एनसीआरबी' और 'नेशनल फैमिली हेल्थ रिपार्ट' को आधार बनाया गया है।

'एनसीआरबी की रिपार्ट के अनुसार साल 2015 में महिलाओं के विरूद्ध हिंसा के 3.29 लाख मामले, साल 2016 में 3.38 लाख मामले, साल 2017 में 3.60 लाख मामले और साल 2020 में 3,71,503 मामले दर्ज किए गए। वहीं साल 2021 में यह आकड़ा बढ़कर 4,28,278 हो गया, जिनमें से अधिकतर यानी 31.8 फीसदी पति या रिश्तेदार द्वारा की गई हिंसा के, 7.40 फीसदी बलात्कार के, 17.66 फीसदी अपहरण के, 20.8 फीसदी महिलाओं को अपमानित करने के इरादे से की गई हिंसा के मामले शामिल हैं। उपरोक्त आंकड़ों व वर्तमान सामाजिक संरचना पर दृष्टिपात करने से यह पता चलता है कि देश में महिलाओं के खिलाफ घरेलू हिंसा के मामलों में बढ़ोत्तरी स्पष्ट नजर आ रही है।

अध्ययन की समस्या एवं महत्व- घरेलू हिंसा दुनिया के लगभग हर समाज में मौजूद है। पीड़िता के खिलाफ हमलावर द्वारा अपनाई जाने वाली विभिन्न प्रकार की

गतिविधियों में शारीरिक शोषण, भावनात्मक, शोषण, मनोवैज्ञानिक दुर्व्यवहार या आवश्यता की वस्तुओं से वंचित रखना, आर्थिक शोषण, गाली-गलौच, ताना मारना आदि शामिल है। घरेलू हिंसा केवल विकासशील या अल्प विकसशील देशों की समस्या नहीं है बल्कि यह विकसित देशों में भी बहुत प्रचलित समस्या रही है।बदलते परिवेश में महिलाओं के खिलाफ होने वाले अपराधों की संख्या में भी दिन-प्रतिदिन वृद्धि हो रही है,जिनमें घरेलू हिंसा के मामले सर्वाधिक 23 प्रतिशत हैं।

तेजी से हो रहे सामाजिक परिवर्तन के कारण महिलाओं के साथ हिंसा केवल घर के बाहर ही नहीं बल्कि पारिवारिक सदस्यों, नातेदारों के द्वारा भी बढ़ती जा रही है। भारत जैसे विकासशील देश के लिए महिलाओं के प्रति अपराध का अध्ययन और भी अधिक महत्वपूर्ण है, क्योंकि अधिकांश महिलाओं को उनकी सुरक्षा हेतु बनाये गए संवैधानिक प्राविधानों की जानकारी ही नहीं है, साथ ही उत्पीड़न करने वालों के मन में कानून का डर भी खत्म होता जा रहा है और महिलाओं के प्रति अपराध में वृद्धि होती जा रही है। सम्बन्धित आंकड़ों और तथ्यों को देखते हुए इस विषय पर शोध कार्य की अत्यधिक आवश्यकता प्रतीत हुई। अत: महिलाओं के प्रति घरेलू हिंसा को अध्ययन की समस्या के रूप में चयन किया गया, जिससे महिलाओं के विरूद्ध घरेलू हिंसा के कारणों का पता लगाया जा सके तथा इनके निवारण के समुचित प्रयास किये जा सके।

परिवार की परिभाषा में संस्कृति आधारित भिन्नताएँ हैं। कुछ संस्कृति में इसके तहत पति-पत्नी बच्चे और अन्य नजदीकी नातेदार शामिल किये जाते हैं तो कुछ में केवल पति-पत्नी और बच्चे। लेकिन सबसे सामान्य बात यह है कि इसके सदस्य वैवाहिक और रक्त-संबंधों के आधार पर एकीकृत होते हैं और एक ही घर में रहते हैं। परिवार नातेदारी के सिद्धान्तों पर आधारित होता है जिसके सदस्य आमतौर पर एक ही समान निवास साझा करते हैं। वे एक घर में रहते हैं, इस आवासीय ईकाई को गृहस्थी कहते हैं। घर के सदस्य परस्पर सम्बन्धों में जुड़े होते हैं जहाँ महिलाओं को घर का कामकाज करने और बच्चों का पालन पोषण करना होता है और पुरुष जीविकोपार्जन का काम करते हैं। इनमें पुरुषों पर महिलाओं की आर्थिक निर्भरता बढ़ जाती है और उनमें से कई तलाक के डर से हिंसा और दुर्व्यवहार का शिकार होती हैं। इसके अलावा जब महिलाएँ घर से बाहर काम की तलाश करती हैं तब भी उन पर पारिवारिक जिम्मेदारियों का भी बोझ बना ही रहता है। यानी महिलाओं द्वारा जीविकोपार्जन करने पर भी उनको न्याय नहीं मिलता अर्थात अपराध सहना पड़ता है और स्थिति पूर्ववत बनी रहती है।

पूर्व साहित्य सर्वेक्षण- प्रारम्भिक, अपराधशाास्त्रियों ने महिलाओं के विरूद्ध अपराध के लिए जैविकीय विशेषताओं को जिम्मेदार माना है। इस श्रेणी के अपराध शास्त्रियों में लुई बेमन (1922), काटन (1921), हंटर (1927), राल्फ एस बेने (1943) आदि महत्वपूर्ण है। इन अपराधशास्त्रियों का मानना है कि जैविक संरचनाएं महिलाओं के विरूद्ध अपराध को निर्धारित करती है। फिंकेलहर डेविड तथा गेल्स (1986) ने प्राचीन काल से लेकर अब तक, महिलाओं के विरूद्ध अपराध के लिए समाज में प्रचलित

सांस्कृतिक प्रतिमानों जैसे विवाह और परिवार के नियमों को उत्तरदायी माना है। इनका मानना है कि जब तक विवाह परिवार के नये प्रतिमान नहीं बनाये जाते तब तक महिलाओं के विरूद्ध अपराध अनवरत चलता रहेगा। आर.जे. गेल्स (1985) ने पितृसत्तात्मक उपागम को अपनाते हुए पुरूषों का वर्चस्व प्रभुत्व तथा परिवार पर महिलाओं की अधीनता को महिलाओं के विरूद्ध हिंसा के लिए जिम्मेदार माना है। राम अहूजा (1987) ने समष्टिवादी उपागम का अनुशीलन करते हुए महिलाओं के विरूद्ध अपराध के लिए सामाजिक पृष्ठभूमि, हिंसा का समर्थन, हिंसाग्रस्त महिला के निकट के रिश्तेदार, सहकर्मी व अन्य नातेदारी सम्बन्धियों की अपेक्षाएं, महिला की आर्थिक पृष्ठभूमि तथा उसकी स्वयं की छवि एवं सामाजिक संरचना को जिम्मेदार माना है। गोविन्द केलकर (1991) ने महिलाओं के विरूद्ध हिंसा को द्विमार्गी प्रक्रिया माना है। इनमें शक्ति का अवैधानिक प्रयोग करके किसी महिला को आघात पहुंचाया जाता है। आघात पहुंचाने वाले में प्रभुत्व का भाव अन्तर्निहित होता है तो महिला में बेबसी एवं लाचारी का भाव छिपा रहता है। नैनसी लोंबार्ड (2013) ने अपने पुस्तक में महिलाओं के विरूद्ध घरेलू हिंसा, परिवार में दुर्व्यवहार, यौन हिंसा तथा शोषण का विशद वर्णन किया है। आर. गोयल (2014) ने अपनी पुस्तक में महिलाओं के विरूद्ध अपराध को लेकर न्यायिक प्रतिक्रिया का उल्लेख किया है।

एस. शर्मा (2018) के अनुसार महिलाओं के खिलाफ अपराध में महिलाओं और लड़कियों के खिलाफ कई तरह के हानिकारक शारीरिक, भावनात्मक और यौन व्यवहार शामिल है जो अक्सर परिवार के सदस्यों द्वारा किये जाते है, कई बार अजनबियों द्वारा भी। महिलाओं और बच्चों को सबसे ज्यादा खतरा परिवार के भीतर ही होता है जहाँसुरक्षित होना चाहिए। कई महिलाएँ तो ऐसी होती है जो अपने घर परिवार को छोड़कर किसी करीबी नातेदार के यहाँ आकर रहने लगती है पर यहाँ भी उन्हें हिंसा का सामना करना पड़ जाता है जिस पर भरोसा करके आती है शारीरिक मानसिक शोषण के कारण वे आगे के नतीजों के डर से अपने स्वयं के निर्णय लेने, अपनी राय देने या अपनी और बच्चों की रक्षा करने में असमर्थ पाती है। वीणा चिम्बर (2019) ने अपने अध्ययन में बताया कि पति या परिवार के सदस्यों, नातेदारों महिलाओं पर किए गए शारीरिक और यौन शोषण का गहरा शारीरिक और मानसिक मनोवैज्ञानिक प्रभाव पीडिता को सामान्य जीवन जीने से रोक सकता है। इस तरह के अपराध अक्सर और बहुत व्यापक स्तर पर होते हैं। शिक्षा का निम्न स्तर और सामाजिक आर्थिक पृष्ठभूमि इसका एक महत्वपूर्ण कारक है।

अध्ययन के उद्देश्य

1. महिलाओं के विरूद्ध घरेलू हिंसा के प्रमुख कारणों का पता लगाना।
2. घरेलू हिंसा की शिकार महिला, उसके बच्चों व परिवार के अन्य सदस्यों पर घरेलू हिंसा के प्रभाव का अध्ययन करना।
3. घरेलू हिंसा को कम करने के उपायों का पता लगाना।

शोध प्रश्न

1. घरेलू हिंसा से आहत महिलाओं की आयु क्या है?
2. घरेलू हिंसा से आहत महिलाओं की शिक्षा का स्तर क्या है?
3. पीड़िता और हिंसा करने वाले की उम्र में कैसा सम्बन्ध है?
4. पहली बार हिंसा से पीड़ित महिलाओं द्वारा क्या किसी को सूचना दी गई?
5. महिलाओं के प्रति हिंसा के लिए कौन-कौन से कारक जिम्मेदार हैं?
6. हिंसा करने वाले पति, परिवार के अन्य सदस्यों व नातेदारो की क्या भूमिका है?

अध्ययन क्षेत्र एवं शोध पद्धति- प्रस्तुत अध्ययन क्षेत्र के रूप में मथुरा जिले का चयन किया गया है। मथुरा उत्तर प्रदेश का एक जिला है जो अपने धार्मिकता के लिए प्रसिद्ध है। भगवान श्रीकृष्ण की लीला स्थली और पर्यटन की दृष्टि से भी मथुरा को विशेष स्थान प्राप्त है, जितना इसका धार्मिक महत्व है उतना ही ऐतिहासिक भी है। जहां धर्म है वहां अधर्म भी है। जहां श्री कृष्ण है, वहां कंस भी है। महिलाओं के प्रति अपराध परिवार के सदस्यों द्वारा किया जाए या नातेदारों द्वारा अपराध तो अपराध ही है। महिला सहायता प्रकोष्ठ से प्राप्त आंकड़ों के अनुसार मथुरा में सन् 2018 में 598 महिलाओं के प्रति अपराध सन्, 2019 में 774 मामले, सन् 2020 में 668 मामले पंजीकृत किए गये। इन आकड़ो से ज्ञात होता है कि अपराध एक सार्वभौमिक घटना है। अत: यह क्षेत्र अध्ययन के लिए प्रासंगिक है। इसके अन्तर्गत घरेलू हिंसा से पीड़ित 100 महिलाओं का उद्देश्यपूर्ण निदर्शन द्वारा चयन किया गया है। शोधपत्र मूलत: प्राथमिक तथ्यों पर आधारित है लेकिन द्वितीयक तथ्यों का उपयोग भी प्रसंगवश किया गया है, जिसका स्त्रोत राष्ट्रीय अपराध ब्यूरो से प्राप्त आंकड़े, समाचार पत्र, पत्रिका आदि है। प्राथमिक तथ्यों का संग्रह साक्षात्कार अनुसूची के द्वारा किया गया है।

तालिका क्रमांक 01
घरेलू हिंसा की शिकार महिलाओं की आयु

आयु	आवृति	प्रतिशत
18 से 27 वर्ष	54	54.00
28 से 37 वर्ष	15	15.00
38 से 47 वर्ष	21	21.00
48 से अधिक	10	10.00
कुल	100	100.00

उपरोक्त तालिका से ज्ञात होता है कि कुल उत्तरदाताओं में 54 प्रतिशत महिला 18 से 27 वर्ष की, 14 प्रतिशत महिला 28 से 37 वर्ष की, 21 प्रतिशत महिला 38 से 47 वर्ष की व 10 प्रतिशत महिलाएं48 से अधिक की हैं। आकड़ों से यह ज्ञात होता है कि घरेलू हिंसा की शिकार अधिकांश महिलाएं कम उम्र की हैं।

तालिका क्रमांक 02
शैक्षणिक स्तर

शैक्षणिक स्तर	आवृति	प्रतिशत
अशिक्षित	16	13.0
प्राथमिक	8	8.0
माध्यमिक	16	16.0
हाईस्कूल	11	11.0
इण्टरमीडिएट	19	19.0
उच्च शिक्षा	20	20.0
व्यावसायिक शिक्षा	13	13.0
कुल	100	100.00

प्रस्तुत तालिका क्रमांक 02 से यह ज्ञात होता है कि 13 प्रतिशत उत्तरदाता अशिक्षित, 8 प्रतिशत उत्तरदाताप्राथमिक, 16 प्रतिशत उत्तरदाता माध्यमिक, 11 प्रतिशत उत्तरदाता हाईस्कूल, 19 प्रतिशत उत्तरदाता इण्टरमीडिएट, 20 प्रतिशत उत्तरदाता उच्च शिक्षा, 13 प्रतिशत उत्तरदाता व्यावसायिक शिक्षा प्राप्त है। इन आंकड़ों से यह ज्ञात होता है कि हर शैक्षणिकस्तर की महिलाएंघरेलू हिंसा का सामना करती है।

तालिका क्रमांक 03
घरेलू हिंसा करने वाले और आपकी उम्र में कैसा सम्बन्ध रहा है?

	आवृति	प्रतिशत
समकक्ष	40	40.0
अधिक उम्र का व्यक्ति	50	50.0
कम उम्र का व्यक्ति	10	10.0
कुल	100	100.00

उपरोक्त तालिका क्रमांक 03 से यह ज्ञात होता है कि 40 प्रतिशत हिंसा करने वाले व्यक्ति पीडिता के समकक्ष, 50 प्रतिशत पीडिता से अधिक उम्र के व्यक्ति, तथा 10 प्रतिशत पीड़िता से कम उम्र के व्यक्ति भी है। उत्पीड़न करने वालों में सबसे ज्यादा पीड़िता से अधिक उम्र के हैं।

तालिका क्रमांक 04
आपके प्रति पहली बार घरेलू हिंसा की गई तो आप ने किसी को सूचना दी ?

	आवृति	प्रतिशत
हाँ	28	28.0
नहीं	72	72.0
कुल	100	100.00

उपरोक्त तालिका क्रमांक 04 से यह ज्ञान होता है कि घरेलू हिंसा से पीड़ित 28

प्रतिशत महिलाओं ने अपने पर पहली बार हिंसा होने की सूचना परिवार के अन्य व्यक्तियों को या पुलिस को दी तथा 72 प्रतिशत महिलाओं का कहना है कि परिवार की मान मर्यादा के लिए तथा स्वयं को बेघर होने का डर, परिवार पर आर्थिक रूप से निर्भर होने के कारण, बहुत कुछ सोचकर किसी को सूचना नही दी।

तालिका क्रमांक 05

महिलाओं के प्रति घरेलू हिंसा के लिए कौन सा कारक जिम्मेदार है?

	आवृति	प्रतिशत
पितृसत्तात्मक व्यवस्था	20	20.0
महिला की सहनशीलता	29	29.0
पूर्ण रूप से आर्थिक निर्भरता	11	11.0
संरचनात्मक असमानता	40	40.0
कुल	100	100.00

उपरोक्त तालिका क्रमांक 05 से यह ज्ञात होता है कि 20 प्रतिशत महिलाएं पितृसत्तात्मक व्यवस्था को, 29 प्रतिशत महिला के सहनशीलता को, 11 प्रतिशत पूर्ण रूप से आर्थिक निर्भरता को तथा 40 प्रतिशत महिलाएं संरचनात्मक असामनता को महिलाओं ने घरेलू हिंसाके लिए जिम्मेदार माना। घरेलू हिंसा के अन्य कारणों में महिला का शारीरिक व भावनात्मक रूप से कमजोर होना, प्राप्त दहेज से असंतुष्ट, बहस करना, मसलन यौन सम्बन्ध बनाने से इनकार करना, बच्चों की उपेक्षा करना, ससुराल पक्ष के लोगों की उचित देखभाल न करना, विदाहेतर संबंधों में लिप्त रहना, बिना बताए घर से बाहर जाना, स्वादिष्ट खाना न बनाना आदि शामिल हैं।

तालिका क्रमांक 06

घरेलू हिंसा करने वाले व्यक्ति के प्रति अन्य नातेदारों की क्या प्रतिक्रिया थी?

	आवृति	प्रतिशत
हिंसा करने वाले का समर्थन	32	32.0
हिंसा करने वाले का विरोध	22	22.0
पीड़िता का दोषारोपण	46	46.0
कुल	100	100.00

उपरोक्त तालिका क्रमांक 06 से यह पता चलता है कि जब पीड़ित महिला पर घरेलू हिंसा होता है तो परिवार के सदस्य व नातेदार का क्या व्यवहार होता है। 32 प्रतिशत महिलाएं कहती है कि घरेलू हिंसा करने वाले का ही समर्थन किया जाता है, 22 प्रतिशत पीड़िता का कहना है कि परिवार व नातेदारों द्वारा घरेलू हिंसा करने वाले का विरोधकिया जाता है तथा 46 प्रतिशत पीड़ित महिलाओं द्वारा बताया गया कि परिवार व नातेदारों द्वारा उन्हीं पर ही दोषारोपण किया गया तथा हिंसा के लिए महिलाओं को ही जिम्मेदार माना गया।

तालिका क्रमांक 07
पीड़िता पर पड़ने वाले दैहिक प्रभाव

	आवृति	प्रतिशत
आंतरिक शारीरिक चोट	29	29.0
शारीरिक अंग-भंग	10	10.0
शारीरिक दुर्बलता	33	33.0
कोई नहीं	28	28.0
कुल	100	100.0

तालिका क्रमांक 08
पीड़िता पर पड़ने वाले मानसिक प्रभाव

	आवृति	प्रतिशत
असहाय मानसिक पीड़ा व तनाव	41	41.0
नैरश्य कुंठा	24	24.0
नकारात्मक अधरपता	25	25.0
विद्रोह एवं आक्रामकता	10	10.0
कुल	100	100.00

तालिका क्रमांक 09
पीड़िता पर पड़ने वाले सामाजिक प्रभाव

	आवृति	प्रतिशत
सामाजिक अलगाव	9	9.0
सामाजिक उपेक्षा	17	17.0
सामाजिक अविश्वास	33	33.0
खराब आत्म छवि	41	41.0
कुल	100	100.00

घरेलू हिंसा के प्रभाव- घरेलू हिंसा की शिकार महिला में हमेशा डर बना रहता है, जिससे उसकी सोच पर नकारात्मक प्रभाव पड़ता है। शारीरिक, मानसिक व सामाजिक प्रभाव भी पड़ता है। तालिका 7, 8 व 9 कभी कभी हिंसा की शिकार महिला अपनी मानसिक संतुलन खो देती है और आत्महत्या तक कर बैठती है। घरेलू हिंसा का सबसे ज्यादा प्रभाव बच्चों पर पड़ता है वे आक्रामक व हिंसात्मक व्यवहार अपने पिता से सीखते हैं तथा उनके प्रति नकारात्मक सोच भी बन जाती है।

निष्कर्ष- आज भी भारतीय समाज में परिवार व नातेदारों की महत्वपूर्ण भूमिका है। बहुधा संकट के समय नातेदारों द्वारा मदद के उदाहरण देखने को मिलते हैं। अधिकतर भारतीय

समाजों में सामाजिक और सांस्कृतिक जीवन में मदद के रूप में नातेदारों के अच्छे परिणाम देखने को मिलते हैं। मानव समाजों में जिस प्रकार जाति-वर्ग, समूह और परिवार व आस-पड़ोस का महत्व है, उतना ही महत्व व भूमिका परिवार व नातेदारी का भी है। साथ ही नातेदारों द्वारा महिला के पारिवारिक जीवन में अनेक प्रकार की समस्याएं भी खड़ी की जाती है। जैसे-दहेज के लिए बोलना, लड़की होने पर ताने मारना, घर में अधिक कार्य कराना, गाली-गलौच, मानसिक व शारीरिक उत्पीड़न। आंकड़ो से यह ज्ञात होता है कि सभी आयु वर्ग, व शिक्षित-अशिक्षित महिलाएं परिवार एवं नातेदारों द्वारा ही घरेलू हिंसा झेलती है। कुछ कहने की हिम्मत जुटा पाती है व कुछ परिवार व बच्चों के लिए चुप रहती है और जुल्म सहती रहती हैं। पितृ सत्तात्मक व्यवस्था, अशिक्षा, आर्थिक रूप से दूसरों पर निर्भरता व लिंग भेद इसके लिए जिम्मेदार पाया गया। महिला जब इसकी शिकायत करती है तो उसे ही दोषी बना दिया जाता है, परन्तु कभी कभी पति, अत्यन्त करीबी रिश्तेदार, माता-पिता एवं भाई द्वारा सहयोग व बीच बचाव किया जाता है।

सुझाव-

- सर्वप्रथम महिलाओं को अपने अधिकारों के बारे में जागरूक करने के लिए शिक्षित करना होगा। एक महिला अपने शिक्षित अधिकारों के प्रति जागरूक होकर आस-पास की अन्य अशिक्षित महिलाओं को जागरूक कर सकती है।
- महिलाओं पर जब पहली बार हिंसा किया जाए तभी उन्हें तुरन्त कड़ा विरोध करना चाहिए, जिससे दुबारा हिंसा की सम्भावना न हो।
- हर व्यक्ति में एक हुनर छुपा होता है,महिला को स्वयं में छुपे हुनर को पहचान कर खुद को आत्मनिर्भर बनाने का प्रयास करना चाहिए। शिक्षित के साथ ही अशिक्षित महिलाएं भी चाहे तो सिलाई, कढ़ाई, कपड़ा बुनना, अन्य कार्यों द्वारा खुद के लिए धन अर्जित कर सकती है।
- परिवार के किसी भी सदस्य द्वारा जब महिला पर हिंसा किया जाय तो अन्य सदस्यों को उसका सहयोग न करके विरोध करना चाहिए।
- सरकार द्वारा चलाए जा रहे हेल्पलाइन नं. 181 घरेलू हिंसा, 1091 सभी प्रकार की सहायता, 1090 महिला पावर लाइन, 112 पर किसी भी प्रकार के उत्पीड़न के लिए, वन स्टाप सेंटर सभी प्रकार के हिंसा को दर्ज करने के लिए, शक्ति एप पर जाकर हिंसा की शिकायत व सहायता के लिए, महिलाओं को जागरूक करने के लिए इन हेल्पलाइन नं. को जगह-जगह पोस्टर लगाना चाहिए। महिला को कभी भी स्वयं को कमजोर नहीं समझना चाहिए। जिस दिन वह ठान लेगी कि वह अबला नहीं सबला है उस दिन से हिंसा करने वाला व्यक्ति हिंसा करने से पहले सौ बार सोचेगा।

संदर्भ ग्रन्थ सूची-

1. Finkelohar David, Genues Richard (1983) Hatling Gerald, Straus Maurraya, Tha Dark Side of Families, Sage Publication, Beverly Hills.
2. Adhuja Ram (1987) Crime against Women, Rawat publication, Jaipur.
3. Labard Naincy (2013) Vialence against Women, Jesica Kingslay, Publication

London.
4. Sharma S. (2018) Crime: A Study on Crime against Women, International Journal of Science and Research.
5. Chhibber Veena (2019). Crime against Women and societal ills: an overview. International Journal of advance scientific and technical research.
6. Gelles R.J. (1983) Intimate Voilance in Families, Sage Publicaton, Beverly Hills.
7. Crime against Women Records National Crime Records Bureau (NCRB).

UGC Journal No. (Old) 2138
Peer-Reviewed Research Journal
Impact Factor 4.875, ISSN 0975-4083
Vol.- 24, Hindi Edition, Year-12, Oct. 2022- March 2023

भारत के ग्रामीण क्षेत्रों में प्रमुख स्वास्थ्य संकेतकों की स्थिति का अध्ययन (छत्तीसगढ़ राज्य के विशेष संदर्भ में)

• अश्वनी कुमार
•• मनदीप खालसा

सारांश- भारत के प्रमुख स्वास्थ्य संकेतकों की स्थिति का विश्लेषण ग्रामीण एवं शहरी क्षेत्र के रूप में प्रस्तुत किया जाता है। स्वतंत्र भारत में ग्रामीण क्षेत्रों में स्वास्थ्य सुविधाओं एवं सेवाओं की स्थिति में सुधार हेतु अनेक उपाय किये गये है। भारत में ग्रामीण सार्वजनिक स्वास्थ्य सेवा प्रदाता संस्थाओं की संख्या में वृद्धि हुई है। गुणवत्तायुक्त स्वास्थ्य सेवाओं एवं सुविधाओं की सार्वभौमिक पहुँच के लिए स्वतंत्र भारत में अनेक स्वास्थ्य नीति एवं स्वास्थ्य योजनाओं का सफल आयोजन किया जा चुका है। जिसके परिणामस्वरूप ग्रामीण क्षेत्रों की प्रमुख स्वास्थ्य संकेतकों की स्थिति में निरंतर सुधार हो रहा है। प्रस्तुत शोध पत्र भारत के ग्रामीण क्षेत्रों में प्रमुख स्वास्थ्य संकेतकों की स्थिति का अध्ययन (छत्तीसगढ़ राज्य के विशेष संदर्भ में) द्वितीयक समंकों पर आधारित है। अध्ययन में वर्ष 2000 से 2020 तक के प्राप्त समंकों का विश्लेषण किया गया है। अध्ययन में पाया कि संपूर्ण भारत एवं छत्तीसगढ़ राज्य के ग्रामीण क्षेत्रों के प्रमुख स्वास्थ्य संकेतकों जन्म दर, मृत्यु दर, एवं शिशु मृत्यु दर में सुधार हुआ है। स्वास्थ्य नीति एवं योजनाओं की प्रमुख उपलब्धि के रूप में ग्रामीण क्षेत्रों की जन्म के समय जीवन प्रत्याशा में वृद्धि हुई है। स्वास्थ्य संकेतकों के तुलनात्मक अध्ययन में पाया कि छत्तीसगढ़ राज्य के ग्रामीण क्षेत्रों का संपूर्ण भारत के ग्रामीण क्षेत्रों के जन्म दर, मृत्यु दर एवं शिशु मृत्यु दर से अधिक है। अतः अब भी स्वास्थ्य संकेतकों के सुधार के क्षेत्र में छत्तीसगढ़ राज्य को स्वास्थ्य योजनाओं के सफल क्रियान्वयन एवं उनकी समस्याओं को दूर करने की आवश्यकता है जिससे स्वास्थ्य संकेतकों में अपेक्षित सुधार किया जा सके।

मुख्य शब्द- ग्रामीण क्षेत्र, स्वास्थ्य संकेतक, स्वास्थ्य सुविधा

प्रस्तावना- महात्मा गांधी जी ने कहा था, ''भारत की आत्मा गांवों में बसती है।'' भारतीय जनगणना वर्ष 2011 के अनुसार भारत की 68.8 प्रतिशत एवं छत्तीसगढ़ राज्य की 76.76 प्रतिशत जनसंख्या ग्रामीण क्षेत्रों में निवास करती है। भारत में मानव संसाधन के विकास हेतु शिक्षा एवं स्वास्थ्य में सार्वजनिक निवेश में वृद्धि की गई है। भारत के स्वास्थ्य

• शोधार्थी बी.सी.एस. शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय धमतरी, जिला, धमतरी (छ.ग.)
•• प्राध्यापक अर्थशास्त्र एवं शोध निर्देशक बी.सी.एस. शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय धमतरी (छ.ग.)

संकेतकों की स्थिति को ग्रामीण एवं शहरी दो रूपों में प्रदर्शित किया जाता है। स्वास्थ्य संकेतकों की दृष्टि से ग्रामीण एवं शहरी क्षेत्रों में व्यापक असमानताएँ व्याप्त है। वर्ष 2018 में भारत जन्म दर ग्रामीण क्षेत्रों में 21.6 एवं शहरी क्षेत्रों में 16.7 था। इस वर्ष मृत्यु दर ग्रामीण क्षेत्रों में 6.7 एवं शहरी क्षेत्रों में 5.1 था। इस अवधि में शिशु मृत्यु दर की स्थिति ग्रामीण क्षेत्रों में 36 एवं शहरी क्षेत्रों में 23 थी। शहरी क्षेत्रों में आधारभूत संरचना का विकास तेजी से हुआ है जिससे स्वास्थ्य सेवाओं एवं सुविधाओं की उपलब्धता अधिक है। ग्रामीण भारत में आधारभूत सुविधाओं की कमी, शिक्षा एवं स्वास्थ्य की सेवाओं एवं संस्थाओं की कमी है जिसका परिणाम प्रमुख स्वास्थ्य संकेतकों जैसे- जन्म-दर, मृत्यु-दर, शिशु मृत्यु-दर एवं मातृत्व मृत्यु-दर में अधिकता के रूप में प्रदर्शित होता है। भारत में स्वास्थ्य संकेतकों की स्थिति में सुधार हेतु अनेक स्वास्थ्य नीतियाँ एवं योजनाओं का क्रियान्वयन किया गया है। सरकार के द्वारा किये गये विभिन्न प्रयास के परिणामस्वरूप ग्रामीण क्षेत्रों में चिकित्सालय सुविधाओं एवं सेवाओं का विस्तार हुआ है तथा प्रमुख स्वास्थ्य संकेतकों की स्थिति में सुधार हुआ है। छत्तीसगढ़ राज्य के ग्रामीण क्षेत्रों में चिकित्सालय सुविधाओं एवं सेवाओं का विस्तार हुआ है। राज्य में वर्ष 2005-06 से 2020-21 की स्थिति में सामुदायिक स्वास्थ्य केन्द्र की संख्या 116 से बढ़कर 170 हो गयी है, प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्र की संख्या 515 से बढ़कर 792 एवं उप स्वास्थ्य केन्द्र की संख्या 3818 थी जो वर्ष 2020-21 में बढ़कर 5206 हो गई हैं।

अध्ययन के उद्देश्य-

- भारत की प्रमुख स्वास्थ्य नीति एवं योजनाओं का अध्ययन करना।
- भारत एवं छत्तीसगढ़ की प्रमुख स्वास्थ्य संकेतकों की प्रवृत्तियों का अध्ययन करना।

अध्ययन की आवश्यकता- भारत के ग्रामीण क्षेत्रों की स्वास्थ्य संरचना में सुधार हेतु सरकार ने अनेक स्वास्थ्य समितियों का गठन एवं स्वास्थ्य नीतियों का निर्माण किया है जिससे ग्रामीणों को गुणवत्तापूर्ण स्वास्थ्य सेवाओं एवं सुविधाओं का लाभ प्राप्त हो सके। भारत के गांवों में अब भी स्वास्थ्य जागरूकता एवं सचेतना की कमी है, अतः सरकार की स्वास्थ्य संबंधी नीतियों से ही शिशु मृत्यु दर, मातृत्व मृत्यु दर एवं जीवन प्रत्याशा में सुधार किया जा सकता है। सरकार के द्वारा इन सार्वजनिक स्वास्थ्य सेवाओं तक सर्वजन की पहुँच बढ़ाने के लिए भी कार्य किया गया है। सरकार के वृहत प्रयास से भारत देश एवं छत्तीसगढ़ राज्य के ग्रामीण क्षेत्रों की स्वास्थ्य संकेतकों में सुधार हुआ है जिसका अध्ययन आवश्यक है।

शोध प्रविधि- प्रस्तुत अध्ययन द्वितीयक समंकों पर आधारित है वर्ष 2000 से 2020 तक के समंकों का संकलन राष्ट्रीय आयोग एवं संस्थाओं से प्रतिवर्ष प्रकाशित सरकारी रिपार्ट, पत्र-पत्रिकाओं, एवं साहित्य तथा वेबसाइटों से प्राप्त समंकों का अध्ययन किया गया है। न्यादर्श के चयन में स्तरीकृत न्यादर्श विधि से चयन किया गया है जिससे भारत एवं छत्तीसगढ़ राज्य की ग्रामीण क्षेत्रों की प्रमुख स्वास्थ्य संकेतकों की स्पष्ट जानकारी प्राप्त हो सके।

सरकार द्वारा स्वास्थ्य संकेतकों में सुधार हेतु किये गये प्रमुख प्रयास- सार्वजनिक

स्वास्थ्य में सुधार हेतु एक वृहत प्रयास अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर हुए अल्मा अटा घोषणा 1978 है, जिसमें विश्व के कुल 134 देशों के प्रतिनिधियों ने हस्ताक्षर किए है। इस घोषणा पत्र में सार्वजनिक स्वास्थ्य की गुणवता एवं पहुँच में सुधार की पहल के साथ स्वस्थ्य संकेतकों एवं स्वास्थ्य संरचना में सुधार की बात को प्रमुखता दी गई है एवं वर्ष 2000 तक 'सबके लिए स्वास्थ्य' का नारा दिया। भारत में स्वास्थ्य व्यवस्था, संरचना एवं स्वास्थ्य शिक्षा में सुधार तथा सुझाव हेतु अनेक समितियों का गठन किया गया। वर्ष 1946 में भोरे समिति गठन किया गया समिति ने तात्कालिन स्वास्थ्य स्थिति का सर्वेक्षण कर प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्र, उप स्वास्थ्य केन्द्र एवं सामुदायिक स्वास्थ्य केन्द्र की स्थापना का सुझाव दिया। सोखी समिति 1948 ने सर्वजन के लिए निःशुल्क चिकित्सा सुविधा की व्यवस्था करने का सुझाव दिया। सामुदायिक स्वास्थ्य कार्यक्रम वर्ष 1952 में प्रथम बार त्रिस्तरीय स्वास्थ्य संरचना स्थापित किया गया। वर्ष 1963 में एम.एस. चधा समिति ने स्वास्थ्य कर्मियों की कमी को दूर करने के लिए सुझाव दिया इनका सुझाव मलेरिया उन्मूलन के प्रयास में गति प्रदान करना था। वर्ष 1965 में मुखर्जी समिति, वर्ष 1973 में करतार सिंह समिति ने बहुउद्देशीय स्वास्थ्य कार्यकर्ताओं की नियुक्ति का सुझाव दिया। वर्ष 1975 में श्रीवास्तव समिति ने ग्रामीण चिकित्सा व्यवस्था में सुधार करने हेतु स्वास्थ्य कार्यकर्ताओं की नियुक्ति का सुझाव दिया उनके सुझाव से ही चिकित्सा शिक्षा आयोग की स्थापना की गई। वर्ष 1980 में आईसीएसएसआर (भारतीय सामाजिक विज्ञान अनुसंधान परिषद) समिति के सुझाव ने स्वास्थ्य नीति का मॉडल प्रस्तुत किया एवं 1986 में बजाज समिति ने सार्वजनिक स्वास्थ्य पर अपनी रिपोर्ट प्रस्तुत की है।

स्वास्थ्य संकेतकों में सुधार हेतु किये गये प्रमुख नीतिगत प्रयास- स्वास्थ्य संकेतकों में सुधार हेतु भारत सरकार के प्रमुख नीतिगत प्रयास वर्ष 1976 में प्रथम जनसंख्या नीति जननांकिकी संकेतकों में सुधार हेतु विस्तृत नीति प्रस्तुत किया गया। वर्ष 1983 में प्रथम राष्ट्रीय स्वास्थ्य नीति वर्ष 2000 तक सभी के लिए स्वास्थ्य की अवधारण पर आधारित है। सन् 2000 की जनसंख्या नीति जनसंख्या स्थिरीकरण हेतु नीति निर्धारण किया है। सन् 2002 की राष्ट्रीय स्वास्थ्य नीति स्वास्थ्य व्यवस्था की विकेन्द्रीकृत व्यवस्था हेतु प्रमुख नीतिगत प्रयास है। ग्रामीण स्वास्थ्य संरचना एवं व्यवस्था में सुधार हेतु सबसे वृहत प्रयासों में से एक वर्ष 2005 की राष्ट्रीय ग्रामीण स्वास्थ्य मिशन है। वर्ष 2013 में राष्ट्रीय स्वास्थ्य मिशन का प्रारंभ किया गया इसमें दो उपमिशन शामिल है, शहरी स्वास्थ्य मिशन एवं राष्ट्रीय ग्रामीण स्वास्थ्य मिशन। वर्ष 2017 की राष्ट्रीय स्वास्थ्य नीति का प्रमुख लक्ष्य सार्वजनिक स्वास्थ्य सेवाओं एवं सुविधाओं के प्रति जनता में विश्वास को बढ़ाकर सार्वभौमिक पहुँच प्रदान करना है। इन सभी भारतीय नीतियों एवं योजनाओं का मूल उद्देश्य स्वास्थ्य संकेतकों में सुधार करना, रोग प्रतिकारक शक्ति में वृद्धि करना, जीवन प्रत्याशा में वृद्धि करना, स्वास्थ्य संरचना एवं सुविधाओं का विस्तार करना है। आधारभूत सुविधाओं के विकास के माध्यम से सार्वजनिक स्वास्थ्य सुविधाओं तक सार्वभौमिक पहुँच एवं गुणवत्ता में सुधार करना, चिकित्सा शिक्षा में सुधार एवं विस्तार करना एवं ग्रामीण स्वास्थ्य सेवाओं की आपूर्ति में वृद्धि करना है।

भारत एवं छत्तीसगढ़ राज्य में प्रमुख स्वास्थ्य संकेतकों की स्थिति- वर्ष 2000 से

2020 की अवधि में भारत एवं छत्तीसगढ़ के ग्रामीण क्षेत्रों में प्रमुख स्वास्थ्य संकेतकों की स्थिति को तालिका के माध्यम से प्रदर्शित किया गया है।

तालिका क्रमांक 01

भारत एवं छत्तीसगढ़ राज्य के ग्रामीण क्षेत्रों में जन्म, मृत्यु एवं शिशु मृत्यु दर की स्थिति

वर्ष	जन्म दर		मृत्यु दर		शिशु मृत्यु दर	
	भारत	छत्तीसगढ़	भारत	छत्तीसगढ़	भारत	छत्तीसगढ़
2000	27.6	29.2	9.3	11.2	74	95
2005	25.6	29	8.1	8.5	64	65
2010	23.7	26.8	7.4	8.4	51	52
2015	22.4	24.8	7.1	8.1	41	43
2020	21.1	23.4	6.4	8.4	31	40

स्त्रोत–https://censusindia.gov.in/vital_statistics/SRS_Bulletins/Bulletins.html

चित्र क्रमांक-1

भारत एवं छत्तीसगढ़ राज्य के ग्रामीण क्षेत्रों में जन्म दर की स्थिति

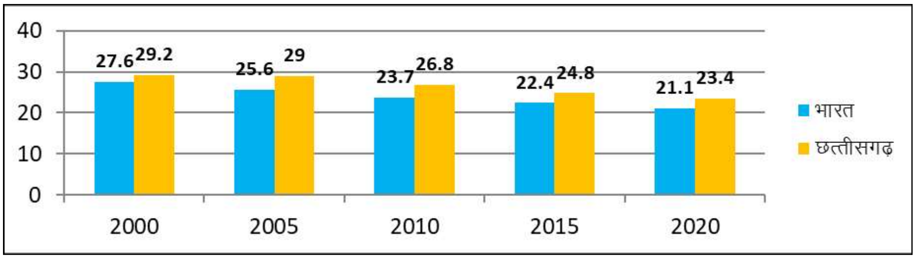

भारत एवं छत्तीसगढ़ के ग्रामीण क्षेत्रों मे जन्म दर की स्थिति- वर्ष 2000 से 2020 तक की नमूना पंजीकरण प्रणाली (एसआरएस) बुलेटिन के अध्ययन में पाया कि भारत एवं छत्तीसगढ़ में जन्म दर में कमी आयी है। ग्रामीण क्षेत्रों में जन्म दर वर्ष 2000 में भारत में 27.6 एवं छत्तीसगढ़ में 29.2 था जो वर्ष 2020 में क्रमशः 21.1 एवं 23.4 हो गया है। इस अवधि में भारत के ग्रामीण क्षेत्रों के जन्म दर में 6.4 अंक की कमी एवं छत्तीसगढ़ में 5.8 अंक की कमी हुई है। जन्म दर में वर्ष 2000-20 तक की अवधि में भारत में वर्ष 2000 से 2005 एवं 2000 से 2005 की अवधि में अधिकतम 2 अंक की कमी हुई हैं। इस अवधि में छत्तीसगढ़ राज्य में सर्वाधिक जन्म दर में कमी वर्ष 2010 से 2015 की अवधि में 2 अंक की कमी हुई है। इस अवधि में जन्म दर भारत में औसत प्रति वर्ष 0.32 अंक की कमी एवं छत्तीसगढ़ राज्य में 0.29 अंक की कमी प्रति वर्ष आयी है। प्राप्त समंकों के विश्लेषण से पाया कि संपूर्ण भारत की जन्म दर की अपेक्षा छत्तीसगढ़ राज्य के जन्म दर तुलनात्मक रूप से कम कमी आयी है।

चित्र क्रमांक-2

भारत एवं छत्तीसगढ़ राज्य के ग्रामीण क्षेत्रों में मृत्यु दर की स्थिति

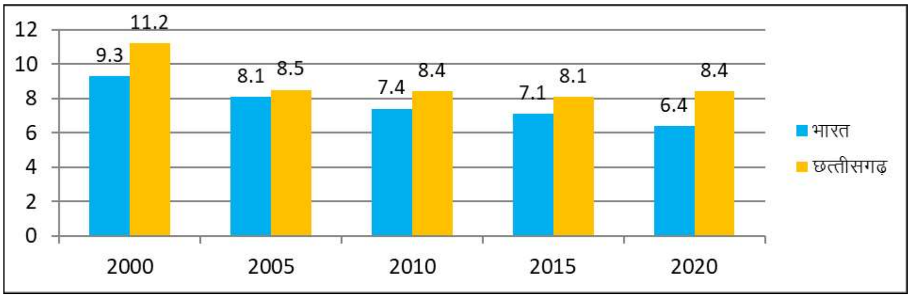

भारत एवं छत्तीसगढ के ग्रामीण क्षेत्रों में मृत्यु दर की स्थिति- वर्ष 2000 से 2020 तक की नमूना पंजीकरण प्रणाली (एसआरएस) बुलेटिन के अध्ययन में पाया कि भारत के ग्रामीण क्षेत्रों में मृत्यु दर वर्ष 2000 में 9.3 था जो कि वर्ष 2020 में 6.4 रह गया है मृत्यु दर में कुल 2.9 अंक की कमी इस अवधि में हुई है। इस अवधि में छत्तीसगढ़ राज्य के ग्रामीण क्षेत्रों में मृत्यु दर में 2.8 अंक की कमी हुई है। सर्वाधिक कमी वर्ष 2000-05 की अवधि में भारत में 1.2 अंक की एवं छत्तीसगढ़ राज्य में 2.7 अंक की कमी हुई है। छत्तीसगढ़ राज्य में वर्ष 2015-20 की अवधि में मृत्यु दर में 0.3 अंक की वृद्धि हुई है। भारत एवं छत्तीसगढ़ में ग्रामीण मृत्यु दर में वर्ष 2000-2020 की अवधि में औसत प्रति वर्ष क्रमशः 0.145 एवं 0.14 अंक की कमी आयी है।

चित्र क्रमांक-3

भारत एवं छत्तीसगढ़ राज्य के ग्रामीण क्षेत्रों में शिशु मृत्यु दर की स्थिति

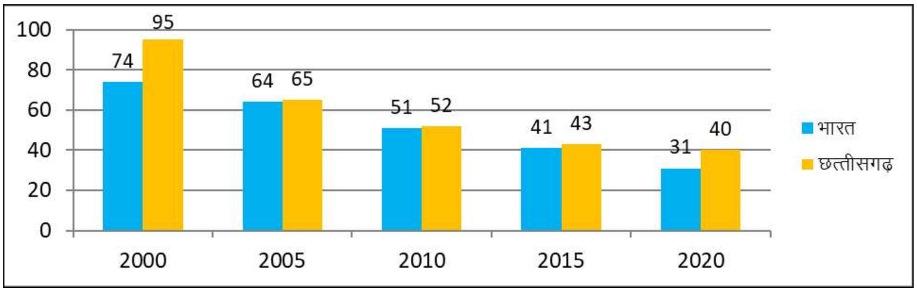

भारत एवं छत्तीसगढ़ के ग्रामीण क्षेत्रों में शिशु मृत्यु दर की स्थिति - वर्ष 2000 से 2020 तक की नमूना पंजीकरण प्रणाली (एसआरएस) बुलेटिन के अध्ययन में पाया कि ग्रामीण भारत में शिशु मृत्यु दर वर्ष 2000 में 74 था जो कि वर्ष 2020 में 31 हो गया है इस अवधि में शिशु मृत्यु दर में 43 अंक की कमी आयी है। इस अवधि में छत्तीसगढ़ राज्य के ग्रामीण क्षेत्रों में मृत्यु दर क्रमशः 95 से 40 हो गया है कुल 45 अंक की कमी हुई है। सर्वाधिक कमी वर्ष 2005-10 की अवधि में 13 अंक की एवं छत्तीसगढ़ राज्य में वर्ष 2000-05 की अवधि में 30 अंक की कमी आयी है। इस अवधि में शिशु मृत्यु दर में औसत प्रति वर्ष भारत में 2.15 अंक एवं छत्तीसगढ़ राज्य में 2.25 अंक की कमी हुई है।

तालिका क्रमांक-02
भारत एवं छत्तीसगढ़ में मातृत्व मृत्यु दर की स्थिति

वर्ष	मातृत्व मृत्यु दर भारत में	मातृत्व मृत्यु दर छत्तीसगढ़ में
2001-03	301	379
2004-06	254	335
2010-12	178	230
2014-16	130	173
2018-20	97	137

स्त्रोत-https://censusindia.gov.in/vital_statistics/SRS_Bulletins/Bulletins.html

भारत एवं छत्तीसगढ़ में मातृत्व मृत्यु दर की स्थिति- भारत में मातृत्व मृत्यु दर वर्ष 2001-03 की अवधि में 301 एवं छत्तीसगढ़ में 379 था जो वर्ष 2018-20 की अवधि में भारत में 97 एवं छत्तीसगढ़ राज्य में 137 हो गया है। मातृत्व मृत्यु दर में वर्ष 2001-03 से 2018-20 की अवधि में भारत में 204 अंक की कमी एवं छत्तीसगढ़ में 242 अंक की कमी आयी है।

तालिका क्रमांक-03
भारत देश एवं छत्तीसगढ़ राज्य
के ग्रामीण क्षेत्रों में जन्म के समय जीवन प्रत्याशा

वर्ष	भारत में	छत्तीसगढ़ में
2002-06	63.5	58.9
2012-16	67.4	64.4
2016-20	68.6	64.3

स्त्रोत-https://censusindia.gov.in/vital_statistics/SRS_Bulletins/Bulletins.html

भारत एवं छत्तीसगढ़ में जन्म के समय जीवन प्रत्याशा की स्थिति- भारत के ग्रामीण क्षेत्रों में जन्म के समय जीवन प्रत्याशा की आयु वर्ष 2002-06 की अवधि में 63.5 था जो कि वर्ष 2016-20 की अवधि में 68.6 हो गया है। इस अवधि में छत्तीसगढ़ राज्य में 58.9 था जो 64.3 हो गया है। इस अवधि में संपूर्ण भारत के ग्रामीण क्षेत्रों की जन्म के समय जीवन प्रत्याशा में 5.1 वर्ष एवं छत्तीसगढ़ राज्य में 5.4 वर्ष की वृद्धि हुई है। जीवन प्रत्याशा में हुई यह वृद्धि शिक्षा एवं स्वास्थ्य सेवाओं तथा सुविधाओं का विस्तार, जीवन में विभिन्न भौतिक वस्तुओं का उपयोग में वृद्धि एवं आय में वृद्धि से संभव हुआ है।

निष्कर्ष- वर्ष 2000 से 2018 तक प्राप्त समंकों के अध्ययन में पाया कि इस अवधि भारत एवं छत्तीसगढ़ राज्य की ग्रामीण क्षेत्रों की स्वास्थ्य संकेतकों की स्थिति में सुधार हुआ है लेकिन संपूर्ण भारत के ग्रामीण क्षेत्रों जन्म दर, मृत्यु दर, शिशु मृत्यु दर एवं मातृत्व मृत्यु दर तथा जन्म के समय जीवन प्रत्याशा की आयु की अपेक्षा छत्तीसगढ़ राज्य अब भी पिछड़ा हुआ है। वर्ष 2000 से 2020 की अवधि में भारत एवं छत्तीसगढ़ राज्य के स्वास्थ्य संकेतकों में निम्नलिखित प्रमुख सुधार हुआ है-

- ग्रामीण क्षेत्रों के जन्म दर में भारत में 6.4 एवं छत्तीसगढ़ में 5.8 अंक की कमी आयी है।
- मृत्यु दर में भारत में 2.9 एवं छत्तीसगढ़ में 2.8 अंक का सुधार इस अवधि में हुआ है।
- शिशु मृत्यु दर में भारत में इस अवधि में 43 अंक एवं छत्तीसगढ़ में 45 अंक की कमी आयी है।
- मातृत्व मृत्यु दर में भारत में 2001-03 एवं 2018-20 के मध्य 204 एवं छत्तीसगढ़ में 243 अंक की कमी आयी है।
- वर्ष 2002-06 एवं 2016-20 के मध्य भारत में जन्म के समय जीवन प्रत्याशा आयु में 5.1 वर्ष एवं छत्तीसगढ़ में 5.4 वर्ष की वृद्धि हुई है।
- विभिन्न स्वास्थ्य समितियों के सुझावों ने स्वास्थ्य नीति के निर्माण में महत्वपूर्ण भूमिका निर्वहन किया है। योजनाओं एवं नीतियों का प्रभाव स्वास्थ्य संकेतकों में सुधार के रूप में प्रदर्शित हुआ है।
- भारत के संपूर्ण ग्रामीण क्षेत्रों की स्वास्थ्य संकेतकों से छत्तीसगढ़ राज्य के ग्रामीण क्षेत्रों की स्वास्थ्य संकेतकों की तुलनात्मक अध्ययन में पाया कि अब भी छत्तीसगढ़ राज्य के स्वास्थ्य संकेतकों की स्थिति संपूर्ण भारत के ग्रामीण क्षेत्रों की स्वास्थ्य संकेतकों की तुलना निम्न है।
- छत्तीसगढ़ राज्य को विभिन्न स्वास्थ्य संकेतकों में सुधार हेतु वृहत स्तर पर प्रयास करने की आवश्यकता है जिससे की स्वास्थ्य संकेतकों में तेजी से सुधार किया जा सके।

संदर्भ ग्रन्थ सूची-

1. वर्षिक रिपोर्ट (2014-15). पृ.सं 19
2. सिंह ए.के. (2017). बढ़ते स्वास्थ्य बजट में ग्रामीण भारत की भागीदारी, कुरूक्षेत्र 5, 38-40।
3. चौधरी, के.सी. (2014). राष्ट्रीय ग्रामीण स्वास्थ्य मिशन. कुरूक्षेत्र, 5, 19 -21।
4. Bajaj committee, 1986: National Health portal of india. (n.d.). Retrieved from https://www.nhp.gov.in/bajaj-committee-1986_pg
5. Bhore committee,1946: National Health portal of india. (n.d.). Retrieved from https://www.nhp.gov.in/bhore-committee-1946_pg
6. Chokshi, M., Patil, B., Khanna, R., Neogi, S., Sharma, J., Paul, V., & Zodpey, S. (2016). Health Systems in India. Retrieved from https://www.ncbi.nlm.nih.gov/pmc/articles/PMC5144115/
7. Galhotra, A., Padhy, G., Pal, A., Giri, A., & Nagarkar, N. (2014). Mapping the health indicators of Chhattisgarh: A public health perspective. International Journal of Medicine and Public Health, 4(1), 23. doi:10.4103/2230-8598.127117
8. Health committee. (n.d.). Retrieved from https://www.scribd.com /presentation/172389286/Health-Committee

9. https://censusindia.gov.in/vital_statistics/SRS_Bulletins/Bulletins.html
10. Jungalwal committee report - national Health portal of ... (n.d.). Retrieved from https://www.nhp.gov.in/sites/default/files /pdf/Jungalwal_Committee_Report.pdf
11. K., S. K., Panda, P., & Ved, R. R. (2010). Handbook of population and development in India. New Delhi: Institute for Human Development.
12. Kartar Singh committee Report 1973 - [pdf document]. (n.d.). Retrieved from https://fdocuments.net/document/kartar-singh-committee-report-1973.html
13. Ministry of Health and Family Welfare, Government of India. (1983). National health policy. Health policies. Retrieved from https://www.nhp.gov.in/sites/default/files/pdf/nhp_1983.pdf
14. Ministry of Health and Family Welfare, Government of India. (2002). National health policy. Health policies. Retrieved from https://www.nhp.gov.in/sites /default/files/pdf/NationaL_Health_Pollicy.pdf
15. Ministry of Health and Family Welfare, Government of India. (2017a). National health policy. Health policies. Retrieved from https://www.nhp.gov.in//NHPfiles/national_health_policy_2017.pdf
16. Mittal, S., & Ramji, S. (1989). Health for all and rural medicare. Retrieved September from https://www.ncbi.nlm.nih.gov/pubmed/2632423
17. Mudaliar Committee Report on Health Survey and Planning-1962. (n.d.). Retrieved from http://www.eagri.org/eagri50/AEXT191/lec06.pdf
18. Mukherjee committee, 1966: National Health portal of india. (n.d.). Retrieved from https://www.nhp.gov.in/mukherjee-committee-1966_pg
19. NatioNal health MISSION (NHM) - Ministry of health and ... (n.d.). Retrieved from https://main.mohfw.gov.in/sites/default/ files/569875321 45632566578.pdf
20. National health policy - 2002. (n.d.). Retrieved from https://nhp.gov.in/sites/default/files/pdf/NationaL_Health_Pollicy.pdf
21. National health policy. (n.d.). Retrieved from https://www.nhp.gov.in /sites/default/files/pdf/nhp_1983.pdf
22. National population policy - national health mission. (n.d.). Retrieved from https://nhm.gov.in/images/pdf/guidelines/nrhm-guidelines /national_population _policy_2000.pdf
23. Thayyil, J., & Jeeja, M. (2013, January 01). Issues of creating a new cadre of doctors for Rural India. Retrieved from http://www.ijmedph.org/article/50

UGC Journal No. (Old) 2138
Peer-Reviewed Research Journal
Impact Factor 4.875, ISSN 0975-4083
Vol.- 24, Hindi Edition, Year-12, Oct. 2022- March 2023

बिहार में मानव संसाधन विकास: प्रतिरूप एवं परिवर्तनीयता

• गणेश कुमार शर्मा

सारांश- मानवीय कल्याण हेतु शारीरिक, बौद्धिक एवं आर्थिक उन्नति के फलस्वरूप सामाजिक-आर्थिक एवं संस्कृतिक संरचना की गुणवत्ता के परिप्रेक्ष्य में मानवीय आवश्यकताओं के निश्चित आयामों के आधार पर पहचान एवं सीमांकन की प्रक्रिया एवं गतिविधियों को मानव संसाधन विकास सूचकांक (एच.आर.डी.आई.) कहा जा सकता है। प्रस्तुत शोध प्रपत्र मानव संसाधन विकास के स्थानिक प्रतिरूप एवं कालिक परिवर्तनीयता के सीमांकन पर केन्द्रित है। स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात् देश में किवास हेतु पंचवर्षीय योजना, हरित क्रान्ति का प्रादुर्भाव हुआ, साथ ही स्वास्थ्य, शिक्षा एवं रोजगार जैसे आयामों पर भी योजनाओं व नीति निर्धारकों की प्रयास महत्त्वपूर्ण रहा, यद्यपि देश के सभी प्रान्तों में समन्वित विकास का प्रयास विफल रहा। विदित हो कि पिछले दशक से बिहार में विकास की स्थिति काफी सुधारजनक हुई है, फिर भी देश के अन्य राज्यों की तुलना में प्रति व्यक्ति आय, शिक्षा एवं स्वास्थ्य के सुविधाओं की दृष्टि से अंतिम पायदान पर है। यहाँ इस दिशा में मानव संसाधन विकास का स्तर निर्धारण एवं विश्लेषण संयुक्त राष्ट्र विकास कार्यक्रम (यू.एन.डी.पी) के सांख्यिकीय मॉडल (प्रतिमान) पर आधारित प्रयास है।

मुख्य शब्द- मानव संसाधन विकास, स्थानिक प्रतिरूप, कालिक परिवर्तनीयता, यू.एन.डी.पी. का सांख्यिकीय मॉडल एवं एच.डी.आई

संकल्पना- संकल्पना- यद्यपि कि जनसंख्या में अभिवृद्धि (Accretion) के साथ ही मानव संसाधन की रचना प्रारम्भ हो जाती है, उसका मानव संसाधन में रूपान्तरण उसमें आयी गुणवत्ता से जुड़ा है। गुणवत्ता से तात्पर्य उसकी कार्य-क्षमता में वृद्धि के साथ-साथ नैतिक मूल्यों की स्वीकार्यता आचरण के स्तर पर अपेक्षित है (शर्मा गणेश कु. 2017)[1] समुदाय के हित में किसी संगठन में व्यक्ति को सर्वोच मानव संभाव्य संसाधन के रूप में प्रयुक्त किये जाने हेतु, बौद्धिक, शारीरिक, नैतिक, मनोवैज्ञानिक, सांस्कृतिक एवं आर्थिक रूप से समुन्नत बनाने की एक निरंतर प्रक्रिया तथा गतिविधि को मानव संसाधन विकास कहा जाता है (घोष, विश्वनाथ, 2005)।[2] अर्थात् मानविकी संसाधन विकास

• **असिस्टेंट प्रोफेसर, भूगोल विभाग, आर.डी.एस. कॉलेज, मुजफ्फरपुरबी.आर.ए.बी.यू., मुजफ्फरपुर, बिहार**

बल्कि प्रगति का सर्वाधिक तथा चतुराई पूर्ण निर्धारक है। एक मात्र पर्याप्त भौतिक संसाधनों की उपलब्धता तब तक प्रगति उन्मुख नहीं हो सकती, जब तक कि आवश्यकता मानविकी क्षमताओं का विकास नहीं किया जाता। मानविकी विकास केवल आर्थिक प्रगति से नहीं जुड़ा है क्योंकि आर्थिक प्रगति जहाँ एक साधन है, मानविकी विकास, विकास की प्रक्रिया की पूर्णता का घोतक है (रामोतर, के.सी. एण्ड कोरे.आर.आल., 2011)।[3]

ज्ञातव्य है कि मौरिस डी. मौरिस (Morris D. Morris, 1970)[4] ने विकास के स्तर निर्धारण हेतु, जीवन की सामूहिक भौतिक गुणवत्ता (composite Physical Quality of Life) पर आधारित प्रतिमान का सहरा लिया है जिसका निर्धारण शिशु मृत्युदर, एक वर्ष की आयु में जीवन सम्भाव्यता तथा 15 वर्ष की आयु में मूल शिक्षा जैसे तीन संकेतकों द्वारा किया जाता है। वर्तमान् मानव विकास सूचकांक (HDI) शब्द की रचना एवं शुरूआत पाकिस्तानी अर्थशास्त्री महबुबुल हक (1990)[5] द्वारा हुई हालांकि एच.डी.आई. का मुख्य स्त्रोत संयुक्त राष्ट्र विकास कार्यक्रम (यू.एन.डी.पी.) की मानव विकास रिपोर्ट रहा है। विदित हो कि एच.डी.आई. मानव विकास के तीन मूलभूत घटकों (i) दीर्घ आयु, (ii) ज्ञान एवं (iii) रहन-सहन के स्तर का संयोजन है। दीर्घ आयु के मापन जीवन प्रत्याशा (Life expectancy) के आधार पर किया जाता है। ज्ञान का स्तर साक्षरता दर एवम् कुल नामांकन दर के अनुपात एवम् रहन-सहन के स्तर की माप क्रय शक्ति पर आधारित है, जो प्रति व्यक्ति वास्तविक आय द्वारा निर्धारित की जाती है। (सिंह, उषा एवं शर्मा गणेश कु., 2018)[6]

अतएव इन संकल्पनाओं की पृष्ठ भूमि में प्रस्तुत निबंध बिहार में मानव संसाधन विकास के स्तर निर्धारण का एक प्रयास है।

अध्ययन का उद्देश्य- वर्तमान शोध प्रपत्र के मुख्य उद्देश्य निम्नांकित हैं-

- मानव संसाधन विकास के स्थानिक-कालिक प्रतिरूप की पहचान एवं सीमांकन का विश्लेषण
- मानव संसाधन विकास की कालिक परिवर्तनीयता के उत्तरदायी निर्धारक प्रतिकारकों की विवेचना

आँकड़ों का स्रोत- वर्तमान शोध प्रपत्र द्वितीय आँकड़ों के स्त्रोत आर्थिक सर्वेक्षण बिहार (2001-2002)[7], (2010-2011)[8] पी.सी.ए. बिहार (2001)[9], (2011)[10] एवं यू.एन.डी.पी. रिपोर्ट (1990-2011)[11] से उपलब्ध हुए हैं।

तालिका–1

बिहार में मानव संसाधन विकास सूचकांक, 2011

क्र0 सं0	जिला	स्वास्थ्य	शिक्षा	आर्थिक (आय)	एच0डी0आई0
1	2	3	4	5	6
1	पटना	0.65	0.50	0.51	0.57
2	नालंदा	0.57	0.69	0.47	0.57
3	भोजपुर	0.53	0.81	0.16	0.50
4	बक्सर	0.35	0.79	0.24	0.46
5	रोहतास	0.28	0.76	0.23	0.42
6	कैमुर	0.37	0.80	0.24	0.47
7	गया	0.38	0.61	0.53	0.50
8	जहानाबाद	0.52	0.64	0.28	0.48
9	अरवल	0.50	0.68	0.33	0.50
10	नवादा	0.55	0.36	0.47	0.46
11	औरंगाबाद	0.43	0.73	0.31	0.49
12	सारण	0.50	0.72	0.02	0.41
13	सिवपान	0.37	0.61	0.09	0.35
14	गोपालगंज	0.33	0.54	0.15	0.34
15	पश्चिमी चम्पारण	0.38	0.36	0.49	0.41
16	पूर्वी चम्पारण	0.35	0.13	0.33	0.27
17	मुजफ्फरपुर	0.47	0.60	0.26	0.44
18	सीतामढ़ी	0.21	0.39	0.23	0.27
19	शिवहर	0.39	0.30	0.24	0.31
20	वेशाली	0.29	0.68	0.16	0.37
21	दरभंगा	0.34	0.30	0.19	0.27
22	मधुबनी	0.47	0.40	0.45	0.44
23	समस्तीपुर	0.38	0.45	0.21	0.34
24	बेगुसराय	0.47	0.63	0.27	0.45
25	मुगेर	0.47	0.82	0.28	0.52
26	शेखपुरा	0.51	0.59	0.42	0.50
27	लखीसराय	0.37	0.57	0.27	0.40
28	जमुई	0.56	0.56	0.68	0.51
29	खगड़िया	0.28	0.35	0.35	0.38
30	भागलपुर	0.39	0.54	0.30	0.41
31	बांका	0.51	0.40	0.41	0.45
32	सहरसा	0.27	0.44	0.37	0.36
33	सुपौल	0.26	0.41	0.59	0.42
34	मधेपुरा	0.33	0.40	0.35	0.36
35	पूर्णिया	0.39	0.30	0.36	0.35
36	किशनगंज	0.16	0.21	0.18	0.18
37	अररिया	0.20	0.26	0.52	0.32
38	कटिहार	0.40	0.18	0.28	0.28

स्त्रोत– शोधार्थी द्वारा परिगणित।

विधितंत्र- शोध प्रपत्र में अपनाया गया विधि तंत्र यू.एन.डी.पी. के सांख्यिकीय मॉडल पर आधारित है तथापि कि प्रयुक्त विधि[12] हेतु तीन मुख्य आयामों (Dimension) के परिकलन में वास्तविक मूल्य व नयून्तम मूल्य के अंतर के अधिकतम मूल्य व न्यूनतम मूल्य के अंतर से विभाजित किया गया है। प्रथम आकलन से प्राप्त सभी संकेतकों के मूल्यों को समान इकाई में रूपान्तरण के पश्चात् द्वितीय चरण में प्रयुक्त विधि द्वारा तीन मुख्य संकेतक (स्वास्थ्य, शिक्षा एवं आय) का परिकलन कर मानव संसाधन विकास सूचकांक (HRDI) सीमांकन किया गया है।

तालिका–2

बिहार में मानव संसाधन विकास की परिवर्तनीयता (2001–2011) सूचकांक, 2011

क्र0 सं0	जिला	मानव संसाधन विकास सूचकांक		मानव संसाधन विकास की परिवर्तनीयता सूचकांक (2001–2011)
		2011	2001	
1	2	3	4	5
1	पटना	0.57	0.48	0.09
2	नालंदा	0.57	0.47	0.10
3	भोजपुर	0.50	0.33	0.17
4	बक्सर	0.6	0.28	0.18
5	रोहतास	0.42	0.35	0.07
6	कैमुर	0.47	0.38	0.09
7	गया	0.50	0.46	0.04
8	जहानाबाद	0.48	0.41	0.07
9	अरवल	0.50	0.41	0.09
10	नवादा	0.46	0.36	0.10
11	औरंगाबाद	0.49	0.47	0.02
12	सारण	0.41	0.26	0.15
13	सिवपान	0.35	0.33	0.02
14	गोपालगंज	0.34	0.38	0.04
15	पश्चिमी चम्पारण	0.41	0.32	0.09
16	पूर्वी चम्पारण	0.27	0.26	0.01
17	मुजफ्फरपुर	0.44	0.31	0.13
18	सीतामढ़ी	0.27	0.21	0.06
19	शिवहर	0.31	0.18	0.13
20	वेशाली	0.37	0.31	0.06
21	दरभंगा	0.27	0.31	0.04
22	मधुबनी	0.44	0.30	0.14
23	समस्तीपुर	0.34	0.31	0.03
24	बेगुसराय	0.45	0.36	0.09
25	मुगेर	0.52	0.34	0.18
26	शेखपुरा	0.50	0.44	0.06
27	लखीसराय	0.40	0.34	0.06
28	जमुई	0.51	0.33	0.18
29	खगड़िया	0.38	0.46	0.08
30	भागलपुर	0.41	0.38	0.03
31	बांका	0.45	0.34	0.11
32	सहरसा	0.36	0.33	0.03
33	सुपौल	0.42	0.30	0.12
34	मधेपुरा	0.36	0.38	0.02
35	पूर्णिया	0.35	0.40	0.05
36	किशनगंज	0.18	0.8	0.00
37	अररिया	0.32	0.30	0.02
38	कटिहार	0.28	0.31	0.03

स्त्रोत– शोधार्थी द्वारा परिगणित।

1. उच्च विकसित संभाग (0.55) - तालिका–2 के अवलोकन मात्र से स्पष्ट होता है, कि उच्च मानव संसाधन विकास के संघटक पटना एवं नालंदा है, जिनका विकास सचूकांक 0.57 प्रस्फुटित होता है, जबकि संभाग का औसत स्वास्थ्य 0.61, शिक्षा 0.59, आय 0.49 परिगणित किया गया है। यह संभाग जनसंख्या की गुणवतत्ता की दृष्टि से उन्नत है, यद्यपि क्षेत्र के विकसित होने का मुख्य कारक राज्य की राजधानी होने का गौरव है, जबकि दूसरा संघटक प्राचीन काल से ही विश्व प्रसिद्ध शैक्षणिक केन्द्र रहा है एवं वर्तमान में भी विकास की ओर अग्रमुख है। साथ ही यह संभाग विकास के कंन्द्र बिन्दु एवं ध्रव बिन्दु के स्थान पर अवस्थित है। गुणवत्ता के महत्वपूर्ण कारकों प्रति व्यक्ति आय,

साक्षरता, महिला सारक्षरता एवं नामांकन के साथ-साथ स्वास्थ्य की सुविधाओं से उन्नत है। विदित हो कि संभाग की गुणत्ता में प्रत्यक्ष एवं अप्रत्यक्ष रूप में विकास के केन्द्र बिन्दु एवं ध्रुवीय बिन्दु व्यवस्था महत्वपूर्ण योगदान है।

2. विकसित संभाग (0.45-0.55)- मानव संसाधन विकास का द्वितीयक संभाग जिसका विचलन प्रसार (0.45-0.55) तालिका-2 ,एब-सानेचित्र- के झलक मात्र से स्पष्ट होता है, कि इस संभाग में सम्मिलित संघटक मुंगेर, जमुई, भोजपुर, गया, अरवल, शेखपुरा, औरंगाबाद, जहानाबाद, कैमुर, बक्सर, नवादा, बेगुसराय एवं बांका है। इस संभाग में अध्ययन क्षेत्र का 34: संघटक सम्मिलित है। यद्यपि अध्ययन क्षेत्र का औसत मानव विकास सूचकांक 0.40 परिगणित है, जबकि संभाग का औसत सूचकांक 0.48 आकलित है। द्रष्टव्य है कि संभाग का औसत स्वास्थ्य 0.47, शिक्षा 0.54 एवं आय 0.35 मूल्य है। उच्च विकसित संभाग की तुलना में यहाँ शैक्षणिक विकास का स्तर उन्नतशील है। 2004 एवं 2044 के दौरान शिक्षा से संबंधी योजनाओं का फलाफल है। जबकि स्वास्थ्य एवं आय (0.44 एवं 0.09) के मूल्यों में सुधार नही हुआ है, फिर भी इस संभाग को विकसति होने का महत्वपूर्ण कारक उच्च विकसित संभाग के समीपस्थ विकास की सुविधाओं का लाभ आसानी से उपलब्ध होता रहा है। साथ ही मुंगेर प्रमंडल में शिक्षा की गुणवता की उत्कृष्ट होने का कारण प्राचीन काल से ही यह सांस्कृतिक दृष्टि से जागरूक रहा है। फलस्वरूप संभाग में विकास की संभावनाएं विकासेन्मुख है।

3.सामान्य विकसित संभाग (0.35-0.45)- मानव संसाधन विकास का तृतीय संभाग का विचलन प्रसार (0.35-0.45) के मध्य सम्मिलित (मुजफ्फरपुर, भागलपुर, लखीसराय, खगड़िया, वैशाली, सहरसा, मधेपुरा, सिवान एवं पूर्णिया है। इस संभाग में अध्ययन क्षेत्र का 36 प्रतिशत संघटक अवस्थित है)। विदित हो कि राज्य का औसत एच. डी.आई. की तुलना में 0.39 अर्थात ड्रास प्रस्फुटित है। इस प्रकार संभाग का मानव विकास आयाम में स्वास्थ्य 0.36, शिक्षा 0.48 एवं आय 0.34 के औसत मूल्य के साथ निर्धारित है। इस संभाग में भी शिक्षा की गुणवत्ता में समुन्नत मूल्य प्रस्फुटित करता है। ध्यातव्य है कि संभाग में बाढ़ जैसी आपदा का भी जन-जीवन पर नकारात्मक प्रभाव पड़ता है क्योंकि पूर्वोत्तर बिहार में कोसी नदी, बागमती व पश्चिमोत्तर बिहार में गंगा व गंडक नदी के कहर ग्रसित है। हालांकि कुल कर्मी व महिला कर्मी की संख्या समुन्नत है, किन्तु प्रतिव्यक्ति आय, शिक्षा एवं विकास की स्थिति विकासोन्मुख है।

4.अल्प विकसित संभाग (0.25-0.35)- इस संभाग में सम्मिलित संघटक गोपालगंज, समस्तीपुर, अररिया, शिवहर, कटिहार, पू. चम्पारण, सीतामढ़ी एवं दरभंगा अवस्थित है। इस संभाग में 24 प्रतिशत संघटक विद्यमान है। यह क्षेत्र में औसत प्रान्तीय मानव विकास सूचकांक की तुलना में 0.30 मूल्य ह्रास परिलक्षित होता हैं साथ ही स्वास्थ्य 0.32, शिक्षा 0.31 एवं आय 0.28 का औसत सूचकांक सभाग में अवनत विकास का परि–श्य निर्धारण करते है। यद्यपि स्वास्थ्य की गुणवत्ता सुविधा जनक है किन्तु प्रति व्यक्ति आय एवं शिक्षा की स्थिति अन्य संभागों की तुलना में दयनीय हैं। अन्य प्रभावित करने वाले कारकों शिक्षा में साक्षरता व नामांकन, स्त्री शिक्षा दयनीय है। साथ ही जनसंख्या के अभिवृद्धि का प्रतिफल है। मानचित्र (1) के अवलोकन से स्पष्ट होता है कि तीरहुत प्रमण्डल के पू. चम्पारण शिवहर, सीतामढ़ी, एवं पूर्णिया प्रमण्डल के अररिया व कटिहार जैसे संघटक कोसों दूर प्रतीत होता है।

5.अविकसित संभाग (0.25)- तालिका-2 के अवलोकन मात्र से स्पष्ट होता है कि संभाग में एक मात्र किशनगंज जो अर्न्तराजीय एवं अर्न्तराष्ट्रीय से दूरस्थ व सुगम परिवहन तंत्रिका की सुविधाओं से वंचित होने के कारण अन्तिम पायदान पर मानव विकास सूचकांक 0.8 के साथ परिगणित किया गया है। मानव विकास आयाम स्वास्थ्य 0.6 शिक्षा 0.24 एवं आय 0.8 मूल्य न्यूनतम विकास का द्योतक है यहाँ सुविधाओं का सुगम पहुँच संभव नहीं है।

यहाँ जनसंख्या के आधार पर धार्मिक, राजनीतिक, सामाजिक आर्थिक व प्राकृतिक कारकों का प्रभाव विद्यमान है, जिसका सकारात्मक कम- नकारातमक का प्रभाव अधिक द्रष्टव्य है।

मानव संसाधन विकास का कालिक परिवर्तनीयता- तालिका 3 के सिंहावलोकन मात्र से स्पष्ट होता है कि मानव संसाधन विकास की स्थानिक-कालिक सूचकांक की परिवर्तनीयता के आकलन के फलस्वरूप औसत सूचकांक 0.07 है। ध्यातव्य है कि औसत सूचकांक से उपर वाले संघटक जहानाबाद 0.07, रोहतास 0.07, बेगुसराय 0. 09, अरवल 0.09, कैमुर 0.09, पटना 0.09, नवादा 0.0, नालंदा 0.40, सुपौल 0.42, शिवहर 0.43, मुजफ्फरपुर 0.3, मधुबनी 0.44, सारण 0.45, भोजपुर 0.7, जुमुई 0.व 8, मुंगंर 0.48 एवं बक्सर 0.48 है। कुल संघटकों की संख्या का 19 अर्थात 50:) संघटक अवस्थित है।

विदित हो कि राजधानी पटना एवं नालंदा के समीपस्थ संघटकों में परिवर्तनीयता सूचकांक उच्च प्रतिफलित है, तथापि जिन क्षेत्रों में परिवहन . तंत्रिका, स्वस्थ्य सुविधाओं एवं प्रति व्यक्ति आय समुन्नत है, साथ ही सरकार द्वारा चलायी जा रही योजना, सर्वशिक्षा अभियान, नामांकन, पुस्तक, पोशाक, छात्रवृत्ति, साइकिल वितरण योजना व माध्यमिक, उच्चमाध्यमिक एवं उच्च शिक्षा विशेष रूप से स्त्री शिक्षा में प्रोत्साहन राशि इत्यादि योजनाओं का भी प्रभाव संघटकों पर पड़ा है। साथ ही रोजगार की योजनाओं में मनरेगा व नरेगा का प्रभाव प्रस्फुटित हुआ है।

ध्यातव्य है कि (0.07) से नीचे परिवर्तनीयता: वाले संघटकों में सीतामढ़ी 0. 06, वैशाली 0.06, लखीसराय 0.06, शेखपुरा 0.06, गया 0.04, समस्तीपुर 0.03, भागलपुर 0.03, सहरसा 0.03, औरंगाबाद , सिवान 0.02, अररिया 0.02, पू0 चम्पारण 0.0 किशनगंज 0.04, मधेपुरा 0.02, कटिहार 0.03, गोपालगंज, दरमंगा 0.04, पूर्णिया 0.05 एवं कटिहार 0.08 अवस्थित हैं।

ध्यातव्य है कि औसत से नीचे अवस्थित संघटकों में जो क्षेत्र राज्य के मध्यवर्ती भाग में स्थित है। उनका विकास पूर्व से उन्नत था, वर्तमान में भी वहाँ विकास की गति समुन्नत रही है। द्रष्टव्य है कि सीतामढ़ी, वैशाली, लखीसराय, शेखपुरा, गया, भागलपुर एवं दरभंगा जिले में जनसंख्या के अनुपात में स्वास्थ्य सुविधाओं की कमी, कुल रोजगार, महिला में ड्रास के कारण परिवर्तनीयता सूचकांक औसत से न्यूनतर प्रस्फटित है। अर्थात स्वास्थ्य, शिक्षा एवं प्रति व्यक्ति आय की स्थिति औसत से उच्च संघटकों की तुलना में दूर्बल स्थिति में है (तालिका-2)।

द्रष्टव्य है कि औसत से नीचे ऋणात्मक परिवर्तनीयता सूचकांक वाले संघटकों में कालिक ड्रास के मुख्य पहलुओं में बाढ़ व सुखाड़ जैसी अपदा वर्षा ऋतु में इन

संघटकों में स्वभाविक है। राज्य की राजधानी से दूरस्थ व आधारभूत विकास की संरचनाओं से उन्नत नहीं हो पाने के कारंण विकास की गति धीमी है। कुल मिलाकर विकास के पैमाना पर प्रति व्यक्ति आय, एवं स्वास्थ्य की सुविधाओं से पिछड़े हैं, चूंकि विकास केन्द्र बिन्दु का लाभ उन तक सुगमरूप से नहीं पहुँच पाया। अन्ततः इनकी आर्थिक प्राकृतिक एवं राजनीति सीमा, कारकों के प्रतिफल स्थिति है।

अन्ततः इनकी प्राकृतिक, आर्थिक एवं राजनीतिक सीमा की स्थिति का नकारात्मक प्रतिफल है।

निष्कर्ष- बिहार में मानव संसाधन विकास के स्थानिक प्रतिरूप एवं कालिक परिवर्तनीयता के सारगमित अध्ययन के उपरांत न्िाषजिकर्षतः जो सार्थक तथ्य प्रस्फुटित हुए हैं।

उच्च विकसित संभाग जों पूर्व व वर्तमान दशक में विकास के केन्द्र बिन्दु व राज्य की राजधानी होन का गौरव प्रप्त है। दूसरा विकसित संभाग इनका अवस्थिति उच्च विकसित संभाग के समीपस्थ होनं- का अर्थात राजधानी पटना का प्रभाव है। सामान्य विकसित संभाग जिसमें परिवहन तंत्र, अर्थतंत्र, शिक्षा एवं स्वास्थ्य जैसी सुवधिओं से जुड़े होन का प्रभाव द्रष्टव्य है। अल्प विकसित एवं अविकसित संभाग वैसे संघटक हैं जो राजनीति सीमाओं राष्ट्रीय व अन्तराष्ट्रीय सीमा पर अवस्थित है। यह क्षेत्र राजधानी के दायरे से दूरस्थ व सीमाओं पर पठार, बाढ़ जैसी आपदाओं से घिरी है समग्र रूप में अगर कहा जाए तो भौतिक राजनीतिक एवं आर्थिक कारकों से प्रभावित है।

परिवर्तनीयता सूचकांक के अध्ययन से स्पष्ट होता है कि क्षेत्र में सरकार द्वारा कियान्वित योजनाओं के प्रभाव जता जिन संघटकों में स्वास्थ्य, शिक्षा एवं रोजगार जैसी योजनाओं का विकास हुआ है उनकी स्थिति अव्वल है, जैसे बक्सर, मुंगेर भेजपुर, जमुई एवं सारण। साथ ही इन संघटकों में परिवहन तंत्रिका एवम् सांस्कृतिक संशलिष्ट का विकास हुआ है उन संघटकों का परिवर्तननीयता सकारात्मक है। किन्तु जिन संघटकों का मानव विकास का स्तर पूर्व से वर्तमान तक उननत रहा है उनका परिवर्तनीयता सूचकांक सामान्य है जैसे पटना, नालन्दा इसके विपरीत योजनाओं से वंचित, आपंदा ग्रसित उच्च जनसंख्या वृद्धि दर एवं दूरस्थ अवस्थित संघटाकें में परिवर्तनीयता सूचकांक ऋणात्मक द्रष्टव्य है।

संदर्भ ग्रन्थ सूची-

1. शर्मा, गणेश, कु., 2007, घाघरा-गंडक दोआब में अनुसूचित जातियों का मानव संसाधन विकास, अप्रकाशित, पी-एच.डी., शोध-ग्रंथ, जे.पी.यू., छपरा, पृ. 01
2. घोष, विश्वनाथ, 2005, हयूमेन रिस,सेज डेवलप्मेंट एंड मैनेजमेंट, विकास पब्लिशिंग हाउस, प्रा.लि., न्यू देलही पृ. 12
3. रामोत्तर के.सी. एण्ड, 2011, स्पेशियो टेम्पोरल ह्यूमेन रिसोर्स
4. कोटे आर. एल., डेवपमेंट इन कोल्हापु डिस्ट्रीक्स ऑफ महाराष्ट्र नेशनल ज्योग्राफिकल सोसाइटी ऑफ इण्डिया बी.एच.यू. वाराणसी, वॉल्यूम 57, पार्ट 3 पृ. 1-7
5. मौरीस, डी. मौरीस, 1979, मेजरींग दी कण्डीशन ऑफ दी वर्ल्डस पुअर दी फिजिकल क्वालिटी ऑफ लाइफ इण्डेक्स, उद्धत झिगन, एम.एल., 1998, विकास का अर्थशास्त्र

एवं आयोजन वृन्दा पब्लिकेशन, प्रा.लि. दिल्ली, पृ. 911

6. हक, महबुबुल, 2003, ह्यूमेन डेवलपमेंट इन साउथ एशिया 2002, डेवलपमेंट सेन्टर आक्सफोर्ड, यू. प्रेस
7. सिंह, उषा एंड शर्मा, 2018, घाघरा-गंडक दोआब में अनुसूचित गणेश, कुमार जातियों का सतत् मानविकी विकास'', रिसर्च जरनल ऑफ आर्ट्स, मैनेजमेंट एण्ड सोशल साइंस सेन्टर फॉर रिसर्च स्टडीज रीवा, अंक-X, 2019 iii-ii मार्च गायत्री, पब्लिकेशन रीवा, पृ.202
8. आर्थिक सर्वेक्षण, बिहार 2001-2002
9. आर्थिक सर्वेक्षण, बिहार 2001-2002
10. सेन्सस ऑफ इण्डिया 2001 पी.सी.ए. बिहार थ्रू सी.डी.
11. सेन्सस ऑफ इण्डिया, 2011, कुल जनसंख्या सारणी क-5 बिहार, श्रृंखला 11, पृ. 3 - 22
12. यू.एन.डी.पी., 1990-2011, हयूमेन डेवलपमेंट रिर्पोट ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस, न्यू देलही

UGC Journal No. (Old) 2138
Peer-Reviewed Research Journal
Impact Factor 4.875, ISSN 0975-4083
Vol.- 24, Hindi Edition, Year-12, Oct. 2022- March 2023

वाक् एवं अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता के परिप्रेक्ष्य में: सूचना के अधिकार की प्रासंगिकता

• पी. एस. बोरा

सारांश- वाक् एवं अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता लोकतांत्रिक शासन व्यवस्था की आधारशिला है। प्रत्येक लोकतांत्रिक सरकारे इस स्वतंत्रता को बड़ा महत्व देती है। भारतीय संविधान के अनुच्छेद 19(1)a में वाक् एवं अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता का प्रत्याभूत करता है तथा इसमे प्रेस की स्वतंत्रता भी सम्मिलित है। एस.पी.गुप्ता बनाम भारत संघ के मामले मे उच्चतम न्यायालय ने यह अभिनिर्धारित किया कि जानने का अधिकार संविधान के अनुच्छेद 19(1)a मे प्रत्याभूत वाक् एवं अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता मे अन्तर्निहित है। भारतीय संसद द्वारा सूचना का अधिकार अधिनियम 12 मई 2005 को पारित किया गया और यह अधिनियम 12 अक्टुबर 2005 से भारत मे प्रभावी हो गया सूचना के अधिकार अधिनियम के अर्न्तगत सूचना प्राप्त करना प्रत्येक नागरिक का अधिकार है।

मुख्य शब्द - शासन व्यवस्था, स्वतंत्रता, सूचना

वाक् एवं अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता, लोकतांत्रिक शासन व्यवस्था की आधारशिला है। प्रत्येक लोकतांत्रिक सरकारें इस स्वतंत्रता को बहुत ही महत्व देती है। एक स्वतंत्र लोकतंत्र चार आधार स्तम्भों जिसमे कार्यपालिका, न्यायपालिका, विधायिका और स्वतंत्र प्रेस पर टिका है। भारतीय संविधान के अनुच्छेद 19(1)a में वाक् एवं अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता का उल्लेख किया गया है। अनुच्छेद 19(1)a सभी नागरिकों को वाक् एवं अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता का प्रत्याभूत करता है तथा इसमे प्रेस की स्वतंत्रता भी सम्मिलित है। इस प्रकार प्रेस एवं मीडिया को उपरोक्त वर्णित अनुच्छेद के अन्तर्गत स्वतंत्र विचार व्यक्त करने का अधिकार है। जब संविधान सभा (Constituent Assembly) में इस पर विचार किया गया था तो इस बारे मे थोड़ा भ्रम था कि क्या प्रेस की स्वतंत्रता का विशेष रूप से वर्णन किया जाना चाहिये तथा क्या अभिव्यक्ति 'वाक् एवं अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता' में प्रेस की स्वतंत्रता सम्मिलित है। इन सभी संदेहों को दूर करते हुए प्रारूपण समिति (Drafting Committee) के अध्यक्ष डॉ. भीमराव अम्बेडकर ने निम्नलिखित शब्दो में इस स्थिति को स्पष्ट किया।[1] "प्रेस किसी व्यक्ति या नागरिक के वर्णन का अन्य तरीका है। प्रेस को ऐसे कोई विशेष अधिकार प्राप्त

• **सहायक प्राध्यापक, विधि विभाग, एस. एस. जे. परिसर, सोबन सिह जीना विश्वविद्यालय अल्मोडा**

नही है जो नागरिक को नही दिये जाने है या जो उसके द्वारा अपने व्यक्तिगत हैसियत से प्रयोग नही किया जाना है। प्रेस का संपादक या प्रबंधक सभी नागरिक ही होते है एवं इसलिए जब वे किसी समाचारपत्र का प्रतिनिधित्व करने का निर्णय करते है तो ऐसे मे वे केवल अपने अभिव्यक्ति के अधिकार का प्रयोग कर रहे है तथा मेरे अनुसार प्रेस की स्वतंत्रता का विशेष वर्णन करने की कोई आवश्यकता नही है।[2]

रोमेश थापर बनाम मद्रास राज्य[3] के मामले मे उच्चतम न्यायलय ने कहा कि वाक् एवं अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता मे विचारों के प्रसार की स्वतंत्रता सम्मिलित है और वह स्वतंत्रता विचारों के प्रसारण की स्वतंत्रता द्वारा सुनिश्चित है। उस स्वतंत्रता के लिए परिचालन की स्वतंत्रता उतनी ही आवश्यक है जितनी की प्रकाशन की स्वतंत्रता है निःसंदेह परिचालन के बिना प्रकाशन का कोई महत्व नही होगा।

श्रीनिवास बनाम मद्रास[4] राज्य के मामले मे वाक् एवं अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता केवल अपने ही विचारों के प्रसार की स्वतंत्रता तक सीमित नही है इसमे दूसरे के विचारो के प्रसार एवं प्रकाशन की स्वतंत्रता भी सम्मिलित है, जो प्रेस की स्वतंत्रता द्वारा ही संभव है।

एस.पी. गुप्ता बनाम भारत संघ[5] के मामले में उच्चतम न्यायालय ने यह अभिनिर्धारित किया कि जानने का अधिकार संविधान के अनुच्छेद 19(1)a मे प्रत्याभूत वाक् एवं अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता मे अन्तर्निहित है।

भारत संघ बनाम ऐसोसिएशन फॉर डेमोक्रेटिक रिफार्म्स व अन्य[6] के वाद मे भी उच्चतम न्यायालय ने अभिनिर्धारित किया था कि जानकारी प्राप्त करने का अधिकार लोकतंत्र की संकल्पना से प्रवाहित होने वाला स्वाभाविक अधिकार है। अपना मत डालने से पहले जो उसका वाक् एवं अभिव्यक्ति का ही तरीका है उसको अभ्यर्थी जो उसका संसद मे प्रतिनिधित्व करने जा रहा है के बारे में उसकी आपराधिक गतिविधियों समेत सब कुछ जानने का अधिकार है क्योकि वह संसद मे जाकर कानून बनायेगा जो उस की स्वतंत्रता और सम्पति पर बन्धनकारी होगा।

भारतीय संसद द्वारा सूचना का अधिकार अधिनियम 12 मई 2005 को पारित किया गया और यह अधिनियम 12 अक्टूबर 2005 से भारत मे प्रभावी हो गया इसलिए भारत मे सूचना के अधिकार का महत्व बढ़ गया। इसके मुख्य प्रावधान इस प्रकार से है-

- इस विधि को प्रभावी ढंग से लागू करने के लिए केन्द्रीय सूचना आयोग के नीचे राज्य और जिले से लेकर ब्लॉक स्तर तक सूचना आयुक्तों व सूचना प्राधिकारियों की लम्बी चौड़ी व्यवस्था की है।
- सूचना प्राप्त करने के लिए निर्धारित शुल्क (दस रूपए नकद, ड्राफ्ट या चेक) के साथ नियम प्राधिकारी के समक्ष आवेदन करना होगा गरीबी रेखा के नीचे जीवनयापन करने वालो के लिए निःशुल्क आवेदन का भी प्रावधान है।(धारा 6 व 7(5)
- सूचना अधिकारी 30 दिनों के भीतर वांछित सूचना उपलब्ध करवाएगा और यदि सूचना किसी व्यक्ति के जीवन या स्वतंत्रता से सम्बन्धित है तो इसे आवेदन के 48 घण्टों के भीतर प्राप्त किया जा सकता है। धारा 7(1)

- जहाँ सूचना का आवेदन अस्वीकृत किया जाता है तो लोकसूचना अधिकारी को निम्नलिखित को बताना आवश्यक होगा-

1. इस प्रकार अस्वीकृत के कारण।
2. अस्वीकृति की अपील का समय जो विहित हो।
3. अपील अधिकारी के बारे में जानकारी (धारा 7(8))।

- इस अधिनियम के प्रावधान केन्द्र व राज्य सरकार पर ही नही बल्कि स्थानीय निकाय, सार्वजनिक क्षेत्र के उपक्रमों व स्वंयसेवी संगठनों, पर भी लागू होगे।
- यदि सूचना अधिकारी विहित समय पर सूचना उपलब्ध नहीं करवाता है या आवेदक सूचना अधिकारी के निर्णय से संतुष्ट नही है तो वह ऐसे निर्णय या आदेश के 30 दिनों के भीतर उसके उच्चस्थ अधिकारी के समक्ष अपील कर सकेगा (धारा 19(1)) इस प्रकार के आवेदन को निरस्त या अस्वीकृत करने का आधार न्यायोचित था। यह साबित करने का भार केन्द्रीय लोक सूचना अधिकारी या राज्य सूचना अधिकारी पर डाला गया है (धारा 19(5)) ऐसी अपील को निपटाने की अवधि 30 दिन निर्धारित की गई है जो किसी भी परिस्थिति में 45 दिन से अधिक नहीं होगी।
- यदि सूचना अधिकारी या अपील अधिकारी विहित समय में सूचना उपलब्ध नही करवाता है या आवेदन पत्र बिना युक्तियुक्त कारण के निरस्त करेगा या आधी अधूरी सूचना देगा, भ्रामक सूचना देगा, आदि के लिए प्रशासनिक कार्यवाही की जाएगी, बिना कारण विलम्ब से सूचना देने वाले अधिकारी पर दो सौ पचास रूपए प्रतिदिन तथा अधिकतम 25000 रू. तक जुर्माने का प्रावधान किया गया है।(धारा 20)
- आवेदक को सूचना प्राप्ति का कारण व व्यक्तिगत विवरण देना आवश्यक नहीं होगा केवल अपना नाम पता देना होगा। (धारा 6 (2))
- कुछ सूचनाओं को इस अधिनियम के बाहर रखा गया है, जिन्हे सार्वजनिक करने से भारत की सम्प्रभुता और अखण्डता प्रभावित होती हो अथवा राष्ट्र की सुरक्षा, राजनीति अथवा आर्थिक व वैज्ञानिक हितो पर आँच आती है, ऐसी सूचना जिससे विदेशों से सम्बन्ध खराब होने की आशंका हो या जो किसी अपराध को बढ़ावा दे, से सम्बन्धी सूचना देने से भी मना किया गया है। सूचना जिसकी किसी न्यायालय द्वारा प्रकाशन वर्जित किया गया है या जिसकी सूचना देना न्यायालय का अवमान हो तो ऐसी सूचना भी अधिनियम से स्पष्ट रूप से वर्जित की गई है।(धारा 8)
- सूचना के कारण प्रतिलिप्याधिकार भंग होता है तो वह सूचना इस अधिनियम के अर्न्तगत अपवाद होगी, लेकिन सरकारी कॉपीराइट इसमे शामिल नहीं है। (धारा 9)
- किसी अभिलेख का कुछ अंश प्रकटीकरण से छूट प्राप्त है तब उसी अभिलेख के दूसरे अंश जो प्रकटीकरण से छूट प्राप्त नहीं है ऐसे अभिलेख के अंश की

सूचना प्राप्त की जा सकती है।(धारा 10)

- जरूरी सूचना लेने के लिए 10 रूपए शुल्क देना होगा, एक घण्टे के बाद फाइलों के मुआयने के लिए प्रत्येक 15 मिनट के लिए पाँच रूपए अतिरिक्त शुल्क के रूप मे होंगे।
- किसी भी अभिलेख, दस्तावेज, ई-मेल, विज्ञप्ति, परिपत्र, आदेश, संविदा रिपोर्ट व इलेक्ट्रॉनिक रूप में एकत्रित आँकड़ों की जानकारी ली जा सकती है। दस्तावेज की प्रमाणित प्रति, सूचना-मुद्रित, फ्लॉपी, टेप, विडियो कैसेट या अन्य मीडिया माध्यम से प्राप्त की जा सकती है।
- जहाँ केन्द्रीय या राज्य लोक सूचना अधिकारी को यह प्रतीत होता है कि प्राप्त की गई सूचना के प्रकटीकरण में किसी तृतीय पक्षकार का हित है तो ऐसा अधिकारी उस तृतीय पक्षकार को सूचना देगा व तृतीय पक्षकार को अपना पक्ष रखने का अवसर देगा इसके पश्चात ही तृतीय पक्षकार को स्वीकृती या अस्वीकृती की सूचना देने को अधिकारी आवेदन पत्र का निपटारा करते समय प्राथमिकता देगा।(धारा 11)
- इस अधिनियम के अर्न्तगत अपील के अलावा कोई न्यायालय इस अधिनियम के अर्न्तगत कोई वाद, प्रार्थना पत्र या इस अधिनियम की कार्यवाहियों के अधीन पारित आदेश का पोषण नहीं करेगा।(धारा 23)
- राष्ट्रीय सुरक्षा से जुड़े विभाग, खुफिया विभाग, संवेदनशील विभाग, वैज्ञानिक शोध विभाग, परमाणु व उपग्रह विभाग तथा ऐसे विभागो की सूचनाओं को जिनसे देश को नुकसान हो सकता है। इस अधिनियम के दायरे से बाहर रखा गया है (धारा 24)7

आर.टी.आई. के प्रभावी क्रिन्यान्वयन के उपाय- सूचना के अधिकार कानून की प्रस्तावना में उपाय में स्पष्ट किया गया है कि प्रभावी लोकतन्त्र की स्थापना के लिये जागरूक नागरिकों तथा सत्य व तथ्यों पर आधारित पारदर्शी सूचनाओं की आवश्यकता होती है। इस रूप मे देखे तो आर.टी.आई. कानून के अन्तर्गत सूचना प्राप्त करना प्रत्येक नागरिक का अधिकार है। अत: आर.टी.आई के प्रभावी क्रियान्वयन के लिये सर्वप्रथम देश के प्रत्येक नागरिक को अपने अधिकारों तथा कर्तव्यों के प्रति जागरूक होना पड़ेगाा और किसी भी प्रकार से इनके हनन होने से बचने के लिये दृढता से खड़ा होना पड़ेगा । कहा गया है कि किसी भी प्रकार के अन्याय तथा भेदभाव को चुपचाप सहन कर लेना अपने प्रति एक और अपराध करने जैसा है। आर.टी.आई. की प्रक्रिया कितनी भी लम्बी हो मगर आम आदमी को जूझने का माद्दा दिखाना चाहिए। ताकि सूचना देने में आनाकानी करने वाले विभागों तथा अधिकारियों को लोकतन्त्र की ताकत का अन्दाजा हो जाय तथा वे जनता पर शासन करने की मानसिकता की बजाय स्वच्छ,पारदर्शी तथा जबाबदेह शासन की ओर उन्मुख हो सके। शासन प्रशासन की कार्यप्रणाली को भ्रष्टाचार मुक्त कार्यकुशल तथा गतिशील बनाने और एक सभ्य व ईमानदार समाज की स्थापना के लिए सर्वप्रथम जनता की जनहित के मुद्दे पर एकजुटता तथा अपने अधिकारों व

कर्तव्यो के प्रति जागरूकता जरूरी है।[8]

संदर्भ ग्रन्थ सूची-

1. डॉ. सुकान्त के. नन्दा, मीडिया विधि, सेन्ट्रल लॉ पब्लिकेशन्स इलाहाबाद,संस्करण, 2018,पृष्ठ 03-04
2. कान्सटीटुयन्ट असेम्बली डिबेट्स,दिनांक 2.12.48, पृष्ठ 780
3. रोमेश थापर बनाम मद्रास राज्य ए.आई.आर. 1950 एस.सी.124
4. श्रीनिवास बनाम मद्रास राज्य, ए.आई.आर. 1951 मद्रास 79
5. एस0पी0गुप्ता बनाम भारत संघ ए.आई.आर 1982 एस.सी. 149
6. भारत संघ बनाम ऐसोसिएशन रिफार्म्स व अन्य फॉर डेमोक्रेटिक (2002) 5 एस.सी.सी. 294,ए.आई.आर. 2002 एस.सी. 2112

UGC Journal No. (Old) 2138
Peer-Reviewed Research Journal
Impact Factor 4.875, ISSN 0975-4083
Vol.- 24, Hindi Edition, Year-12, Oct. 2022- March 2023

गढ़वाल हिमालय के प्रणय गीत

• डी. एस. भण्डारी

सारांश- लोक गीतों का जन्म लोक जीवन से होता है। उनकी रचना किसने की? कब की? इसका ज्ञान किसी को नहीं है। लोकगीत बनाए नहीं जाते, परन्तु वह सर्वव्यापी दिखाई देते हैं। लोक जीवन की अनुभूतियों को दर्पण में दिखाई देता है। लोकगीत एक कंठ से होते हुए असंख्य कण्ठों तक सहज ही पहुंच जाते हैं, इनकी सीमा का कोई निर्धारण नहीं किया जा सकता है। कोई विषय इनसे से अछूता नहीं रहता है। गढ़वाल हिमालय के लोकगीतों का नामकरण विभिन्न लोक साहित्यकारों द्वारा किया गया। संस्कार कार्य हेतु, त्यौहार और व्रत जाति के आधार पर लोकगीतों का वर्गीकरण किया गया है। विषय की दृष्टि से प्रणय गीतों के अनेक प्रकार और शैलीय उपादान मिलते हैं। प्रेम, दांपत्य प्रेम, अवैध प्रेम, की इसके ही स्वरूप हैं, इन्हीं प्रणय गीतों का विवेचन इस शोध पत्र का विषय है।

मुख्य शब्द - प्रणय गीत, लोकगीत, सर्वव्यापी, संस्कार

गढ़वाल हिमालय के लोकगीतों में प्रणयगीतों की संख्या सर्वाधिक दिखाई देती है डॉक्टर चातक कहते हैं कि विषय की दृष्टि से प्रणय और श्रृंगार की अनुभूति अभिव्यक्त करते हैं किंतु शैली की दृष्टि से उनमें अनेक भेद दिखाई देते हैं।[1] छोपती, लामण, बाजूबंद, छूडा आदि इनके मुख्य भेद हैं यहां दांपत्य प्रणय और अवैध प्रेम से संबंधित भी कई गीत मिलते हैं लेकिन उनके लिए पृथक से कोई नाम नहीं दिया गया है।

छोपती– छोपती गीत के साथ नृत्य का नाम भी है। यह मंडलाकार नृत्य होता है इस नृत्य की गति और लय के साथ जो गीत उल्लास के अवसरों त्योहारों में गाए जाते हैं आपसी साहचर्य भाव के कारण उन्हें छोपती कहा जाता है। इस गीत का संगीत, नृत्य के अनुसार होता है। गढ़वाल हिमालय में त्योहारों उत्सव के लिए प्रसिद्ध रवांई जौनपुर में छोपती गीत सर्वाधिक रूप से गाए जाते हैं। यह क्षेत्र उन्मुक्त प्रेम नृत्य और गीतों के लिए प्रसिद्ध है युवक युवतियां सामूहिक रूप से छोपती गाते हैं। स्त्री पुरुषों की अलग-अलग टोली बनी होती है छोपती गीत में किसी विषय को लेकर संवाद आरंभ किया जाता है और अंत तक प्रश्न उत्तर का क्रम चलता रहता है। इन गीतों में विषय का प्रेम होता है लेकिन उनमें आदर्श प्रेम की कथित पवित्रता और नैतिकता नहीं दिखाई देती है।[2]

पोसतु का छुमा मेरी भग्यानी बौ ।
आज की छोपती मेरी भग्यानी बौ।

• विभागाध्यक्ष हिन्दी, बालगंगा महाविद्यालय सेन्दुल, केमर टिहरी गढवाल, उत्तराखण्ड

रै तुम्हरा जुमा मेरी भग्यानी बौ।
घुगूती को घोल मेरी भग्यानी बौ।
रूबसी घिचीन मेरी भग्यानी बौ।
तू रौनक खोल मेरी भग्यानी बौ।

गायकों की मनस्थिति के अनुसार ही प्रश्न उत्तर का क्रम दिखाई देता है छोपती का संवाद प्रेम की अनुकूलता और प्रतिकूलता दोनों दिशाओं की ओर आगे बढ़ सकता है अनुनय विनय उलाहना, प्रणय की स्वीकृति पारस्परिक आसक्ति आत्म निवेदन अनेक भाव इसके अंतर्गत समाहित होते हैं। जब प्रश्नोत्तर व्यंग और उलाहना की दिशा में आगे बढ़ता है उसके बाद भी द्वेष भावना उसमें नहीं दिखाई देती है। इस गीत में संयोग और वियोग दोनों अवस्थाएं दिखाई देती है। प्रेम की दोनों अवस्थाओं में भी छोपती के संवाद अत्यधिक चुटीले होते हैं विलास के स्वर अधिक दिखाई देते हैं। जीवन के सुखों को वर्तमान में ही भोग लेने की आकुलता दिखाई देती हैं जीवन और यौवन की अस्थिरता को व्यक्त करने वाली उक्तियां इन गीतों में मुख्य रूप से दिखाई देती हैं।

पैरीत सुलार मेरी भग्यानी बौ।
द्वी दिन की ज्वानी मेरी भग्यानी बौ।
ज्वानी का उलार मेरी भग्यानी बौ।
सगवाडी का तोडा मेरी भग्यानी बौ।
हैंसी रण खेली मेरी भग्यानी बौ।
ज्वानी रैगी तोडा मेरी भग्यानी बौ।

जो सुख भविष्य में प्राप्त नहीं हो सकता है उसकी प्राप्ति के लिए इन गीतों में वर्तमान का ही मोह व्यक्ति हुआ है। नायक और नायिका द्वारा एक दूसरे के लिए उठाए गए दुखों का विवरण भी इन गीतों में किया जाता है। प्रेम में जलकर कोयला हो जाने के बाद कहकर प्रेम की व्यंजना हुई है।

दाली हवैती छवीलो पिरूली पाणी दी जा पाणी।
तेरा बाना होये पिरूली पाणी पी जा पाणी।
शरीर क्वलो पिरूली पाणी पी जा पाणी।

जिन छोपतियों में संयोग श्रृंगार का माधुर्य व्यक्त होता है उनमें रूप का गुण कथन ही अधिक मिलता है शारीरिक सौंदर्य का वर्णन इन लोकगीतों में अधिक दिखाई देता है नायक नायिका प्रेम सूत्र में बंधे दिखाई देते हैं और प्रकृति प्रतीकों के माध्यम से व्यक्त किए जाते हैं।[3]

बंदूकी को बर दसन की तरऊंसी
पतली कमर दरसन की तरऊंसी
टूटण की डर दरसन की तरऊंसी

स्त्री पुरुष का लैंगिक आकर्षण ही उसके संगीत स्वरों में व्यक्त होकर आया है।[4] ऐसे गीतों में संयोग सुख सहानुभूति की लालसा प्रकट हुई है। छोपती गीतों में संयोग श्रृंगार का भाव ही प्रधान होता है।[5] ऐसे लोगगीतों में संयोग की स्थिति में वियोग की वेदना बताकर सहानुभूति प्राप्त नहीं की जाती है।

भैंसा की दौली गोबरधन गिरधारी।
रात का सुपिना देखी गोबर धन गिरधारी।
सिराण बौली गोबरधन गिरधारी।
रिंगलो मलेऊ गोवरधन गिरधारी ।

छोपती गीतों में प्रेम की विविध मनोदशाओं की काव्यमयी अभिव्यंजना होती है।[6]

कापिडा की साफी है ले छुमा बौ,
मुख मा रामा ले भग्यानी बौ मन तेरो पापी।
लेखी त चीठी ले भग्यानी बौ
मन तेरो पापी ले भग्यानी बौ बात तेरी मीठी।
पाणी को निगास है ले छुमा बौ।
तू चढी आगास ले भग्यानी बौ।

लामण- लामण भी छोपती की भांति ही प्रणय गीत होते हैं, लेकिन लामण गीतों में छोपती की भांति न संवाद ही होते हैं और ना ही उनमें नृत्य का समावेश होता है। लामणगीत विषय की समानता रखते हुए संयत और उदात्त दिखाई देते हैं। लामण की भाषा और छोपती की भाषा में भी अंतर दिखाई देता है। लामण में लोक हृदय को अपनी ओर आकर्षित करने की विलक्षण क्षमता होती है। लामण गीतों में प्रेम की आसक्ति भी दिखाई देती हैं, और सांसारिक आदर्श भी।[7] लामण गीतों में जब सामाजिकता व्यवधान बनती है।[8] तब प्रेम भाग्य वाद का सहारा लेता है। प्रेमियों के पारस्परिक संबंधों को प्रकृति के माध्यम से व्यक्त करने का प्रश्न है तब ऐसी उक्तियां बहुत रचनात्मक प्रतीत होती हैं।[9]

तेरो मेरो नाणिये लोखडा औरेटा साता।
डोक नाण पाण पामि दैण हाता।

लामण गीतों में अमर्यादित प्रेम संबंधों के प्रति अनिच्छा अभिव्यक्त हुई है, और प्रेमियों के आसक्त भाव भी दिखाई देते हैं पुरुषों का आकर्षण वासना पर ही आधारित नहीं दिखाई देता है। प्रेम गीतों में प्रेम संबंधों को गोपनीय रखने का आग्रह भी दिखाई देता है। लामण गीतों में विरह भावना नहीं दिखाई देती है यह उनमुक्त शैली में होते हैं विषय की गंभीरता के लिए उनमुक्त समझे जाते हैं।

बाजूबंद- यह प्रणयगीतों में तीसरी कोटि के गीत हैं, जिन्हें कुमाऊं में नेपाली नाम से पुकारा जाता है। छोपती में सामूहिक भावनाओं की अभिव्यक्ति होती है। लामण एकांत में गाया जा सकता है परंतु बाजूबंद में प्रियतम प्रेमसी का उपस्थित होना आवश्यक है। बाजूबंद में प्रेम की पवित्रता दिखाई देती है।[10] लैंगिक आकर्षण भी इन प्रकार के गीतों का मुख्य विषय माना जाता है यह प्रेम भाभी साली आदि के प्रति व्यक्त हुआ मिलता है। ये गीत परिस्थिति के अनुकूल और आवश्यकता के अनुसार तत्काल रचे जाते हैं। बाजूबंद में किसी प्रकार की परंपरा का बंधन नहीं होता है, अधिकांश बाजूबंद पुरुषों द्वारा आरंभ किये जाते हैं। आरंभ में परिचय और उसके उपरांत वह अपने प्रेम की अभिव्यक्ति नायिका से करता है कई स्थानों पर विलासिता की निंदा भी ऐसे लोक गीतों में की गई हैं।

रेशमी रूमैल,
माया को भूको छऊं जंगलू की सैल।

आग की अगेंठी।
तेरी मायान सुवा मेरी जिकुडी लपेटी।
स्यूंदी लायो फोंदा।
विदेशी भंवर सुवा, अपना नी होंदा।
सेरा डाली फूल।
रस रस चूसी लेंदा छोडी देंदा फूल।

ऐसे प्रेम गीतों में प्रेमी प्रेम की महत्ता स्वीकार करता हुआ दिखाई देता है।

राडी गौ चौंर
तू उडयांदो पंछी छोरी मैं बिव्यांदु भौंर
सुपा लाई दैण
भगतू की गीता छई तू छुयौं की रामैण।

यह पारस्परिक आश्रयत्व ही प्रेम का प्राण है। फूल का प्रेम संबंध प्राचीन काव्य का प्रतिपाद्य विषय रहा है रुमाल प्रेमियों के बीच प्यार का प्रतीक है।[11] एक बद्धता प्रेम का आवश्यक गुण माना गया है।

सौदा चवनी को,
सौ साठ गैणुवा होला उजालो ज्वनी को।
नथूली को छेकू,
बैखुन दुन्या भरीं होली मन को एकू।

मन रूप का लोभी होता है और यौवन की रेखाएं काल के प्रवाह में मिटती जाती है नायिका द्वारा प्रेम की स्वीकृति की दशा में बाजूबंद का रुप बदल जाता है।

साग लायो कोजी,
त्वै सरी ज्वान मेरा घाघरों का बोजी।
नथूली को मूंगो,
तू कखन आई छोरा छौदाडू को सी ढुंगो।

प्रेम का शाश्वत रूप हमेशा अमर रहता है। सम्बद्ध टूट भी जाय इसके बाद भी भावनाएं बनी रहती हैं। रूप सौंदर्य की आराधना अनेक प्रकार से इन गीतों में देखी जाती है।[12]

गुड खायो माख्योंन,
और खांदा गिचीन तू खांदी आंख्योन।

प्रेम की अभिव्यंजना इन कीटों का मुख्य विषय है, लेकिन व्यक्तिगत जीवन के सुख–दुख अनमोल विवाह निर्धनता आदि अन्य विषय भी इन गीतों में दिखाई देते हैं।

गला को हार,
खाण नी देंदु सेण घर मू सौकार।
गुलेर की गारी,
दगडयौन सौंजडया पाई,
मिन कख हारी।

इन गीतों में अनुभूत सत्य की वाणी का विषय बन गया है इनमें प्रेम के व्यापक अनुभवों सत्य और रहस्यों का निरूपण किया गया है इनका गीत तत्व अत्यधिक सराहनीय है।

छूडा- छोपती लामण और बाजूबंद के बाद भी लोग गीतों का एक बड़ा भाग प्रणय गीतों की की श्रेणी में आता है, परंतु उसे इन वर्गों में नहीं रखा जाता है। ऐसे गीतों को छूडा कोटि में रखा जा सकता है। ऐसे गीतों में अन्य विषयों के साथ प्रेम का विषय में मुख्य रूप से रहता है सामान्यतया छूडा में चरवाहों की रसिक वृत्ति का चित्रण किया गया है

तू नस बौंर भेडुक नस डोखीर धाणी,
पिंची देंदु तु खाबुडी मुले चटियों पाणी।

दांपत्य जीवन के गीत- प्रेम और दांपत्य प्रेम में अंतर दिखाई देता है। पति पत्नी के प्रेम गीत इस श्रेणी में आते हैं। ऐसे अधिकांश गीत वियोग प्रधान हैं पत्नी से दूर पति अपने परिवार के भरण-पोषण के लिए प्रदेश में नौकरी व्यवसाय करता है, और दोनों का जीवन सूना, सूना रहता है। दांपत्य जीवन के अपने गीतों में पति-पत्नी के प्रणय को विश्वास के आधार पर भूमि पर चित्रित किया गया है।

ग्वरू मा की ग्वैन,
मैं जाूद मसूरी रै विचारी चैन।
जोगी को भेस,
शौंकारी हवैगे प्यारी हवैगे परदेश।
बाखरा की खाल,
नाक की नथूली घूलो न जा सुवा माल।

अवैध प्रेम की गीत- यहां की लोक साहित्य में ऐसे भी लोकगीत हैं जो ऐसे संबंधों पर आधारित है, जिनको समाज मान्यता नहीं देता है देवर-भाभी, जीजा-साली आदि संबंधों पर अनेक प्रणय संबंधी लोकगीत प्रचलित हैं।

घाम उडीक धारू चलीगे रै जाणू मेना आज यखी।
सुघडी की च माया लगीं, रै जाणू मेना आज यखी।

निष्कर्ष- छोपती, लामण, बाजूबंद, छूडा या अन्य प्रेम के जो भी गीत हैं, उन गीतों में रूप प्रणय का पहला आलंबन दिखाई देता है। प्रियतम को अनेक उपमाओं से संबोधित किया गया है। प्रेमी-प्रेमिका की भावनाओं को इन गीतों में व्यक्त किया गया है, मर्यादित प्रेम इन लोकगीतों का मुख्य विषय है। यह गीत सामाजिक रसिकता से पूर्ण होते हैं, और जीवन की वास्तविक घटनाओं पर आधारित होते हैं। जीवन की अनेक कटुताएं भी इन गीतों में व्यक्त होती हैं इन सभी लोकगीतों में प्रेम की भावना दर्शनीय है।

संदर्भ ग्रन्थ सूची-

1. डॉ. गोविन्द चातक गढवाली लोकगीत एक सांस्कृतिक अध्ययन तक्षशिला प्रकाशन नई दिल्ली 2003, पृष्ठ, 151
2. डॉ. गोविन्द चातक गढवाली लोकगीत एक सांस्कृतिक अध्ययन तक्षशिला प्रकाशन नई दिल्ली 2003, पृष्ठ, 152
3. डॉ. गोविन्द चातक भारतीय लोक संस्कृति सन्दर्भ मध्य हिमालय तक्षशिला प्रकाशन 1996, पृष्ठ, 176
4. डॉ. शिवानन्द नौटियाल गढवाल के लोकनृत्य और गीत अमित प्रकाशन गाजियबाद 1974, पृष्ठ, 135

5. डॉ. देव सिंह पोखरिया, लोक संस्कृति के विविध आयाम, अल्मोडा बुक डिपो, अल्मोडा 1994
6. वंशीराम शर्मा, हिमालयी लोक संस्कृति में स्रोत, आर्य प्रकाशन, दिल्ली 1986
7. डॉ. दिनेशचन्द्र बलूनी, उत्तरांचल संस्कृति लोकजीवन इतिहास, प्रकाश बुक डिपो, बरेली 2001
8. डॉ. डी. डी. शर्मा, हिमालयी संस्कृति के मूलाधार, इटा प्रकाशन, सोलक 1998
9. डॉ. गोविन्द चातक, भारतीय लोक संस्कृति, सन्दर्भ हिमालय तक्षशिला प्रकाशन 1996, पृष्ठ, 182
10. डॉ. डी. डी शर्मा, उत्तराखण्ड का सामाजिक एवं सांस्कृतिक इतिहास, उत्तरायण प्रकाशन हल्द्वानी, 2003, पृष्ठ, 05
11. डॉ. गोविन्द चातक, गढवाली लोकगीत एक सांस्कृतिक अध्ययन, तक्षशिला प्रकाशन 2003, पृष्ठ, 168
12. डॉ. गोविन्द चातक, लोक संस्कृति का सन्दर्भ मध्य हिमालय, तक्षशिला प्रकाशन 2003, पृष्ठ, 188

UGC Journal No. (Old) 2138
Peer-Reviewed Research Journal
Impact Factor 4.875, ISSN 0975-4083
Vol.- 24, Hindi Edition, Year-12, Oct. 2022- March 2023

हिन्दी मीडिया : प्रगतिशील चिन्तन की व्यवहारिक भूमिका

• वीरेन्द्र सिंह यादव

सारांश- वर्तमान की मीडिया सिर्फ अपने हित साधने का हथियार मात्र बनकर रह गई है। आज कितने ऐसे पत्रकार हैं जो जो निर्भीकता से यह कह सकें कि वह समाज के साथ हैं। सत्ता के साथ नहीं। इस बात को थोड़ा स्पष्ट तौर पर कहें, तो यह कहा जा सकता है कि आज कितने अखबार मालिक और उसके संपादक हैं, जो हलफ़ उठाकर कह सकें कि वे कितनी सच्चाई के साथ समाज के साथ हैं, सत्ता के साथ नहीं ? वर्तमान का यह पूरा परिदृश्य गंभीर पत्रकारिता करने वालों के लिए बहुत ही कठिन और चुनौतीपूर्ण है और इसके बदलने की फिलहाल कोई सूरत नजर नहीं आ रही है, बल्कि यह कहना अधिक सही होगा कि बदलाव की ईमानदार कोशिशें जैसी होनी चाहिए वे अभी तक किसी कोने से की ही नहीं गई हैं। युवा पीढ़ी के पास ना तो पत्रकारिता का नेतृत्व है और ना ही वर्चस्व उसे तो अपनी नौकरी बचाने की चिंता परेशान करती रहती है। ऐसे में वह क्या कर पाएगा, कोई सहज अनुमान कर सकता है! आज की पत्रकारिता का यह विशेष संकट को दौर कहा जा सकता है।

मुख्य शब्द - मीडिया,पत्रकारिता, प्रिंट,मीडिया, इलेक्ट्रॉनिक,भूमिका

मीडिया के वर्तमान परिदृश्य पर विचार करते समय यह आवश्यक है कि नकारात्मक प्रश्नों का जहाँ ध्यान रखना बेहद जरूरी है, वही जरूरत इस बात की भी है कि सकारात्मक पक्षों पर भी गंभीरता से विचार किया जाए। यह मानने में यहाँ कतई संकोच नहीं होना चाहिए कि पत्रकारिता का अधिक से अधिक समय और स्थान राजनीति में चला जाता है। वहीं यह भी मानना चाहिए कि साक्षरता के विस्तार तथा पंचायत राज एवं नगरीय प्रशासन की संवैधानिक व्यवस्थाओं ने सुदूर गाँव तक जागरूकता का विस्तार किया है। इसमें कोई दो राय नहीं की सही यह है कि "गाँव और किसान और उनका समाज मीडिया में लगभग हाशिए पर है,परन्तु चुनावों की राजनीति उन्हें पूरी तरह दर किनार नहीं करने देती। और मीडिया को भी उनकी बात कहनी पड़ती है।"[1]

वर्तमान परिप्रेक्ष्य में यह तो स्वीकार करना ही होगा कि आज का मीडिया एवं जन माध्यमों को एक मूल्यगत विश्लेषण की दरकार है, जिससे यह स्पष्ट हो सके कि (वह मीडिया, आज भी एक स्वतंत्र रचनात्मक भूमिका निभाने वाला स्तंभ है या फिर वह

• प्रोफेसर, हिन्दी एवं अन्य भारतीय भाषा विभाग, डॉ. शकुन्तला मिश्रा राष्ट्रीय पुनर्वास विश्वविद्यालय,लखनऊ,उ.प्र.

ज्यादातर राजनीति और अर्थव्यवस्था के प्रवक्ता की भूमिका निभाकर समाजनीति के मूल्यों को दरकिनार कर रहा है। ''यह कठिन दौर है फिर भी लोक माध्यमों में सक्रिय ऐसे कई संवादकर्मी हैं जो वास्तव में स्थान और प्रोत्साहन का अभाव होने के बावजूद कहीं ना कहीं से रास्ते निकाल रहे हैं, क्योंकि अबभी उनके जीवन में ऐसे मूल्य बचे हुए हैं जिनका समझौता करने के लिए वे तैयार नहीं हैं और संभवत यह हमारी सबसे बड़ी संभावना भी है। सोशल मीडिया ने यह विश्वास और पुख्ता किया है।''[2]

आखिर मीडिया को इतना क्यों महत्त्व दिया जाता है और मीडिया को चौथा स्तंभ यूँ ही क्यों कहा गया है। जब न्याय के सारे दरवाजे बंद हो जाते हैं, तब मीडिया ही एक मात्र ऐसा माध्यम बचता है जो किसी भी पीड़ित की मुक्ति का, उसके लिए न्याय का राजपथ मुहैया कराने में विशेष सहयोग करता है। फेक न्यूज़,पेड़ न्यूज, दलाली, ब्लैक मेलिंग, पीत लेखन लेकिन वर्तमान का जो कचरा मीडिया के धवल आसमान पर काले बादलों की तरह छाया हुआ दिखता है, वह उन्हें बहुत पीड़ित करता है, क्योंकि उन्होंने पत्रकारिता को बदलाव के एक उपकरण की तरह चुना था, न कि किसी व्यक्तिगत महत्वाकांक्षा के तहत।''[3]

ऐसे ही कई सवाल हैं, जो सतह पर नजर नहीं आते, किंतु जड़ों के साथ चिपटे पड़े हैं। कुछ घुन की तरह जड़ों को खोखला कर रहे हैं तो कुछ वातावरण को विषाक्त कर रहे हैं। यह सच है कि हम राजनीति, समाज और अर्थव्यवस्था को एक अलग नजरिए से देखते हैं। हमारे लिए केवल लाभ महत्वपूर्ण नहीं है, बल्कि इसमें शुभ का तत्व भी महत्वपूर्ण है। शुभ लोकाधिकारों की मान्यता और उनकी राजनीतिक स्वीकार्यता से जुड़ा हुआ है। ''वर्तमान का दौर विरोधाभासों का भी है, जहाँ हमारे मूल्यों और व्यवहारों में व्यापक अंतर नजर आया है, पर इसे चाहे जो कुछ कहा जाए, यह सवाल हमेशा खड़ा रहा है।''[4]

आज मीडिया पूरी तरह बदलाव के दौर में संघर्षरत है। 'मिशन' शब्द उसके शब्दकोश से लगभग गायब हो चुका है। वैवीकरण के दौर ने इसे सबसे ज्यादा प्रभावित किया है-समाज, देश पर नजर रखने वाला चौथा स्तम्भ बाजारवाद एवं कार्पोरेट के हाथों में समर्पित हो चुका है। बाजार ने मीडिया के पूरे स्वरूप को बदल डाला है। बदलाव के दो दशकों से अधिक समय को खंगालने से साफ पता चलता है कि मीडिया के अंदर व बाहर जो जबरदस्त बदलाव हुआ है, वह वैश्वीकरण की ही देन है। कंटेंट, तकनीकी, प्रस्तुति व प्रबंधन में जमीन-आसमान का अंतर दिखता है। पत्रकारों की विश्वसनीयता खतरे में है। और संपादक को प्रबंधक की भूमिका में आने के कथित आरोपों को यथार्थ एवं जीवंत रूप में देखा जा सकता है।

प्रिंट (मीडिया व इलेक्ट्रॉनिक मीडिया) कंटेंट, तकनीकी, प्रस्तुति व प्रबंधन के मामले में उस दौर को पीछे छोड़ चुका है, जहाँ वापस जाना अब नामुमकिन है। आज कंटेंट, तकनीकी, प्रस्तुति के साथ-साथ पत्रकारों में भी बदलाव आया है। फिल्मी दुनिया की तरह मीडिया की अपनी चमकीली दुनिया स्थापित होने से अब जुझारू पत्रकार (कांसेप्चुअल जर्नलिस्ट) ढूँढ़ने पर शायद ही मिलें। बदलाव के दौर में प्रबंधन ने पत्रकारों को बदल डाला है। आज वही मीडिया हाउस में टिक पाता है जो मीडिया हाउस

के लिए व्यवसाय कर सके या फिर उसके अनुरूप काम करें। कहा जा सकता है कि अच्छे पत्रकारों का दौर अब समाप्त की और की और है। लेखन के लिए जीने वाले पत्रकारों को अब प्रबंधन करना पड़ रहा है। पिछले कई साल में जो बड़ा बदलाव मीडिया में आया है। उसमें पत्रकारों का मासिक वेतन, पैकेज में तब्दील हो गया है।

पैकेज के खेल में आज पत्रकारों को करोड़पति, लखपति, हजारपति और कौड़ी पति बना दिया है। पत्रकारों को बड़ी जमात सरकारी चपरासी के लायक वेतन पाने से भी वंचित है। यही नहीं, बिना पैकेज, मानदेय के भी मीडिया हाउस में भारी संख्या में पत्रकार काम कर रहे हैं मतलब उन्हें एक कौड़ी नहीं मिलती है। "बड़े पत्रकार आज करोड़ों में खेल रहे हैं, छोटे पत्रकार बंधुआ मजदूर की तरह काम कर रहे हैं। प्रिंट और इलेक्ट्रॉनिक मीडिया में मानदेय एक मजाक बनकर रह गया है। छोटे पत्रकारों का मानदेय उन्हें रुलाता है तो वही बड़े पत्रकारों का मानदेय उन्हें आह्लादित करता है। हालांकि ऐसे पत्रकारों की गर्दन पर हमेशा तलवार लटकी रहती है। मीडिया हाउस का ग्राफ गिरा या उसके हित में काम से मुँह मोड़ा, बस नौकरी गई।"[5]

आज का मीडिया और समाचार माध्यम वर्तमान युग का सजग प्रहरी है, जो समाज पर पैनी दृष्टि रखकर उसे ना सिर्फ निर्देशित करते हैं, बल्कि उस पर अंकुश लगाने के कार्य भी गंभीरता के साथ करते हैं। प्रजातांत्रिक देशों में पत्रकारिता को प्रजातंत्र का आवश्यक अंग मानते हुए उसे जनतंत्र के रक्षक के रूप में परिभाषित किया जाता है। नेपोलियन ने समाचार माध्यमों के इसी प्रभावी स्वरूप के संदर्भ में कहा था कि चार कि विरोधी अखबारों का भय एक हजार बयोनट से भी बड़ा होता है।

समाचार पत्रों के संदर्भ में नेपोलियन का यह कथन समाचार माध्यमों की महत्वता और उसकी क्षमता को स्पष्ट करने के लिए पर्याप्त है। भारत जैसे विशाल प्रजातांत्रिक देश में भी पत्रकारिता को प्रजातंत्र के पहरुआ के रूप में यथेष्ट स्थान दिया है। प्रजातंत्र को जनतंत्र भी कहा जाता है। जनतंत्र के विषय में कहा गया है कि यह वह शासन प्रणाली है जिसमें शासन का संचालन जनता द्वारा जनता के लिए ही किया जाता है। यह सच है भारत विश्व का सबसे बड़ा प्रजातांत्रिक देश है। अतः भारत में प्रजा या नागरिकों के हितों को ही सर्वोपरि स्थान दिया गया है। पत्रकारिता समाज का एक अति महत्वपूर्ण एवं आवश्यक अंग हैं, क्योंकि इसका उद्देश्य एवं अस्तित्व दोनों ही समाज पर आधारित है। समाज, नागरिकों का ही एक समूह है। अतः यह कहना न्याय संगत होगा कि भारत जैसे प्रजातांत्रिक देश में समाज के प्रति पत्रकारिता का एक अहम दायित्व होता है। "स्वतंत्रता के पूर्व ही समाचार माध्यमों ने देश व समाज के प्रति अपने अहम् दायित्यों का कुशलता से निर्वहन किया है। आजादी के संघर्ष में पत्रिका के योगदान को कभी विस्मृति नहीं किया जा सकता। यह बात वर्तमान में शायद अकल्पनीय लगे, परन्तु यह सत्य है कि देश की स्वतंत्रता में समाचार माध्यमों की भूमिका सबसे महत्वपूर्ण रही थी। आजादी समाचार माध्यमों की इसी विशेष भूमिका के कारण ही संभव हो सकी थी।"[6]

पत्रकारिता के सामाजिक दायित्यों की यदि चर्चा की जाए तो स्पष्ट होगा कि पत्रकारिता के दायित्यों में समय और परिस्थितियों के अनुरूप परिवर्तन होता रहता है। अतः पत्रकारिता अपने इन्हीं परिवर्तनों के अनुरूप स्वयं के उद्देश्यों और स्वरूप में

बदलाव लाकर देश व समाज के प्रति अपने दायित्वों का निर्वहन करता रहा है। "देश व समाज के विकास में सहभागी बनाना पत्रकारिता का ही एक प्रमुख दायित्व होता है। सच है कि समय और परिस्थितियों के अनुरूप पत्रकारिता के दायित्यों का परिवर्तन अवश्य आता है, परन्तु पत्रकारिता के कुछ दायित्व ऐसे होते हैं,जिनपर देश-काल का कोई प्रभाव नहीं पड़ता,अर्थात सभी उद्देश्य प्रत्येक परिस्थितियों में एक समान स्थित में रहते हैं।"[7]

वर्तमान पत्रकारिता में आए क्षरण की कोई निश्चित वजहों में से एक पत्रकारीय मूल्यों का क्षरण भी एक है। क्रांति और सजगता के प्रतीक भारत में इसे शिद्दत से महसूस किया जा रहा है। कई-कई सवालों के घेरे में लोकतंत्र के चौथे स्तंभ यानी पत्रकारिता पर आरोप यह भी लग रहे हैं कि लोकतंत्र की अन्य संस्थाओं की तरह यह भी अपनी मर्यादा को लाँघ रही है। "पत्रकारिता लोकतंत्र के अन्य तीन स्तंभों कार्यपालिका, न्यायपालिका और विधायिका का पहरुआ माना जाता है और यह दायित्व भारतीय संदर्भ में हिंदी पत्रकारिता का कुछ अधिक ही है,क्योंकि वृहत्तर भारत की बड़ी जनसंख्या इसे बोलती-समझती है।"[8]

बदलते राजनीतिक परिदृश्य में जब अधिकतर अखबार मालिकों की प्राथमिकता ही बदल गई हो, तो भला पत्रकार किस खेत की मूली हैं। टाइम्स ऑफ इंडिया के मैनेजिंग डायरेक्टर विनीत जब खुलेआम यह कहते हैं, कि आज हम समाचार-पत्र उद्योग में नहीं, बल्कि विज्ञापन उद्योग में जी रहे हैं। "अगर आपके मुनाफे का नब्बे फ़ीसदी हिस्सा विज्ञापन से आता है तो अर्थ स्पष्ट है कि आप विज्ञापन के व्यापार एवं कारोवार में हैं।"[9] इसके अलावा हिंदी पत्रकारिता के लिए इसे दुर्भाग्यपूर्ण ही कहा जाएगा कि जो अच्छे युवा प्रतिभाशाली पत्रकार हैं, वे अब या तो मौका मिलने पर इलेक्ट्रॉनिक मीडिया की ओर पलायन कर रहे हैं या मौका मिला तो अंग्रेजी अखबारों में भी कही भी जा सकते हैं, वहाँ चले जाते हैं। वैसे महानगरों व बड़े शहरों में पत्रकारिता में आने वाली युवा पीढ़ी में अधिकतर की प्राथमिकता अब इलेक्ट्रॉनिक मीडिया या अंग्रेजी पत्रकारिता बन गई है। हाँलाकि अभी तक हिंदी पत्रकारिता ने ऐसा कोई आदर्श प्रस्तुत भी नहीं किया, जिससे पत्रकारिता करने वाली युवा पीढ़ी उसकी तरफ आकर्षित हो।

हिंदी पत्रकारों के सामने विकल्प इतने कम और सीमित हैं कि उसका फायदा मीडिया मालिक आसानी से उठा रहे हैं। बेरोजगारी इस कदर बढ़ी है कि सस्ते में युवाओं की अकूत ऊर्जा व श्रम का लाभ आसानी से अखबार को मिल जाता है। आज का मूल मंत्र यह भी है कि पैसा कम खर्च करना पड़े व मुनाफा अधिक हो। अधिकतर हिंदी अखबारों के पुरे चरित्र में एक हलकापन रहता है, इसलिए उन्हें बेहतर उप संपादकों व अच्छे संवाददाताओं की जरूरत नहीं पड़ती। इसमें कोई दो राय नहीं कि इनकी प्राथमिकता व उद्देश्य एन-केन-प्रकारेण अधिक से अधिक मुनाफा कमाना है।

हिंदी पत्रकारिता में अब पहले जैसी वैसी कोई परंपरा ही नहीं बची है, जिसमें पुरानी पीढ़ी नई पीढ़ी को तैयार करती थी। यहाँ युवा पीढ़ी को बेहतर संपादन करने से लेकर बेहतर रिपोर्ट लिखने तक के हुनर सिखाए जाते थे। उन्हें एक बेहतर वाला पत्रकार बनाया जाता था। अब हिंदी अखबारों में जो थोड़े बहुत कुछेक पुराने लोग बचे भी हुए हैं तो वह खुद ही इतने निराश व हताश हो चुके हैं कि "उन्हें खुद को बचाए रखना मुश्किल हो

रहा है। अगर आप हिंदी अखबारों में काम करने वाले पत्रकारों से बात की जाए या उनके बारे में मालूम करें तो जो भी अच्छे पत्रकार हैं, चाहे वह युवा हों या फिर उम्रदराज, उनमें से अधिकतर से आमजन को हताशा व निराशा ही नजर आएगी।''[10]

आज के परिवेश में आम आदमी यह तंज कसते हुए पाए जाते हैं कि 'गाँधी जी के तीन बंदर आज मीडिया के आदर्श बने हुए हैं, हमने तय कर रखा है कि हम ना बुरा देखेंगे, ना सुनेंगे और ना बोलेंगे। यह हमारी कारपोरेट पत्रकारिता है, जिसका मुख्य जुमला आशा और खुशहाली हो, 'होप एंड हैप्पीनेस' है, यानी अखबार के पृष्ठों पर कोई भी ऐसी खबरें ना देखें, जिससे समाज में निराशा और परेशानी झलके इसलिए भूख, गरीबी, शोषण, कुपोषण, बीमारी, महामारी, बाढ़, सूखा आदि से हुई तबाही की खबरें अखबार के पन्नों पर ढूँढ़े नहीं मिलती हैं। अगर खबर छापी भी जाती है तो अंदर के पृष्ठों के किसी कोने में। पत्रकारिता के इस चलन ने हमें हमारे सरोकारों से, अपनों से, कर्तव्यों और दायित्वों से काट दिया है। यह एक गहरी साजिश है, पत्रकारिता के मूल उद्देश्यों और सामाजिक दायित्वों को विलोपित करने की। मीडिया के कारपोरेट घरानों को इसमें काफी हद तक सफलता भी मिली है। तीन बाई चार फीट के शीशे से गिरे तथाकथित केबिन में दीवार की तरफ मुँह करके बैठने वाला हमारा पत्रकार साथी केवल अपने आप से ही नहीं, बल्कि अपने आजू-बाजू से भी आज कट गया है। कई-बार तो बगल में बैठे अपने सहयोगी से बात किये हुए उसे कई कई दिन हो जाते हैं। घर-परिवार, नाते-रिश्ते, अड़ोस-पड़ोस की भी उसे शुध नहीं रहती है। इसे 'परिणामी पत्रिकारिता' (Result Oriented Jouranalism) रिजल्ट ओरिएंटेड जर्नलिस्म का नाम दिया गया है। हमने खुशी से इसे स्वीकार भी कर लिया है। हिंदी पत्रकारिता के इस बदलते परिदृश्य व हल्केपन के वर्तमान दौर में फिर वही लोग डोमिनेट करते हैं, जिनके सामने ना कोई आदर्श हैं और ना ही कोई मूल्य। सब कुछ शॉर्टकट से मिल जाए, इसमें जो युवा पीढ़ी आ रही है, उसमें बड़ी संख्या में ऐसे लोग आ रहे हैं, जिनका पढ़ने-लिखने से कोई सरोकार नहीं है। सच्चाई तो यह है कि पढ़ने की प्रवृत्ति तो लगातार समाप्त होती जा रही है।

इधर पत्रकारिता जगत में एक शब्द का काफी धड़ल्ले से आपसी बातचीत में प्रयोग किया जाता है-'वह है रैकेटियर यानी लघुमानव के इस दौर में पत्रकारिता जगत में इस रैकेटियर बिरादरी के पत्रकारों की संख्या भी अच्छी खासी बढ़ रही है,जो पत्रकारिता के नाम पर मालिकों के हित साधने के साथ-साथ अपना हित भी साधती रहती है। असल में आज स्वार्थ की पत्रकारिता की प्रवृत्ति भी उत्तरोत्तर बढ़ रही है। अधिकतर अखबारों के मालिक ही अब स्वयं संपादक भी हो गए हैं। जहाँ संपादक हैं भी, तो वहाँ उनका कद काफी गिर चुका है। अब सुलझे एवं विद्वान संपादकों की जगह कुपढ़ संपादकों ने ले ली है।'[11]

सबसे गंभीर बात यह है कि आज मीडिया (पत्रकारिता) के संदर्भ में सामाजिक दायित्व का प्रश्न केवल पत्रकारिता का प्रश्न ही नहीं है, वह सामाजिक बदलाव का राजनीतिक, सामाजिक और सांस्कृतिक प्रश्न भी है। ''पत्रकारिता इसमें अपनी सकारात्मक भूमिका तभी निभा सकती है जब उसके पीछे राजनीतिक सामाजिक बदलाव की ताकतें भी मौजूद हों।''[12] पत्रकारिता के इस संक्रमण काल में वर्तमान में इसके लिए व्यापक जन आंदोलन की आवश्यकता है,इसके लिए केवल राजनीतिक नहीं वरन

सामाजिक आंदोलन भी। इसके अभाव के कारण ही प्रतिगामी ताकतें परंपरा के नाम पर जनता को लामबंद करने में कामयाब हो जाती हैं। एक मिथक को ऐतिहासिक घटना का रूप देना और इसके लिए इतना बड़ा आंदोलन खड़ा करना, अब यह आम बात हो गयी है, क्योंकि धर्म प्राण जनता के बीच अविवेकपूर्ण समझ पहुँचाने की आंदोलनात्मक कोशिशें सदैव होती रहीं हैं। विगत वर्षों में केरल जैसे अपेक्षाकृत प्रगतिशील राज्य में धार्मिक स्थलों में स्त्रियों के प्रवेश पर लगे हुए प्रतिबंधों पर सर्वोच्च न्यायालय के फैसले को लागू करवाना राज्य सरकार के लिए बहुत ही मुश्किल सा कार्य हो गया और स्वयं सर्वोच्च न्यायालय पर इतना दबाव पैदा कर दिया गया कि वह अपने ही फैसले पर पुनर्विचार करने को मजबूर हुआ। वर्तमान समय में पत्रकारिता के सामने बहुत सी चुनौतियाँ हैं जो आजादी के बाद से कभी उपस्थित नहीं रहीं। सांप्रदायिक आधार पर नागरिकता के कानून में संशोधन, नागरिकता रजिस्टर के माध्यम से गरीब लोगों के सामने नागरिकता साबित करने की चुनौती जैसे मसले इससे पहले कभी सामने नहीं आए। उनका मुकाबला पत्रकारिता तभी कर सकती है जब संविधान के बुनियादी उसूलों के प्रति न केवल प्रतिबद्धता हो बल्कि भारत के संपूर्ण जनता के प्रति दायित्व का भाव भी हो।

संदर्भ ग्रन्थ सूची-

1. प्रवीर राकेश-मीडिया का वर्तमान परिदृश्य-ज्ञान गंगा प्रकाशन, नयी दिल्ली-2020-भूमिका-पृष्ठ 7,8,9
2. प्रवीर राकेश-मीडिया का वर्तमान परिदृश्य-ज्ञान गंगा प्रकाशन, नयी दिल्ली-2020-पृष्ठ संख्या 18
3. प्रवीर राकेश-मीडिया का वर्तमान परिदृश्य-ज्ञान गंगा प्रकाशन, नयी दिल्ली-2020-पृष्ठ संख्या 11
4. प्रवीर राकेश-मीडिया का वर्तमान परिदृश्य-ज्ञान गंगा प्रकाशन, नयी दिल्ली-2020-पृष्ठ संख्या 15
5. कुमार संजय-मीडिया महिला, जाति और जुगाड़-प्रभात प्रकाशन, नई दिल्ली-2017-पृष्ठ संख्या 63
6. कुलश्रेष्ठ संदीप-भारत में प्रिंट इलेक्ट्रॉनिक और न्यू मीडिया-प्रकाशन प्रतिभा प्रतिष्ठान, नई दिल्ली, सं-2018-पृष्ठ संख्या 186
7. कुलश्रेष्ठ संदीप-भारत में प्रिंट इलेक्ट्रॉनिक और न्यू मीडिया-प्रकाशन प्रतिभा प्रतिष्ठान,नई दिल्ली, सं- 2018-पृष्ठ संख्या 1878.
8. प्रवीर राकेश-मीडिया का वर्तमान परिदृश्य-ज्ञान गंगा प्रकाशन,नयी दिल्ली-2020-पृष्ठ संख्या 74
9. प्रवीर राकेश-मीडिया का वर्तमान परिदृश्य-ज्ञान गंगा प्रकाशन,नयी दिल्ली-2020-पृष्ठ संख्या 77
10. प्रवीर राकेश-मीडिया का वर्तमान परिदृश्य-ज्ञान गंगा प्रकाशन,नयी दिल्ली-2020-पृष्ठ संख्या 79
11. प्रवीर राकेश-मीडिया का वर्तमान परिदृश्य-ज्ञान गंगा प्रकाशन,नयी दिल्ली-2020-पृष्ठ संख्या 80
12. तद्भव-पत्रकारिता : यथार्थ,आभास और दु:स्वप्न-संपादक-अखिलेश-18/201,इंदिरा नगर,लखनऊ, पृष्ठ संख्या 46

UGC Journal No. (Old) 2138
Peer-Reviewed Research Journal
Impact Factor 4.875, ISSN 0975-4083
Vol.- 24, Hindi Edition, Year-12, Oct. 2022- March 2023

लोकगीतों में छुपा इतिहासः 1857 की क्रांति के विशेष संदर्भ में

• भूपेश
•• पूजा साहू

सारांश- लोकगीत, लोककथाएं, कविताएं और गीत हर देश की लोकप्रिय स्मृति का एक महत्वपूर्ण स्रोत हैं और भारत इसका कोई अपवाद नहीं है। ये वास्तव में एक विशेष समय में सामाजिक और राजनीतिक घटनाओं के प्रति समाज की राय, विश्वास और समग्र प्रतिक्रिया को दर्शाते हैं और एक ऐतिहासिक घटना के संदेश को आगे बढ़ाते हैं। लोकगीत लोक साहित्य का एक अनिवार्य व महत्वपूर्ण अंग है। इसका संबंध साधारण ग्रामीण समाज के लोगों के दैनिक जीवन के साथ-साथ समुदायिक चेतना से भी होता है क्योंकि यह छोटे कस्बों, शहरों से लेकर महानगरों तक भी अपनी पैठ बनाए हुए है। अट्ठारह सौ सत्तावन की जंगे आजादी के दौरान विभिन्न भारतीय भाषाओं के लोकगीतों में अंग्रेजी हुकूमत से मुक्ति के लिए संघर्ष की ध्वनियां सुनाई पड़ती हैं। 1857 और 1859 के बीच रचित विभिन्न प्रकार के लोकगीतों में लोकप्रिय और मौखिक स्मृति को संग्रहीत किया गया था। इन्हें अगली पीढ़ी को मौखिक रूप से प्रेषित किया गया और जीवित रखा गया। इन गीतों ने जनसमुदायों में नई चेतना लाने और नए विचारों को जन्म देने में मदद की। ये लोकगीत भोजपुरी, अवधी, मगधी, बुंदेलखंडी, राजस्थानी एवं हरियाणवी आदि अनेकों भाषाओं में उपलब्ध हैं जिनमें स्वराज, स्वतंत्रता, हिंदू मुस्लिम एकता जैसी भावनाएं एवं स्वतंत्रता सेनानियों की वीरगाथाएं छिपी हुई हैं। प्रस्तुत शोध पत्र द्वारा लोकगीतों के माध्यम से 1857 की क्रांति के अनेक पहलुओं को प्रस्तुत किया गया है। इन लोकगीतों से क्रांति की रोचक जानकारियां हमें प्राप्त होती हैं। जिनका अध्ययन कर हम क्रांति के वास्तविक स्वरूप को समझ सकते हैं।

मुख्य शब्द - क्रांति, लोकगीत, स्वराज, ब्रिटिश सरकार, गदर 1857

परिचय- 1857 का युद्ध एक जन-युद्ध था, जिसमें साधारण जनता ने बढ़-चढ़कर भाग लिया और बाद में वही सबसे भयावह दमन के दौर से गुजरी। इस जन-युद्ध में भारत के हिंदुओं और मुसलमानों, पुरुषों और स्त्रियों ने अंग्रेजी राज के विरुद्ध युद्ध किया था। इसमें सभी जातियों, पेशों और भिन्न भिन्न हैसियत के लोग शामिल थे। हम जानते हैं कि 1857

• असिस्टेंट प्रोफेसर, एन. बी. जी. एस. एम. कॉलेज, सोहना (हरियाणा)
•• शोधार्थी, इतिहास एवं पुरातत्व विभाग, महर्षि दयानन्द विश्वविद्यालय, रोहतक (हरियाणा)

के विद्रोह का कोई एकीकृत लक्ष्य नहीं था। मुसलमानों ने विद्रोह का सहारा लिया क्योंकि वे मुगल साम्राज्य को फिर से बहाल करने के इच्छुक थे, हिंदुओं ने विद्रोह किया क्योंकि वे सामंती तत्वों को फिर से सक्रिय करने के लिए उत्सुक थे, सिपाहियों ने उन दिनों की बदतर कानून व्यवस्था के विरुद्ध विद्रोह किया था।

कंपनी के शासन के तहत ब्रिटिश हितों के अनुरूप अनेक सामाजिक-आर्थिक बदलाव किए गए, जिसके कारण महिलाओं, जमींदारों, किसानों, पूंजीपतियों, व्यापारियों, कारीगरों, शिल्पकारों और आम लोगों सहित विभिन्न भारतीय वर्गों को पीड़ित होना पड़ा। इससे वे सभी एक साथ नाराज हो गए। एकतावादी राष्ट्रवाद की भावना से प्रेरित होकर वे 1857 के विद्रोह में भाग लेने के लिए तैयार हुए।[1] सन् 1842 से लेकर 1857 तक बुंदेले हरबोलों ने गांव-गांव और घर-घर जाकर लोगों के ह्रदय में आजादी की अलख जगाई थी। इन्हीं हरबोलों का संदर्भ सुभद्रा कुमारी चौहान ने अपनी चर्चित कविता में यूं किया था-

'बुंदेले हरबोलों के मुख से सुनी कहानी थी
खूब लड़ी मर्दानी वो तो झांसी वाली रानी थी।'[2]

अंग्रेजों की अत्याचारी नीतियों से परेशान होकर ही भारतीयों ने विद्रोह किया था। बहुत सारे अंग्रेजों ने पहले से ही ब्रिटिश ईस्ट इंडिया कंपनी की नीतियों की आलोचना करनी शुरू कर दी थी। कंपनी की शोषणकारी नीतियों की आलोचना करते हुए एक अंग्रेज कवि ने 1833 में 1857 के महाविद्रोह की भविष्यवाणी करते हुए अंग्रेजी राज को अपनी कविता "इंडिया" द्वारा इन शब्दों में सावधान किया था-

क्या तुम यह जानते हो कि
कैसा जल-प्रलय आ रहा है
चक्करदार लहरें तुम्हें चारों और से घेर रही हैं
मैं तुम्हें आने वाले प्रलय से सावधान कर रहा हूँ
ओ ब्रिटेन ! इसे रोको, ये रक्त की लहरें हैं।[3]

1857 के विद्रोह को एक सीमित विस्तार वाला मात्र एक सिपाही विद्रोह मानना मिथ्या है। विद्रोह वास्तव में एक लोकप्रिय विद्रोह था जो देश के व्यापक क्षेत्र में फैल गया था। उदाहरण के लिए पूर्वी बंगाल के चटगाँव में हाल ही में एक घटना की सूचना मिली है जिसका संदर्भ हमें गोपाल प्रधान द्वारा लिखित एक स्थानीय लोककथा में मिलता है। वह हमें बताते हैं कि बांग्लादेश के चटगाँव की सैन्य छावनी में विद्रोह हुआ था और विद्रोही सैनिकों ने राजा जयंतिया से मिलने के लिए त्रिपुरा के रास्ते मेघालय पहुँचने की कोशिश की थी। त्रिपुरा के सिलचर पहुंचने पर वे बदरपुर के जंगलों और पहाड़ियों में रास्ता भटक गए। गुप्तचरों से सूचना पाकर अंग्रेज सेना ने उन्हें मार गिराया और उनकी वीरता की प्रशंसा आज तक लोककथाओं में की जाती है।[4]

जन भागीदारी- इसमें कोई शंका नहीं है कि 1857 की क्रांति में सैनिकों, नागरिकों, राजाओं और रंकों, हिंदुओं और मुसलमानों सहित सभी लोगों ने समान रूप से भाग लिया। अवध के मामले को ही लें, इसमें न केवल नवाब वजीर ने भाग लिया था, बल्कि अवध में ताल्लुकदारों, सैनिकों और उनकी लगभग हर प्रजा ने भाग लिया था। भारत की रियासतों

और ब्रिटिश भारत के लोग विद्रोहियों के साथ पूरी सहानुभूति और समर्थन में खड़े थे। मियागंज, लखनऊ, कानपुर, सुल्तानपुर के जनमानस बिना किसी सैन्य लड़ाई के विद्रोहियों में वीरतापूर्वक शामिल हो गए और स्वयं चार्ल्स बॉल सहित अंग्रेजों से सम्मान प्राप्त किया।[5]

हमारा लोक साहित्य उच्च या निम्न वर्ग, जाति और रैंक के कई ज्ञात और अज्ञात लोगों के नामों से भरा हुआ है, जिन्होंने 1857 में बहादुर शाह जफर, उनके पुत्रों, अवध की बेगम हजरत महल, रानी लक्ष्मी बाई, नानासाहेब, तात्या टोपे, अजीमुल्ला खान, कुंवर सिंह, पद्माकर की रानी भवानी, गोंडा के राजा देवी बक्श, रायबरेली के राणा बेनी माधव, आउआ के राजा खोशाल सिंह, बड़ौत के शाहमल, मथुरा के देवी सिंह, नागपुर के कोल जनजाति के आदिवासी गोनू, उत्तर प्रदेश के मौलवी अहमदुल्ला शाह, मंगल पांडे और उनके भाई अमर सिंह, पटना के पीर आलम, खानपुर के मर्दन सिंह, बहादुर सिला देवी, श्यामलगिरी आदि नेताओं का साथ दिया। लोक साहित्य उनके वीरतापूर्ण कार्यों, युद्ध कौशल, साहस, वीरता, निडरता और बलिदान की प्रशंसा करता है। क्रांतिकारियों के साहस की स्तुति करने वाले कुछ लोकगीत और गीत इस प्रकार हैं–

अवध मा राणा भयो मरदाना
पहलराय भाई बक्सर मा सेमरी के मैदान...
हाथ मां भाला बगल सिरोही घोरा चले मस्ताना
कहे 'दुलारे' सुन मोर प्यारे यो राणा कियो पियाना।[6]
राजा देबी बक्स लोह वंका
जिन्का रत्ती भर न संका
बही बाजवाई दीन है डंका
श्यामलगिरी भोराई आ धमके
तीन सहस नाथू ले धाये, अंग्रेजां पे दमके
ढोल बाजे, थाली बाजे, भेलो बाजे बंकियो
अजंत ने ओ मरने दरवाजाजे नाकियो
जुझे आओ! जुझे आओ
आओ मुल्कन में चावो ओ
जूझे आवो !![7]

लोककथाओं का एक रूप, "पटिया" महिलाओं सहित लोगों को विद्रोहियों में शामिल होने के लिए प्रेरित करता है और उनसे अपने जीवन का बलिदान करने की अपील करता है और महिलाओं को "अपनी चूड़ियाँ तोड़ दों, अपने माथे से सिंदूर मिटा दों" आदि पंक्तियों के माध्यम से अपने गुलाम देश के लिए विधवाओं की भूमिका निभाने के लिए कहता है। इन भावनाओं को व्यक्त करने वाली पटिया की कुछ पंक्तियाँ इस प्रकार हैं–

बन जा गनवाय का नेवता
चुरल फोरवाई का नेवता
सिंदूर पुछवाई का नेवता

जेई हो हमार ते माथ देल देल
जेई हो हमार ते साथ।[8]

ब्रिटिश जुए से मुक्ति की आकांक्षा गोंड़ों के बीच एक लोकप्रिय नारा था और यह उनके लोकप्रिय लोक गीत के रूप में परिलक्षित होता है–

हम भारत के गोंड – बैंगा, आजादी ख्यार
अंग्रेजन ला मार भगाओ, भारत ले रे
हम भैया छाती अड़ाओ, हम तो खून बहाओ भारत ख्यार
अंग्रेजन ला मार भगाओ, भारत ले रे।[9]

भारत के किसानों ने भी गदर में बढ़–चढ़कर भाग लिया था किसानों के ह्रदय में अंग्रेजों की भू राजस्व नीतियों एवं जबरदस्ती राजस्व वसूली आदि यातनाओं को लेकर विद्रोह की अग्नि धधक रही थी जो गदर के रूप में सामने आई। किसान वास्तव में घोर यात्ना एवं दुर्दशा से गुजर रहे थे जिसका वर्णन मनोरंजन प्रसाद सिंह ने अपने एक भोजपुरी गीत में किया है–

अन्न धान जन बाल बुद्धि सब नाश भाएल,
कउनो के ना राएल निशान रे फिरंगिया
जहवा थोरे दिन पहले ही होत रहे,
लाखे मन्न, गल्ला और धान रे फिरंगिया
उन्हें आज हाये रामा, मथवान पर हाथ डारी
बिलाखी के रोवेला किसान रे फिरंगिया।[10]

पंजाब के किसानों को पंजाबी कवि, शाह मोहम्मद द्वारा औपनिवेशिक हितों की सेवा के लिए ब्रिटिश उत्पीड़न के खिलाफ आगाह किया गया था, जो इस प्रकार है–

उहिले नाल न बेथ के गल करनी। कड़ी आप्नी नाल महस्ते
शाह मोहम्मद दौलतन जमा करदा, शंकर दा पुत्त गुमास्ते।[11]

हिंदी क्षेत्र की विभिन्न लोकभाषाओं के लोकगीतों के रचनाकार किसान ही थे। प्रस्तुत भोजपुरी लोकगीत में अंग्रेजी राज के कुराज के प्रभाव का वर्णन किया गया है जिसमें अंग्रेजी राज की स्पष्ट तस्वीर उभरकर सामने आती है।

हो गइली कंगाल हो विदेसी तोरे रजवा में
सोने की थारी जहाँ जेवना जेंवत रहनी
कठवा के डोकिया ले भइलीं मुहाल
भारत के लोग आजु दाना बिनु तरसे भइया
लन्दन के कुतवा उड़ावे मजा माल
हो विदेसी तोरे रजवा में।[12]

गदर के दौरान हमें हिंदू मुस्लिम एकता की मनोहर झांकी देखने को मिलती है। पंजाबी कवि शाह मुहम्मद इन शब्दों में हिंदू मुस्लिम एकता की प्रशंसा करते हैं–

राजी बहुत रहेंदे मुसलमान हिंदू
सिर दोहन दे उत्थे आफत आई
शाह मुहम्मदा विच पंजाब दे जी

कड़े नहीं सी तीसरी जात आई।[13]

बादशाह ने हिंदू-मुस्लिम बंधन पर भरोसा किया जो निश्चित रूप से अंग्रेजों पर उनके शासन को समाप्त करने के लिए भारी पड़ेगा क्योंकि वह गाते हैं-

गाजियों में बू रहेगी जब तलक इमाम की
तब तो लंदन तक चलेगी तेग हिंदुस्तान की।[14]

अवध की बेगम हजरत महल ने 1 नवंबर, 1858 को लोगों को विद्रोह में भाग लेने का आह्वान करते हुए एक घोषणापत्र जारी किया था जिसमें वादा किया गया था कि बिना किसी भेदभाव के कानून की नजर में सभी के साथ समान व्यवहार किया जाएगा, सभी के हितों की अच्छी तरह से रक्षा की जाएगी और समान अवसर दिए जाएंगे। योग्यता के आधार पर नौकरियों की पेशकश की जाएगी। बेगम देश की आजादी के लिए तरस रही थीं और उन्होंने भारतीयों से अपील की कि जब तक इसे हासिल नहीं कर लिया जाता तब तक उन्हें आराम नहीं करना चाहिए। बेगम हजरत महल द्वारा अवधी में एक गजल में भारत की आजादी की इच्छा व्यक्त की गई है-

इक तमन्ना थी कि आजाद वतन हो जाए
जिसने जीने ना दिया चैन से मरने ना दिया।[15]

बेगम हजरत महल की यह गजल उनके देश प्रेम को उजागर करती है। उन्होंने क्रांति के समय असीम बहादुरी राजनीतिक सूझबूझ एवं दूरदर्शिता का परिचय दिया। लंदन के अखबार 'दी टाइम्स' ने 1858 में बेगम हजरत महल के बारे में ठीक ही लिखा था, "अवध की बेगम ने अपने सभी सेनानायकों से अधिक युद्ध कौशल और साहस का परिचय दिया है।"[16] अजीम-उल्लाह खां के वीरतापूर्ण गीत से भारत की आजादी की ललक स्पष्ट होती है:

आज शहीदों ने है तुमको अहले वतन ललकारा
तोड़ो गुलामी की जंजीरें बरसाओ अंगारा
हिंदू मुसलमान सिख हमारा भाई भाई प्यारा
ये हैं आजादी का झंडा इसे सलाम हमारा।[17]

विद्रोह में कुछ रियासतें ऐसी थी, जिनमें मातृभूमि के प्रति वफादारी की कमी पाई गई। इस सूची में ग्वालियर के सिंधिया, हैदराबाद के निजाम, इंदौर के होल्कर, जयपुर के महाराजा, जोधपुर के महाराजा, रामपुर के नवाब, रीवा के राजा, रतलाम के राजा, टिहरी के महाराज, टोंक के नवाब, भोपाल के नवाब, पटियाला के महाराजा, जींद के राजा, नबाह के राजा, कपूरथला के राजा, पटौदी के नवाब, जम्मू-कश्मीर के राजा को शामिल किया गया है। 1857 में अंग्रेजों का समर्थन करने के लिए हमारी कविताओं और गीतों में उनकी निंदा की गई। रामविलास शर्मा की एक कविता में ब्रिटिश समर्थकों की निंदा इस प्रकार स्पष्ट है-

धरती के मालिक हैं सब गद्दार गदर के
जमीदार तालुकेदार सुंदर शरीर पर खुश्त रोग के।[18]

भारतीय राजकुमारों के अलावा, कई सरदारों की देशद्रोही के रूप में आलोचना की गई, जिन्होंने मूल निवासियों के सशस्त्र विद्रोह को बढ़ाने या समर्थन करने के लिए

साहस का कोई संकेत नहीं दिखाया और जिन्होंने इसके बजाय कायरों के रूप में अंग्रेजों का पक्ष लिया। ऐसे गद्दारों से संबंधित अवधी लोकप्रिय कविता और कौरवी लोक गीत के अंश इस प्रकार हैं–

भाई बंध और कुटुंब कबीला सबका करों सलामा
तुम तो जाए मिलियों गौरा हुमका हैं भागवाना
गंगाराम यहूदी ने जी देखो तो क्या काम किया
अंग्रेजों से मिला रहा और लड़ने का बस नाम किया
फौज ने मांगा खाने को ना उनको कोई काम दिया
भूखे लड़ते रहे गाजी और किनको सुमु साम किया।[19]

भोजपुरी लोकगीतों में से एक इस प्रकार हमारा ध्यान अंग्रेजों के धोखेबाज कृत्यों के बारे में लोगों की जागरूकता की ओर आकर्षित करता है, जिन्होंने लोगों को पुरस्कारों से लुभाने की कोशिश की।

तोहफा देवो, इनाम देवो
यह के राजा बनालब थे
फिरंगिया रे
मोसे ना चली तोर चतुराई।[20]

हाल की खोजों से यह बात सामने आई है कि उस युद्ध में भारतीय पक्ष की पराजय का एक बड़ा कारण असंख्य भारतवासियों का देशद्रोह था, जिसका उल्लेख इस लोकगीत में है। गदर के गद्दारों का उल्लेख एक और लोकगीत में भी है। गदर के गद्दारों की चर्चा इस भोजपुरी गीत में की गई है–

रामा देशवा के कुछ त अदिमिया रे ना..
रामा हो गइले देशद्रोहिया रे ना
रामा मिलि गइले आयर के संगवा रे ना..
रामा भारी दल लेके उनके सथवा रे ना
रामा आरा पर कइले चढ़इया रे नाकृ ।[21]

इसी प्रकार खड़ी बोली के एक लोकगीत में गद्दार सामंतों का यह उल्लेख है जिन्होंने चंद मुनाफे के लालच में अपने देश को अंग्रेजों के हाथों बेच दिया।

सूबे के राजवार फिरंगी से मिल गया
जितने लड़े समर में सब उत्तर चले गये
दो एक निमक हराम किरिस्तान हो गये
सदहा लड़ाई मारि कै राना निकल गये।[22]

अंग्रेजों के अमानवीय प्रशासन के खिलाफ, भारतीयों को स्वराज के लिए लंबे समय से चले आ रहे संघर्ष में झोंक दिया गया था। क्रांति में इस शब्द का प्रयोग सबसे अधिक पाया गया। स्वराज हिंदी की विभिन्न लोकभाषाओं का अत्यंत लोकप्रिय शब्द है। यह जितना लोकप्रिय है उतना ही पुराना भी है। तुलसीदास के समय में यह बहुत लोकप्रिय रहा होगा, इसीलिए उन्होंने रामचरितमानस में इसका कम से कम पाँच बार प्रयोग किया है।

जाइ सुराज सुदेश सुखारी
होहिं भरत गति तेहि अनुहारी।[23]

उपरोक्त दोहे में प्रयुक्त सुराज का अर्थ स्वराज या देश की स्वतंत्रता था और इसमें भाग लेने वालों में विद्रोह के बैनर तले इसे प्राप्त करने का उत्साह था। स्वराज के नाम पर संपूर्ण भारतीय जनता एकता के सूत्र में बंध गई थी। जब अंग्रेजों ने यह सब देखा तो उन्होंने स्वराज को पूरी तरह कुचल देने का प्रयत्न किया। अंग्रेजी सेना ने सुराज का नाम लेना भी अपराध घोषित कर दिया था यह बात एक लोकगीत में इस तरह है–

बुंदेलखंड के गांउन–गांउन, फेर ढ़ोड़ेर पिटवाओ
जो सुराज की नाम लेवेगें, तो हम कीला ठुकवाओ
गांवन–गांवन पी.ए. फिशर नें करो दमन भौंतई भारी
अंग्रेजन के गुलाम राजा, तिनके हम गुलाम भारी ।[24]

सन् 1857 के जन–युद्ध में जो लोग सुराज के लिए लड़ रहे थे वो यह जानते थे कि अंग्रेजी राज कुराज है। यद्यपि भारत में राज करने वाले अंग्रेज शासकों ने 1757 से 1947 तक कभी यह नहीं माना कि उनका राज कुराज था, लेकिन जो ईमानदार अंग्रेज अधिकारी उस कुराज के गवाह थे, उनमें से कुछ उसे कुराज कहते भी थे। एक अंग्रेज अधिकारी ने अपनी कविता में कंपनी राज का जो चित्र प्रस्तुत किया है उसे देखिए–

हम उनके बीच एक अभिशाप की तरह हैं
हमारा नाम ही उनके लिए आतंककारी है
कोई सहानुभूति नहीं, कोई दया नहीं, कोई पछतावा नहीं,
हमारा लक्ष्य है लाभ, हमारा साधन है शक्ति
हम हमेशा लेते हैं, कभी देते नहीं,
हम यह चिंता नहीं करते कि वे जीते हैं या मरते हैं।[25]

एक भोजपुरी लोक गीत भी स्वराज प्राप्त करने के लिए लोगों के उत्साह को व्यक्त करता है:

अब छोड़ रे फिरंगिया हमार देशवा
लूटपाट कैली तुहुं, मौजवा उडाय
शहर गांव लूटी फूंकी दिहात फिरंगिया
सुनी सुनी कुंवार की ह्दय में लगे अगिया
अब छोड़ रे फिरंगिया हमार देशवा।[26]

हिंदी क्षेत्र के लोकगीतों में 1857 के विद्रोह में भाग लेने और शहीद होने वाले अनेक पुरुषों और स्त्रियों के नाम ही नहीं उनकी संघर्ष गाथा भी दर्ज मिलती है। भोजपुरी के लोकगीतों और गीतों में मंगल पांडे, कुँवर सिंह, उनके भाई अमर सिंह और पटना के पीर अली के नाम मिलते हैं। बुंदेली में झांसी की रानी लक्ष्मीबाई के बारे में अनेक लोकगीत हैं पर उनके साथ ही पारीछत की वीरता का प्रभावशाली वर्णन है। वह लोकगीत इस प्रकार है–

मुरगा बोले पतारन में
हथनी मारे हजारन में

पारीछत दहाड़े हजारन में
ढड़कें फिरंगी पहारन में
पाठे कौ झिन्ना रुकत नैया
पारीछत कौ हांती टरत नैया
पूरी हथिनिया गरद मिला जाय
पारीछत कौ तेगा कतल कर जाए।[27]

हम जानते हैं कि महिलाओं ने भी क्रांति में बढ़ चढ़कर हिस्सा लिया था। एक लोककवि गंगा सिंह ने बहादुर सीला देवी और अन्य स्त्रियों के युद्ध का चित्रण इस प्रकार किया है-

बांदा लुटो रात के गुइयां, सोउत रई चिरैयां
सीला देवी लरी दौर के संग में सहस मिहरियां
अंगरेजन तों करी लराई मारे लोग लुगइयां
गिरी गुसाईं तब दौरे हैं लरन लगे मऊ मइयां।[28]

बुंदेली के एक और लोककवि रामधनी ने पदमाकर की रानी भवानी का यश-गान करते हुए लिखा है-

उमदानी है आज भवानी, पदमाकर की रानी
जागा जागा सभा रोय क सुना रई है बानी
सागर से वा नागपुर सों घड़ा रई रन पानी
मानों गुरिया बेंच-बांध के बनवा लेउ क्रियानी
भाला बरछी गोला बोला ले लो रे प्रिन ठानी
रामधनी अब रार ठनी है, देस दुखी तब जानी।[29]

राजस्थान के लोकगीतों और गीतों में भी अपने देश के खातिर मर मिटने के किस्से कहानियां दर्द हैं। राजस्थान के एक महान कवि सूर्यमल मिश्रण जो की क्रांति के समय मौजूद थे, ने राजस्थानी जमीदारों को पत्र लिखकर विद्रोह में शामिल होने की प्रेरणा दी थी। सूरजमल्ल मिसण की राजनीतिक सूझबूझ को समझने के लिए उनके पत्र का यह अंश देखने लायक है, "ये राजा लोग देशपति जो जमीन के स्वामी हैं, ये सबके सब निकम्मे, कायर और हिमालय के गले ही निकले। इस क्रांति ने अंग्रेज को चालीस से लेकर 60-70 वर्ष तक पीछे डाल दिया है, तो भी ये राजा लोग कायरता दिखा रहे हैं और (अंग्रजों की) गुलामी करते हैं। परंतु मेरी यह बात आप याद रखिये कि जो इस बार अंग्रेज रह गया तो वही सर्वशक्तिमान हो जाएगा, पृथ्वी का मालिक कोई भी न रह सकेगा, सब ईसाई हो जाएँगे।"[30]

1857 क्रांति से संबंधित राजस्थानी लोकगीतों में सबसे अधिक लोकगीत आउवा के राजा खुशाल सिंह के युद्ध कौशल, उनकी निर्भीकता और बलिदान के वर्णन-चित्रण से संबंधित हैं। इस लोकगीत में उनका संघर्ष झलकता है-

ढोल बाजै, थाळी बाजै, भेळो बाजै बांकियो,
अजंट ने ओ मारने दरवाजे नांकियो,
जुझै आउवो !

हे ओ जूंझै आउवो, आउवो मुलकां में चावो ओ,
जूंझै आउवो।[31]

राजस्थानी लोककवि बांकीदास ने 1830 के आसपास अंग्रेजी राज के बारे में राजाओं को चेतावनी दी थी, उन्होंने अपनी इन पंक्तियां के माध्यम से अंग्रेजों पर पैने व्यंग्य किए।

'आयौ अंगरेज मुलक है ऊपर, आहंस लीधौ खांचे उरा,
धुणिया मरै न दीधी धरती, धणिया उमौ गई धरा।'[32]

(ब्रितानियों ने हमारे देश पर आक्रमण कर सभी के हृदय में से हिम्मत छिन ली है। पहले के क्षत्रियों ने वीरता से शहीद होकर भी धरती नहीं दी, किन्तु आज के इन पृथ्वीपतियों की उपस्थिति में ही धरती शत्रु के अधिकार में चली गई।)

भोजपुरी क्षेत्र के कई अनाम कवियों ने भी क्रांति की ज्वाला प्रज्वलित करने वाले गीतों को आम जन के बीच गाया। बिहार में यही काम मैथिली भाषा ने किया। उनकी लोक चेतना का एक गीत देखिए–

'गरजब हम मेघ जकां बरिसब हम पानी जकां,
उड़ाए देव लंदन के हुंकार में,
बिजली जकां कड़कि कड़कि,
आंधी जहां तड़कि तड़कि,
भगा देव गोरा के टंकार में!'[33]

(अर्थात बादलों की भांति गरज कर, बारिश की तरह बरस कर और बिजली की तरह कड़क कर, आंधी की तरह तड़क-तड़क कर हम अपने हुंकार और टंकार से लंदन को भी उड़ा देंगे। आगे इस गीत में कहा गया है कि कोयल की तरह कुहुक कर और मोर की तरह नृत्य कर हम मातृभूमि को अपनी वीणा की झंकार से मना लेंगे।)

विद्रोह की शुरुआत जितने तीव्र वेग से हुई उतने ही तीव्रता से अंग्रेजों ने विद्रोह का दमन किया। अंग्रेजी सेना के दमन का जो दावानल फैला उसकी लपटों की कुछ जलन लोकगीतों में भी व्यक्त हुई है। बुंदेली के लोककवि फकीरे खान के एक गीत में उसकी अभिव्यक्ति इस तरह हुई है–

चूना मूंड़न पै बुझवा दये,
हांत-पांव में कीला ठोंके, पाछे से संदवा दये,
तेरा दिन चार मइना लों, गोड़न खून मिटा दये,
जार दयो है बिला बिलजुरा लुटो जन भगवा दये,
अंगरेजन खां बुलाइनन ने, बंटाधार करा दये,
खान फकीरे, कालों कइये, ऐसे हाल करा दये।[34]

दूसरे लोककवि दादूराम के गीत में अंग्रेजी सेना की करतूतों का वर्णन यह है–

घिर गए खानपुर वारे हैं,
चौतरफा से घेरा पर गए गंसे गांव के द्वारे हैं,
उरझा सेन फिरंगी लूटैं, जारे पुर घर सारे हैं,
गाए मार डार दई दौरन, छेंके जन अति वारे हैं,

'दादूराम' टेर कें कै रये छांड चलो घर द्वारे हैं।

अंग्रेजों ने दमन के माध्यम से आतंक का जो राज कायम किया उसका चित्रण एक कौरवी लोकगीत में यह है–

मेरी थर थर माथा कांपे री
गोरां के डर के मारे
बागों के माली भागे री
गोरों के डर के मारे
तालों के धोबी भागे री
गोरों के डर के मारे।[35]

निष्कर्ष- प्रस्तुत लोकगीतों का अध्ययन करने पर अब यह स्पष्ट हो चुका है कि 1857 का संग्राम न तो सामंतों का विद्रोह था, और ना हि सिपाहियों का आक्रोश। यह संग्राम राष्ट्रीय स्तर पर आम जनता की भागीदारी के कारण ब्रिटिश सत्ता से मुक्ति के लिए सामूहिक जन संग्राम था। यह मानना गलत है कि 1857 का नेतृत्व राजकुमारों और सरदारों ने किया था। आम लोगों ने बढ़-चढ़कर अपनी उपस्थिति इस विद्रोह में दर्ज कराई थी। ब्रिटिश नीतियों के प्रति आम घृणा और ब्रिटिश हिंसा भारतीयों में राष्ट्रवाद के प्रति महत्वपूर्ण कारक थे। इन कारकों ने लोगों के ह्रदय में उपस्थित ब्रिटिश आक्रोश को जगाया। भारतीय लोगों के सभी वर्गों की व्यापक भागीदारी हमें इस जनक्रांति में देखने को मिलती है, जिसमें अभिजात वर्ग, गैर-अभिजात्य, सैनिक, किसान, पुरुष, महिलाएं आदि ने बढ़ चढ़कर भाग लिया।

साधारण जनता, किसानों, सिपाहियों एवं महिलाओं ने अपने ह्दय की वेदनाओं को लोकगीतों के माध्यम से प्रस्तुत किया। इन लोकगीतों ने जन-जन में जाकर विद्रोह का प्रचार किया क्योंकि ये लोकगीत मौखिक थे व आम बोलचाल की भाषा में रचे गए थे। इसलिए शीघ्रता से आमजन तक पहुंचे और क्रांति का बिगुल बजाने में अपना बहुमूल्य योगदान दिया। इन लोकगीतों ने 1857 के अधूरे कार्य को पूर्ण किया। इन लोकगीतों ने लोगों के मन में इतनी गहरी छाप छोड़ी कि लोगों ने राष्ट्रवाद एवं स्वतंत्रता को अपना अंतिम लक्ष्य बना लिया। लोकगीतों को रचने वाले एवं गाने वाले लोक कवियों का मुख्य उद्देश्य यही था कि भविष्य में भारतवासी उनके संघर्षों और बलिदान को याद रखेंगे। यही उम्मीद ब्रजभाषा के इस लोकगीत में व्यक्त हुई है–

भूल न जइयो भारतवासी उन वीरन की कुर्बानी,
हँसते-हँसते प्रान गंवाएँ अमर रखो माँ कौ पानी।

संदर्भ ग्रन्थ सूची-

1. जोशी, पी.सी., 1857 इन अवर हिस्ट्री, मैनस्ट्रीम वीकली, वाल्यूम- XLV, न. 21, सोमवार, 14 मई, 2007
2. http://www.kranti1857.org/poem_of_1857.php
3. सनखादेर, बी. एम., इंडिया, 1972, कुमार ब्रोदरस, न्यू दिल्ली, पृ.25-26
4. गोपाल प्रधान, 1857:एक महागाथा, न्यू दिल्ली, स्वराज पब्लिकेशन, 2013
5. जोशी, पी.सी., 1857 इन अवर हिस्ट्री

6. मैनेजर पांडे(कंपाइलर एंड एडिटर), लोकगीतों और गीतों में 1857(हिंदी),न्यू दिल्ली, नेशनल बुक ट्रस्ट, 2017, पृ.10-13
7. वही
8. बद्रीनारायण, पॉपुलर कल्चर ऑफ 1857: ए मेमोरी अगेंस्ट फ,रगेटिंग, सोशल साइंटिस्ट, जनवरी-अप्रैल, 1998, वाल्यूम-26, पृ. 88
9. पांडे, पृ.6
10. वही, पृ.8
11. सिद्धू, गुरुदेव सिंह, आजादी संग्राम दी कविता- 1990 से 1947, पंजाबी पब्लिकेशन ब्यूरो, पंजाब यूनिवर्सिटी, चंडीगढ़, 2020, पृ. 18
12. सबद भेद: सन् 1857 का विद्रोह: सुराज के लिए संघर्ष, मैनेजर पाण्डेय, 13 नवंबर, 201 https://samalochan.blogspot.com/2015/11/1857.html?m=1
13. सिद्धू, पृ.16
14. सावरकर,बी.डी., द इंडियन वॉर ऑफ इंडिपेंडेंस: 1857, एशियन एजुकेशन सर्विस, न्यू दिल्ली, 2014,पृ. 545
15. पांडे, पृ.17-18
16. सबद भेद....
17. पांडे, ़़़़ृ. 5
18. वही, ़़़़ृ. 3-4
19. वही
20. बद्रीनारायण, पॉपुलर कल्चर ऑफ 1857, पृ.90
21. सबदभेद...
22. वही
23. पांडे, पृ. 2
24. सबद भेद
25. सनखादेर, बी. एम., इंडिया, पृ. 79
26. बद्रीनारायण, प, पुलर कल्चर ऑफ 1857, पृ. 88
27. सबद भेद
28. वही
29. वही
30. सूर्यमल मिश्रण, वीर सतसई, स. कन्हैया सहल और अन्य राजस्थान, साहित्य संस्थान जोधपुर, पृ. 53
31. lcn Hksn https://www.charans.org/bankidas-asia/
32. https://www.jagran.com/lite/lifestyle/miscellaneous -folk-songs-had-awakened-the-light-of-revolution-jagran-special-22745845.htm
33. सबद भेद
34. वही

UGC Journal No. (Old) 2138
Peer-Reviewed Research Journal
Impact Factor 4.875, ISSN 0975-4083
Vol.- 24, Hindi Edition, Year-12, Oct. 2022- March 2023

सर्वोदय विचार का उदय और विकास

• नवरत्न सिंह

सारांश- महात्मा गाँधी का दिया हुआ 'सर्वोदय' शब्द उनके समग्र चिन्तन के साथ ही भारत की सनातन संस्कृति का सार समेटे हुऐ है। समाज और जीवन की अनेक समस्याओं का स्थाई समाधान उसमें निहित है। गाँधी जी के मतानुसार सर्वोदय का अर्थ-आदर्श समाज-व्यवस्था है। इसका व्यापक आधार सर्वव्यापी प्रेम है। इसलिए इसमें निरपवाद रूप से अमीर और गरीब, हिन्दू और मुसलमान, सवर्ण और अवर्ण, काले व गोरे, दुष्ट और सन्त सबके लिए समान अवसर है। सर्वोदय समाज व्यवस्था के अन्तर्गत किसी भी व्यक्ति या समूह के दमन व शोषण के लिए कोई स्थान नही है, और सबको उनकी मेहनत की पैदावार में समान अधिकार है।

मुख्य शब्द- सर्वोदय, साम्यवादी, पूँजीवादी, जैन वाङ्मय, शोषण

महात्मा गाँधी का दिया हुआ 'सर्वोदय' शब्द उनके समग्र चिन्तन के साथ ही भारत की सनातन संस्कृति का सार समेटे हुऐ है। समाज और जीवन की अनेक समस्याओं का स्थाई समाधान उसमें निहित है। गाँधी जी के मतानुसार सर्वोदय का अर्थ-आदर्श समाज-व्यवस्था है। इसका व्यापक आधार सर्वव्यापी प्रेम है। इसलिए इसमें निरपवाद रूप से अमीर और गरीब, हिन्दू और मुसलमान, सवर्ण और अवर्ण, काले व गोरे, दुष्ट और सन्त सबके लिए समान अवसर है। सर्वोदय समाज व्यवस्था के अन्तर्गत किसी भी व्यक्ति या समूह के दमन व शोषण के लिए कोई स्थान नही है, और सबको उनकी मेहनत की पैदावार में समान अधिकार है।

यदि ऐतिहासिक दृष्टि से देखा जाए तो 'सर्वोदय' शब्द सर्वप्रथम जैन वाङ्मय में, उपयोग में लाया गया, जहाँ जैनाचार्य संमतभद्र कहते है- 'सर्वपदामन्तकरं-रन्तं सर्वोदय तीर्थार्मदं तदैव'। सर्वोदय की भावना भारत के उस परम पुरातन आदर्श में भी झलकती है जिसके अर्न्तगत कहा गया-

सर्वे भवन्ति सु:खिन, सर्वे सन्तु निरामय:।
सर्वे भद्राणि पश्यन्तु, माकश्चिद् दु:खमाप्नुयात्।

भारतीय प्राचीन ऋषियों की यह वाणी भिन्न-भिन्न रूपों में हमारे यहाँ मुखरित होता रहा है। इस 'सर्व' में केवल मानवों का ही नहीं, बल्कि अखिल सजीव सृष्टि का अन्तर्भाव निहित था। इस प्रकार सर्वे सु:खिन के भाव में भी सर्वोदय की भावना ही थी।

• **सहायक प्रोफेसर, इतिहास विभाग, राजकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय थलीसैण, पौड़ी गढ़वाल, उत्तराखण्ड**

भारत में सर्वोदय की प्राचीनता के सम्बन्ध में गाँधी जी ने लिखा, "सदाचार का पालन करने का अर्थ है अपने मन और विकारों पर प्रभुत्व पाना। हम देखते है कि 'मन एक चंचल पक्षी है'। उसे जितना मिलता है, उतनी ही उसकी भूख बढ़ती है और फिर भी उसे संतोष नही होता । हम अपने विकारों का जितना पोषण करते है, उतने ही निरंकुश बनते है। इसलिए हमारे पूर्वजों ने हमारे लोगों की मर्यादा बना दी थी। उन्होनें देखा कि सुख-दुख बहुत हद तक मानसिक स्थिति है। हमने हजारों वर्ष पहले के हल से ही काम चलाया है। हमारी झोपड़ियाँ अब भी उसी किस्म की है, जैसे पुराने जमाने की थी और हमारी देशी शिक्षा वैसी ही है जैसे पहले थी। हमारे यहाँ जीवन नाशक प्रणाली नहीं रही। हर एक अपना-अपना धन्धा या व्यवसाय करता था और नियमित मजदूरी लेता था। इसलिए वे छोटे-छोटे गाँवों से सन्तुष्ट थे। उन्होनें देखा कि राजा और उनकी तलवारें नीति की तलवार से घटिया है और इसलिए वे पृथ्वी के सम्राटों को ऋषियों और फकीरों से नीचा मानते थे। इस प्रकार के विधान वाला राष्ट्र दूसरों से सीखने के लिए अधिक योग्य है। इस राष्ट्र के पास अदालतें, वकील और डॉक्टर थे, परन्तु वे सभी मर्यादाओं के भीतर रहते थे। हर एक जानता था कि ये पेशे बड़े नहीं है। वे लोगों के आश्रित माने जाते थे, न कि उनकों मालिक माना जाता था। न्याय काफी निष्पक्ष था। साधारण नियम तो-अदालतों से दूर ही रहते थे। लोगों को फुसलाकर अदालतों में ले जाने वाले कोई दलाल नहीं थे। साधारण लोग स्वतंत्र जीवन व्यतीत करने व अपना खेती का धन्धा करते थे। वे सच्चे स्वराज का उपभोग करते थे।"[1]

उदय और विकास- गाँधी जी ने सर्वप्रथम सर्वोदय शब्द का प्रयोग ब्रिटिश लेखक जॉन रस्किन की प्रसिद्ध "Unto This Last" का सार प्रकट करने के लिए किया था। अपने दक्षिण अफ्रीकी प्रवास के दौरान सन 1990 ई0 में जोहान्सबर्ग से डरबन की रेलयात्रा के दौरान गाँधी जी ने यह पुस्तक पढ़ी थी जो उन्हें उनके मित्र पोलक ने यह कहकर दी थी कि यह पुस्तक पढ़ने योग्य है, आपको यह पसन्द आयेगी। इसका उल्लेख करते हुए गाँधी जी ने लिखा-"इस पुस्तक को हाथ में लेने के बाद मै इसे छोड़ ही न सका इसने मुझे पकड़ लिया।" जोहान्सबर्ग से नेटाल का रास्ता लगभग चौबीस घंटो का था। ट्रेन शाम को डरबन पहुँची। मुझे सारी रात नींद नहीं आयी। मैनें पुस्तक के विचारों को अमल में लाने का इरादा किया। मैनें जितनी पुस्तकें पढ़ी उनमें जिसने मेरे जीवन में तत्काल महत्व के रचनात्मक परिवर्तन कराये वह "Unto This Last" ही कही जा सकती है। बाद में मैंने उसका गुजराती अनुवाद किया और वह 'सर्वोदय' के नाम से छपा। मेरा विश्वास है कि चीज मेरे अन्दर गहराई में छिपी पड़ी थी, रस्किन के ग्रन्थ रत्न मे मैंने उसका स्पष्ट प्रतिबिम्ब देखा। और इस कारण उसने मुझ पर प्रभाव डाला और मुझसे दिये गये विचारों पर अमल करवाया जो मनुष्य हममें सोई हुई उत्तम भावनाओं को जाग्रत करने की शक्ति रखता है, वह 'कवि' है। सब कवियों का सब लोगों पर समान प्रभाव नहीं पड़ता। मैं सर्वोदय (Unto This Last) के सिद्धान्तों को इस प्रकार समझा।

- व्यक्ति का श्रेय समष्टि के श्रेय में निहित है।
- वकील का काम और नाई का काम की कीमत एक सी होनी चाहिए क्योंकि प्रत्येक व्यक्ति को अपनी आजीविका चलाने का अधिकार है।

- मजदूर, किसान अथवा कारीगर का जीवन ही सच्चा और सर्वोत्कृष्ट है।

"पहली बात मै जानता था दूसरी बात धुंधले रूप में मेरे सामने थी पर तीसरी बात का मैंने विचार ही नहीं किया था। (Unto This Last) सर्वोदय ने मुझे दीये की तरह दिखा दिया कि पहली चीज में दूसरी चीज समायी हुई है।"[2]

Unto This Last का नाम महात्मा ईसा की एक नीति कथा पर आधारित था। इसका अर्थ होता है, इस अन्त वाले को भी इस कथा के अनुसार- अंगूर के एक बगीचे के मालिक ने एक दिन सुबह अपने यहाँ काम करने के लिए कुछ मजदूर रखे जिनकी मजदूरी एक 'पेनी' रोज रखी गयी। प्रात: मिलने वाले मजदूरों को काम दे दिया गया दिन में कई बार जा-जा कर वहाँ काम की खोज में खड़े मजदूरों को लाता रहा और काम देता रहा। संध्या होने पर उसने उन सभी को, चाहे वे सुबह काम पर लगे हो, दोपहर काम पर लगे हो या फिर तीसरे पहर काम पर लेगे हो एक सी मजदूरी दी। इस प्रकार उसने अन्तिम आने वालों के साथ वैसा ही बर्ताव किया जैसे प्रथम आने वाले के साथ किया था। सुबह आने वाले को जितना, शाम वाले को भी उतना। यह बात सुनने में अटपटी भले ही लगे कुछ लोग इस पर 'टका सेर खाजा' वाली फंबती कस सकते है। परन्तु इसमें 'मानवता का अद्वैत' का वह तत्व समाया हुआ है, जिस पर सर्वोदय का विशाल प्रसाद खड़ा है।[3]

इस कथा को ध्यान में रखकर 'रस्किन' ने अपनी पुस्तक में बाजार की स्थिति पर निर्भर अर्थशास्त्र की आलोचना की और यह मत प्रकट किया है कि सभी के प्रति हमारा व्यवहार मानवीय और सहानुभूतिपूर्ण होना चाहिए।

स्पष्ट है कि रस्किन की इस पुस्तक से गाँधी जी अत्यधिक प्रभावित हुऐ थे और इसने उनकी इस भावना को दृढ़ किया था कि सबकि भलाई में ही अपनी भलाई है। उन्होनें इससे यह भी सीखा था की सबको आजीविका का समान अधिकार है। सभी कार्यो की कीमत एक सी होनी चाहिए तथा किसान और मजदूर का जीवन ही सच्चा जीवन है इस विचार का कि 'सबकी भलाई में ही अपनी भलाई है।' का अर्थ यह है कि मनुष्यों के पारस्परिक हितों में कोई विरोध नहीं है। "अधिकतम लोगों का अधिकतम हित" वाला सिद्धान्त गलत है और हमारा ध्येय सभी का अधिकतम् हित होना चाहिए।[4]

जैसा कि स्पष्ट है, सर्वोदय का सीधा व सरल अर्थ सबका उदय है किन्तु एक समग्र विकास के रूप में इसका अर्थ अत्यन्त व्यापक है। बिनोवा जी के शब्दों में, "सर्वोदय एक ऐसा अर्थधन शब्द है कि उसका जितना अधिक चिंतन और प्रयोग हम करते जायेंगे। उतना ही अधिक अर्थ हम उसमें पाते जायेगें। सारा अर्थ एक दम सूझने वाला नहीं है।" साथ ही सर्वोदय कोई रूढ़ विचार नहीं है। एकी विशेषता उसकी समन्वयात्मक प्रवृत्ति है। वह सभी विचारों के अच्छे अंश को ग्रहण करता और दोषों को छोड़ देता है। वह यह कभी नहीं कहता कि उसके विचारों के रूप में कोई कमी नहीं हो सकती है। वह भविष्य में सुधार की गुजाइश को स्वीकार करता है और यह भी मानता है कि सर्वोदय का रूप देश-काल के अनुसार अलग-अलग प्रकार का हो सकता है। 'सर्वोदय' एक जीवन दर्शन है, जो मूल में आध्यात्मिक है किन्तु जिनमें नैतिक सामाजिक, आर्थिक तथा राजनीतिक पहलू भी है।[5]

प्राचीन काल से सामाजिक आर्थिक क्षेत्र में अनेक विचारकों ने अपनी बात कहीं और अपने सिद्धान्त प्रस्तुत किये। डार्विन ने "Survival of the Fittest" सर्वश्रेष्ट की उत्तरजीविका का सिद्धान्त प्रस्तुत किया और कहा कि बड़ी मछली, छोटी मछली को खाकर ही जीवित रहती है। हक्सले ने थोड़ा सा आगे बढ़कर "जियों और जीने दो" (Live and Let Live) की बात कही। पूँजीवादी समाज स्थापित होने के बाद उनकी मान्यता थी 'मेहनत मजदूरी की सम्पत्ति मालिक की' पूँजीवादी समाज स्थापित होने के बाद राज्य, धन, विज्ञान और यंत्रों की प्रभुत्ता के बाद भी जब एक समता मूलक समाज की स्थापना न हो सकी, तो समाजवादी व्यवस्था की बात हुई, जिसके अर्थशास्त्र की मान्यता थी। मेहनत जिसकी सम्पत्ति उनकी इसके बाद कार्ल मार्क्स एक क्रान्तिकारी संदेश लेकर आया उसने नया सूत्र दिया 'मेहनत हर एक की, सम्पत्ति सबकी। मार्क्स ने ऐसे साम्यवादी समाज की स्थापना की बात की जिसमे न तो कोई गरीब होगा और न अमीर होगा। यहीं से कल्याणकारी अर्थशास्त्र का उदय हुआ जिसमें व्यक्ति की साहूकारी खत्म करने और समाज की साहूकारी स्थापित करने की बात कही गयी। फिर एक सूत्र आया 'परन्तु इस सूत्र से अन्तर्विरोध पैदा हुआ। पहले जहाँ दाम के लिए काम करने की गुलामी भी अब काम के मुताबिक दाम आ गया। यह सिद्धान्त भी कोई स्थाई समरस समाज व्यवस्था को स्थापित न कर सका।

गाँधी जी ने जिस सर्वोदय की बात की उसने आर्थिक-सामाजिक क्षेत्र में समरसता स्थापित करने हेतु विकल्प प्रस्तुत किया। 'सर्वोदय का लक्ष्य है' आध्यात्मिक उन्नति एवं जीवन शुद्धि। इसमे सम्पूर्ण विश्व व प्रत्येक प्राणी का ध्यान रखा जाता है और 'वसुदेव कुटुम्बकम्' की भावना रहती है। सर्वोदय मानवीय विभूति में विश्वास करता है। फल निरपेक्ष कर्तव्य हमारा धर्म है। इसकी मान्यता आज की प्रचलित मान्यताओं से आगे बढ़कर बोलती है मेहनत इन्सान की दौलत भगवान की। यह पड़ोसी की लिए उत्पादन, पड़ोसी के लिए जीने की कला दिखाता है।[6]

गाँधी जी के सर्वोदय का आधार आध्यात्मिक था जिसके कारण उसको कार्यान्वित करने के साधन भी आध्यात्मिक ही है। साम्यवाद में यह आशा जगायी जाती है कि शोषण का सर्वनाश करके आदर्श समाज व्यवस्था स्थापित हो सकती है। इसलिए वह अपनी रचना वर्ग द्वेष के आधार पर करता है और युद्ध का सहारा लेने से भी परहेज नहीं करता। गाँधी जी ने इस तरीके को निरर्थक माना क्योंकि उनका मानना था कि द्वेष और हिंसा देर-सबेर अपने को मिटाने वाला सच्चा तरीका यह है कि अपने कष्ट सहन ओर उच्च चरित्र द्वारा अत्याचारी की अन्तर आत्मा और बुद्धि को प्रभावित किया जाए और उसकी सोच को बदला जाय जिससे वह स्वेच्छा पूर्वक नई समाज व्यवस्था का सहायक बन सके। इस कार्य के लिए उन्होनें जिस कार्य प्रणाली को विकसित किया वही सत्याग्रह था जिसमें अवणीय कष्ट सहकर भी सत्य और अहिंसा पर अटल रहने की पद्धति है।[7] इस नीति का विकास स्वतंत्रता आन्दोलन में लगातार पोषित होता रहा।

गाँधी जी का सर्वोदय अर्थशास्त्र को नीतिशास्त्र और धर्मशास्त्र से अलग नहीं मानता। उनका मानना था कि मानव जीवन को राजनीतिक, सामाजिक, धार्मिक और आर्थिक खानों में बांटना उचित नहीं है। जो अर्थशास्त्र किसी व्यक्ति अथवा राष्ट्र के

कल्याण में बाधा डालता है वह अनैतिक है और इसलिए पापपूर्ण है जो अर्थशास्त्र अनुमति देता है कि एक दूसरे देश को लूट लें वह अनैतिक है। मैं खुद अमेरिकी गेहूँ खाऊँ और पड़ोसी अन्न विक्रेता को ग्राहक के अभाव में भूखों मरने दूँ। यह पाप है इसी तरह मुझे यह भी पापपूर्ण लगता है कि मैं रिजन्ट स्ट्रीट का बढ़िया कपड़ा पहनूँ जबकि, मैं जानता हूँ कि यदि मैं कारीगरों और बुनकरों के काते व बुने कपड़े पहनता तो मुझे कपड़ा मिलता ही उन लोगो को भी भोजन मिलता और कपड़ा मिलता।[8]

गाँधी जी का सर्वोदय अन्तोदय से शुरू होता है। उन्होनें समाज के अन्तिम व्यक्ति की बात की। आर्थिक, सामाजिक, धार्मिक और शैक्षिक रूप से जो निम्न कोटि का हो वही समाज का अन्तिम व्यक्ति (दरिद्र नारायण) है। उन्होनें समाज के जिस अन्तिम व्यक्ति की उत्थान की बात की उसके लक्षण इस प्रकार बताये।

1. जो पूरे समाज मे आर्थिक दृष्टि से सबसे विपन्न हो।
2. समाज का ऐसा व्यक्ति जो सामाजिक रूप से प्रतिष्ठित न हो।
3. जिसका राजनीतिक सम्मान न हो या कम से कम हो।
4. जो धार्मिक रूप से सबसे निम्न कोटि का हो।
5. वह व्यक्ति जिसके मन में भाव-विचार हैं पर वे भाव-विचार शिक्षा की कमी के कारण पूर्ण नहीं हो पाते हैं।
6. जिस व्यक्ति का सांस्कृतिक जीवन अविकसित हो, व्यवहार एवं आधार पूर्ण न हो अर्थात जो सामाजिक सांस्कृतिक दृष्टि से सबसे पिछड़ा हो।

गाँधी जी ने अपना सर्वोदय दर्शन समाज के अन्तिम व्यक्ति से ही प्रारम्भ किया। जो व्यक्ति अन्तिम व्यक्ति से ऊपर है उसे उन्होनें दूसरा अन्तिम व्यक्ति बताया। उन्होनें सअसे पहले सबसे अन्तिम व्यक्ति की उत्थान की बात की और फिर अन्य व्यक्तियों की। समाज के सबसे दीन और हीन व्यक्ति के विकास को लक्ष्य बनाकर उन्होनें विभिन्न रचनात्मक कार्य प्रारम्भ किये। उनको विश्वास था कि यदि समाज के अन्तिम व्यक्ति का उत्थान होगा तो फिर सारे समाज का उत्थान हो जाएगा। भौगोलिक रूप से उन्होनें शहर एवं गाँव दोनों के उत्थान की बात की परन्तु गाँव को उन्होनें प्राथमिकता दी। क्योंकि गाँव शहरों से पिछड़े हुए थें। इसीलिए उन्होनें ग्राम स्वराज्य और ग्राम उद्योग की विचारधारा को पुष्ट किया।

उन्होनें कहा कि देश में सबसे अधिक आबादी उन लोगो की है जो अत्यन्त गरीब है और इनमे से अधिकांश गरीब गाँवों में रहते है। गाँव के उत्थान का अर्थ है, सम्पूर्ण राष्ट्र का उत्थान। इस तरह बहुसंख्यक गरीबों के उत्थान को ही उन्होनें देश का उत्थान माना और इसी को ही सर्वोदय शास्त्र कहा। 'जब गाँधी जी ने सर्वोदय शब्द का प्रयोग किया तो उनका यह भी तात्पर्य था कि यदि धनी व्यक्तियों द्वारा ऐसे काम किये जाते, जिससे समाज से दुःख और दरिद्रता दूर हो जाए तो यह उनका भी उदय कहा जाएगा। इसलिए अमीरों का कर्तव्य हो जाता है कि वे अपनी सम्पत्ति या अपनी शाक्ति का प्रयोग सामाजिक उत्थान के लिए करें तभी सबका उत्थान सम्भव है। इस प्रकार गाँधी जी ने सम्पत्तिशाली एवं गरीब दोनों के लिए दर्शन दिया।'[9] उन्होनें हृदय परिर्वतन स्वचिन्तन, स्वशासन एवं नैतिक दर्शन के द्वारा एक नये प्रकार की अर्थव्यवस्था का संयोजन किया। इसी को सर्वोदय अर्थशास्त्र कहा गया।

उनके सर्वोदय दर्शन में हर एक व्यक्ति को अपने श्रम से उत्पादन करना होगा। उत्पादन के साधन पर प्रत्येक व्यक्ति का अधिकार होगा। कोई व्यक्ति यंत्र का प्रयोग, दूसरे व्यक्ति के शोषण के लिए नहीं करेगा और मालिक एव मजदूर क सम्बन्ध नहीं होगें। हर व्यक्ति की कार्यप्रणाली में दोनों समन्वित होगें। दोनों गुणों का मेल होगा। मूलभूत आवश्यकता की आपूर्ति करने वाले उद्योगों का संचालन पंचायती होगा। उन्हीं वस्तुओं का उत्पादन होगा जो स्वास्थ्य वर्द्धक, जीवनोपयोगी तथा उत्पादन में सहयोगी हों। उन्होनें सर्वोदय के अर्थशास्त्र को पूरी तरह समतामूलक समाज की स्थापना के लिए आवश्यक बताया। 09 अक्टूबर 1937 को 'हरिजन' पत्र मे उन्होनें लिखा "जो अर्थशास्त्र धन की पूजा करना सिखाता है और जो कमजोरों को हानि पहुँचाकर सबलों को दौलत जमा करने देता है, वह झूठा और भयानक अर्थशास्त्र है।"[10]

एक सर्वोदयी समाज की स्थापना के उद्देश्य से गाँधी जी ने स्वतंत्रता आन्दोलन के साथ-साथ एक अपरिहार्य सकारात्मक तत्व के रूप में रचनात्मक कार्यक्रमों का विस्तृत प्रारूप तैयार किया जिसने सत्याग्रह तथा सर्वोदय की सफलता की दिशा निर्धारित की। वह चाहे सामुदायिक रहन-सहन हो, साम्प्रदायिक एकता हो शिक्षा का मामला हो, स्त्रियों व दलितों का उद्धार हो या कुटीर उद्योगों की बात हो सबसे उसकी झलक मिलती है। यह एक प्रबुद्ध समाज के निर्माण के मूल आधार थे। इन्हें गाँधी जी ने सुदृढ़ता प्रदान की। संक्षेप में यह कहा जा सकता है कि सत्याग्रह तभी सार्थक हो सकता है जब सर्वोदय के उद्देश्य उसके पीछे हों और यह तभी संभव था जब रचनात्मक कार्यक्रम को व्यापक रूप से अपनाया जाता। व्यक्ति के उत्थान के लिए उन्होनें नैतिक उत्थान की बात की। स्वतंत्रता आन्दोलन के दौरान ही गाँधी जी का सर्वोदय भी उसके पूरक के रूप में चलता रहा। आगे चलकर गाँधी जी के अनूयायियों जिनमें विनोबा भावे एवं जयप्रकाश नारायण प्रमुख थें, ने सर्वोदय को एक आन्दोलन के रूप में आगे चलाया क्योंकि आजादी की दहलीज पर ही गाँधी शहीद हो गये थे।

स्वतंत्रता प्राप्ति से ही गाँधी जी के राम का स्वप्न पूरा नहीं हुआ था। रामराज्य तथा सर्वोदय समाज की सिद्धि के लिए केवल गुलामी की बाधा दूर हूई थी रचनात्मक कार्यक्रमों के समक्ष यह प्रश्न था कि अपने कार्यो को किस तरह से बागे बढ़ाया जाय। अपने अनुभवों एवं विचारों का अदान-प्रदान करने के लिए रचनात्मक कार्यकर्ताओं ने गाँधी जी की सलाह से फरवरी 1948 के प्रारम्भ में वर्धा में एक सम्मेलन करना तय किया था। गाँधी जी इस सम्मेलन में शामिल होने वाले थे और इसके लिए उनको दिल्ली से 31 जनवरी 1948 करे वर्धा के लिए रवाना होना था किन्तु 30 जनवरी को उनकी हत्या कर दी गयी।[11] यह सम्मेलन बाद में मार्च मे किया गया। इस सम्मेलन में गाँधी जी के अभाव में विनोवा जी का मार्गदर्शन स्वीकार किया गया।

बिनोवा जी ने अपनी उच्च नैतिकता और इच्छाशक्ति के बल पर सर्वोदय आन्दोलन को आजाद भारत में जिन्दा रखा। साथ ही इसकों व्यापकता प्रदान करते हुए इसे अन्तर्राष्ट्रीय स्तर तक ले जाने का प्रयास किया। उन्होनें जय हिन्द के स्थान पर जय-जगत का नारा दिया।

संदर्भ ग्रन्थ सूची-

1. गाँधी जी, 'हिन्द स्वराज', सस्ता साहित्य मंडल, पृष्ठ 46
2. गाँधी जी, 'आत्मकथा', सर्वसेवा संघ, प्रकाशन, पृष्ठ 271
3. दादा धर्माधिकारी, 'सर्वोदय दर्शन', सर्वसेवा संघ प्रकाशन राजघाट वाराणसी, पृष्ठ 4
4. डॉ. विश्वनाथ टण्डन, 'सर्वोदय की ओर', आत्माराम एण्ड सन्स् नई दिल्ली 1968, पृष्ठ 4
5. डॉ. विश्वनाथ टण्डन, 'सर्वोदय की ओर', आत्माराम एण्ड सन्स् नई दिल्ली 1968, पृष्ठ 3।
6. प्रदीप कुमार पाण्डेय, गाँधी जी का आर्थिक और सामाजिक दर्शन, हिन्दी माध्यम कार्यान्वयन निदेशालय नई दिल्ली, पृष्ठ 24
7. गाँधी जी, 'सर्वोदय' (भारतन् कुमार अप्पा द्वारा सम्पादित), नवजीवन प्रकाशन अहमदाबादध, पृष्ठ 5
8. यंग इंडिया, दिनाँक-13 अक्टूबर 1921 के अंक में
9. प्रदीप कुमार पाण्डेय, गाँधी जी का आर्थिक और सामाजिक दर्शन, हिन्दी माध्यम कार्यान्वयन निदेशालय नई दिल्ली, पृष्ठ 26
10. गाँधी जी, 'सर्वोदय' (भारतन् कुमार अप्पा द्वारा सम्पादित), नवजीवन प्रकाशन, पृष्ठ 37
11. डॉ. विश्वनाथ टण्डन, 'सर्वोदय की ओर', आत्माराम एण्ड सन्स् नई दिल्ली 1968, पृष्ठ 4

UGC Journal No. (Old) 2138
Peer-Reviewed Research Journal
Impact Factor 4.875, ISSN 0975-4083
Vol.- 24, Hindi Edition, Year-12, Oct. 2022- March 2023

वर्तमान समय में स्वामी विवेकानन्द जी के मानव निर्माण शिक्षा के उद्देश्य

• सोना राम वर्मा
•• कविता साहू

सारांश-मानव जाति के विकास का आधार शिक्षा हैं। प्रत्येक मनुष्य के अन्दर कुछ जन्मजात शक्तियाँ निहित होती हैं, जिनके प्रस्फुटन से ही व्यक्तित्व का विकास संभव होता हैं। विकास के वर्तमान युग में राष्ट्र की बौद्धिक सम्पदा को सर्वाधिक महत्वपूर्ण माना जाता हैं। शिक्षा के द्वारा ही मनुष्य की जन्मजात शक्तियों का अधिकतम विकास करके उसके ज्ञान, बोध एवं कौशल में वृद्धि की जाती हैं। शिक्षा व्यक्ति की शारीरिक, मानसिक, बौद्धिक, आध्यात्मिक, सामाजिक, नैतिक, चारित्रिक, संवेगात्मक शक्तियों का विकास करती हैं। वास्तव में शिक्षा एक ओर व्यक्ति का सर्वांगीण विकास करके उसकी व्यक्तिगत उन्नति का मार्ग प्रशस्त करती हैं वहीं दूसरी ओर वह उसे समाज का एक महत्वपूर्ण व उत्तरदायी सदस्य तथा राष्ट्र का एक सुयोग्य, कर्त्तव्यनिष्ठ व सजग नागरिक बनाती हैं। कोई भी रा'ट्र तभी उन्नति कर सकता हैं, जब उस राष्ट्र के सभी नागरिकों को विकास के सर्वोत्तम अवसर प्राप्त हों तथा वे लाभ उठाने में समर्थ हों। स्वामी विवेकानन्द के शिक्षा-दर्शन में प्रकृतिवाद, आदर्शवाद तथा प्रयोजनवाद आदि सभी मुख्य-मुख्य दार्शनिक विचारधाराओं की झलक दिखाई पड़ती है। प्रकृतिवादियों की भाँति स्वामी जी ने बताया कि सच्ची शिक्षा प्रकृति से सम्पर्क में रहकर ही प्राप्त हो सकती है। आदर्शवादियों की भाँति उन्होंने बताया कि शिक्षा का मुख्य उद्देश्य बालक का आध्यामिक विकास करके उसके उस पूर्णत्व की अभिव्यक्ति करना है, जो उसमें पहले से ही विराजमान है। ऐसे ही प्रयोजनवादियों की भाँति स्वामी जी ने पाश्चात्य देशों की कला, उद्योग तथा तकनीकी शिक्षा की उपयोगिता को अपनी कला के साथ समन्वित करने का सुझाव प्रस्तुत किया। यदि आज की नयी शिक्षा नीति को देखा जाये तो यह बात आज और महत्वपूर्ण ढंग से मानी जा रही है। स्वामी विवेकानन्द के जीवन-दर्शन का सार है- अभय होकर संघर्ष के द्वारा मानवता की सेवा करना।

मुख्य शब्द- शिक्षा-दर्शन, आध्यात्मिक, नैतिक, चारित्रिक, व्यक्तित्व, उद्देश्य, सिद्धान्त, आदर्शवाद, प्रयोजनवाद।

• सहायक प्राध्यापक, पं. रविशंकर शुक्ल विश्वविद्यालय, रायपुर (छत्तीसगढ़)
•• सहायक प्राध्यापक, शासकीय कला एवं वाणिज्य कन्या महाविद्यालय, देवेन्द्र नगर, रायपुर

जीवन-दर्शन- स्वामी विवेकानन्द का जन्म 12 जनवरी सन् 1863 ई. में कलकत्ता के एक क्षत्रिय परिवार में हुआ था उनके जन्म का नाम नरेन्द्र नाथ दत्त था। नरेन्द्र जी के पिता श्री विश्वनाथ कलकत्ता हाइकोर्ट के वकील थे। उनका पारिवारिक वातावरण धार्मिक था। इसीलिए उन्हें बाल्यावस्था से ही, धर्म-कर्म, पूजा-पाठ, तथा धार्मिक ग्रन्थों के अध्ययन में रूचि उत्पन्न हो गई। नरेन्द्र जी की बुद्धि बड़ी कुशाग्र थी।

स्वामी विवेकानन्द का जीवन-दर्शन मानव के लिए अत्यन्त गौरवपूर्ण एवं प्रेरणादायक है। उन्होंने बताया कि जीवन एक संघर्ष है। इस संघर्ष में केवल समर्थ की विजय होती है तथा असमर्थ का विनाश हो जाता है। अत: विजय प्राप्त करके जीवित रहने के लिए प्रत्येक व्यक्ति को जीवन की प्रत्येक चुनौती के साथ डटकर संघर्ष करना चाहिये। स्वामी जी ने एक दिन उन्होंने कहा, "आज हम लोग दीन-हीन हो गये हैं। हम प्रत्येक कार्य को दूसरों के डर से करते हैं, डरते हुए बोलते हैं तथा डरते हुए सोचते हैं। ऐसा लगता हैं कि हमने शत्रुओं के देश में जन्म लिया हैं, मित्रों के नहीं।"[1]

इस सोचनीय तथा हीन दशा का कारण उन्होंने यह बताया कि हम अपने जीवन में वेदान्त का समावेश नहीं करते हैं। उन्होंने कहा कि भीरू, मलीन तथा उदासीन व्यक्ति अपने जीवन में किसी कार्य को नहीं कर सकता। पृथ्वी का उद्धार केवल बहादुर योद्धा ही कर सकते हैं। अत: स्वामी जी ने भारतीयों को वीर, कर्मठ तथा निर्भय बनने का सुझाव देते हुए कहा, "वीर बनो। हमेशा कहो, मैं निर्भय हूँ, सबसे कहो-डरो मत, भय मृत्यु हैं, भय पाप हैं, भय नर्क हैं, भय अधार्मिकता है तथा भय का जीवन में कोई स्थान नहीं है।"[2]

स्वामी विवेकानन्द जी का शिक्षा-दर्शनॠ स्वामी विवेकानन्द की नस-नस में भारतीयता तथा आध्यात्मिकता कूट-कूटकर भरी हुई थी। अत: उनके शिक्षा-दर्शन का आधार भी भारतीय वेदान्त तथा उपनिषद् ही रहे। वे कहते थे कि प्रत्येक प्राणी में आत्मा विराजमान है। इस आत्मा को पहचानना ही धर्म है। स्वामी जी का अटल विश्वास था कि सभी प्रकार का सामान्य तथा आध्यात्मिक ज्ञान मनुष्य के मन में है। अधिकतर इसकी खोज नहीं हो पाई है। यह ढका ही रह जाता है। पर जब इस पर पड़ा हुआ आवरण उतार दिया जाता है तो हम कहने लगते हैं कि हम सीख रहे हैं।

संक्षेप में, स्वामी विवेकानन्द के अनुसार कोई व्यक्ति किसी दूसरे व्यक्ति को नहीं सिखाता। प्रत्येक व्यक्ति अपने आप स्वयं ही सीखता है। बाहरी शिक्षक तो केवल सुझाव ही प्रस्तुत करता है जिससे भीतरी शिक्षक को समझने और सीखने के लिए प्रेरणा मिल जाती है। इसी दृष्टि से स्वामी जी ने अपने समय की शिक्षा को निषेधात्मक बताया तथा लोगों से कहा, "आप उस व्यक्ति को शिक्षित मानते हैं, जिसमें कुछ परीक्षाएँ पास कर ली हो तथा जो अच्छे भाषण दे सकता हो। पर वास्तविकता यह है कि जो शिक्षा जनसाधारण को जीवन-संघर्ष के लिए तैयार नहीं कर सकती, जो चरित्र निर्माण नहीं कर सकती, जो समाज सेवा की भावना को विकसित नहीं कर सकती तथा जो शेर जैसा साहस पैदा नहीं कर सकती, ऐसी शिक्षा से क्या लाभ है।"[3]

संक्षेप में, स्वामी विवेकानन्द ने सैद्धान्तिक शिक्षा का खण्डन करते हुए व्यावहारिक शिक्षा पर बल दिया। इस सम्बन्ध में उन्होंने भारतीयों को समय-समय पर सचेत करते हुए कहा, "तुमको कार्य के प्रत्येक क्षेत्र को व्यावहारिक बनना पड़ेगा।

सम्पूर्ण देश को सिद्धान्तों के ढेरों ने विनाश कर दिया है।''[4]

स्वामी विवेकानन्द ने मानव जाति के विकास का आधार शिक्षा को माना हैं। वे भारतीय तथा आध्यात्मिकता शिक्षा को महत्वपूर्ण मानते हैं।

शिक्षा का अर्थ- स्वामी विवेकानन्द के अनुसार शिक्षा का अर्थ केवल उन सूचनाओं से ही नहीं है, जो बालकों के मस्तिष्क में बलपूर्वक ठूँसी जाती हैं। उन्होंने लिखा है, ''यदि शिक्षा का अर्थ सूचनाओं से होता, तो पुस्तकालय संसार के सर्वश्रेष्ठ संत होते तथा विश्वकोष ऋषि बन जाते।''[5] स्वामी विवेकानन्द के अनुसार, ''शिक्षा उस सन्निहित पूर्णता का प्रकाश है, जो मनुष्य में पहले से ही विद्यमान है।''[6]

स्वामी विवेकानन्द जी की शिक्षा के उद्देश्य- पूर्णत्व को प्राप्त करने का उद्देश्य। स्वामी विवेकानन्द जी के अनुसार शिक्षा का प्रथम उद्देश्य अन्तर्निहित पूर्णता को प्राप्त करना है। वे मानते है कि लौकिक तथा आध्यामिक सभी ज्ञान मनुष्य के मन में पहले से ही विद्यमान होता है। इस पर पड़े आवरण को उतार देना ही शिक्षा का मुख्य उद्देश्य है। अतः शिक्षा को मनुष्य के अन्तर्निहित ज्ञान अथवा पूर्णत्व की अभिव्यक्ति करनी चाहिये। स्वामी जी ने मानव के अन्तर्निहित शक्तियों के विकास को ही पूर्णत्व की अभिव्यक्ति माना है।

शारीरिक एवं मानसिक विकास का उद्देश्य- स्वामी विवेकानन्द जी के अनुसार शिक्षा का दूसरा उद्देश्य बालक का शारीरिक एवं मानसिक विकास है। उन्होंने शारीरिक उद्देश्य पर इसलिए बल दिया जिससे आज के बालक भविष्य में निर्भीक एवं बलवान योद्धा के रूप गीता का अध्ययन करके देश की उन्नति कर सकें। शिक्षा के मानसिक उद्देश्य पर बल देते हुए उन्होंने बताया कि हमें ऐसी शिक्षा की आवश्यकता है जिसे प्राप्त करके मनुष्य अपने पैरों पर खड़ा हो जाये। स्वामी जी बालक की शारीरिक एवं मानसिक विकास पर विशेष बल दिया है। जिसके परिणामस्वरूप शारीरिक एवं मानसिक विकास कर भावी जीवन के लिए तैयार हो सके।

नैतिक तथा आध्यात्मिक विकास का उद्देश्य- स्वामी जी का विश्वास था कि किसी देश की महानता केवल उसके संसदीय कार्यो से नहीं होती अपितु उसके नागरिकों की महानता से होती है। पर नागरिकों को महान् बनाने के लिए उनका नैतिक तथा आध्यात्मिक विकास परम आवश्यक है।

स्वामी जी ने बालक के नैतिक व आध्यात्मिक गुणों के विकास पर अधिक ध्यान केन्द्रित किया है। स्वामी जी का विचार है कि बालक में नैतिक व आध्यात्मिक गुणों का विकास के लिए प्रारंभिक बाल्यावस्था से ही शिक्षा में इन गुणों को शामिल करना चाहिये।

चरित्र निर्माण का उद्देश्य- स्वामी विवेकानन्द जी ने चरित्र निर्माण को शिक्षा का महत्वपूर्ण उद्देश्य माना है। इसके लिए उन्होंने ब्रह्चर्य पालन पर विशेष बल दिया और बताया कि ब्रह्चर्य के द्वारा मनुष्य में बौद्धिक तथा आध्यात्मिक शक्तियाँ विकसित होगी तथा वह मन, वचन और कर्म से पवित्र बन जायेगा।

आत्मविश्वास तथा श्रद्धा एवं आत्मत्याग की भावना का उद्देश्य- स्वामी जी ने आजीवन इस बात पर विशेष बल दिया कि अपने ऊपर विश्वास रखना, श्रद्धा तथा

आत्मत्याग की भावना को विकसित करना शिक्षा का महत्वपूर्ण उद्देश्य है। उन्होंने लिखा है, "उठो ! जगो और उस समय तक बढ़ते रहो जब तक कि चरम उद्देश्य की प्राप्ति न हो जाये।"[8]

विभिन्नता में एकता की खोज का उद्देश्य- स्वामी जी के अनुसार शिक्षा का प्रमुख उद्देश्य विभिन्नता में एकता की खोज करना है। उन्होंने बताया कि आध्यात्मिक तथा भौतिक जगत एक ही हैं। अतः विभिन्नता की अनुभूति, दोष अथवा माया है। शिक्षा ऐसी होनी चाहिये कि बालक विभिन्न में एकता की अनुभूति करने लगे।

धार्मिक विकास का उद्देश्य- स्वामी जी ने धार्मिक विकास को शिक्षा का प्रमुख उद्देश्य माना है। वे चाहते थे कि प्रत्येक व्यक्ति उस सत्य अथवा धर्म को मालूम कर सके जो उसके अन्दर छिपा हुआ है। इसके लिये उन्होंने मन तथा हृदय के प्रशिक्षण पर बल दिया और बताया कि शिक्षा ऐसी होनी चाहिये जिसे प्राप्त करके बालक अपने जीवन को पवित्र बना सके तथा उसमें आज्ञापालन, समाज-सेवा एवं महापुरूषों और सन्तों के अनुकरणीय आदर्शों को अपनाने की क्षमता विकसित हो जाये। स्वामी जी के धार्मिक विकास का उद्देश्य है कि बालक के जीवन को पवित्र बना सके।

बालक के बहुमुखी विकास के लिए शिक्षा- स्वामी जी के अनुसार हमें ऐसी शिक्षा की आवश्यकता है जिसके द्वारा चरित्र का निर्माण होता है, मन की शक्ति बढ़ती है, बुद्धि का विस्तार होता है और जिसके द्वारा मनुष्य आत्म निर्भर बन जाता है। शिक्षण-पद्धति- स्वामी विवेकानन्द ने किसी प्रकार की विधि को विशेष महत्व नहीं दिया, फिर भी उनके शैक्षिक व्यवस्थाओं के अध्ययन से कुछ विधियाँ स्पष्ट रूप से दिखायी पड़ती है, जैसे एकाग्रता विधि- इस विधि को ही 'केन्द्रीयकरण' विधि कहा जाता है। चूँकि स्वामी विवेकानन्द बालक की प्रगति उसकी अन्तर्निहित शक्ति पर मानते हैं। इसलिए बालक को ज्ञान देने की आवश्यकता को नहीं मानते। वे केवल उपयुक्त वातावरण को प्रधानता देते हैं। इसमें बालक का विशेष महत्व है। उनकी मान्यता है कि यदि बालक में एकाग्रता नहीं है तो अच्छे अध्यापक, पाठ्यक्रम सभी बेकार हैं। एकाग्रता को ज्ञान की कुंजी मानते है। इसके बारे में स्वामी विवेकानन्द ने लिखा है "चाहे विद्वान अध्यापक हों, चाहे मेधावी छात्र हों; चाहे अन्य भी हों, यदि वह किसी वस्तु को जानने की चेष्टा कर रहा है तो उसे एकाग्रता से ही काम लेना पड़ेगा।"[8] स्वामी विवेकानन्द ने व्यक्ति को चित्त की एकाग्रता की शक्ति पर बल दिया है।

उपदेश विधि (व्याख्यान विधि)- चूँकि स्वामी विवेकानन्द भारतीय वैदिक परम्पराओं से पूर्णरूपेण ओत-प्रोत रहे, इसलिए वे शिक्षण विधि में गुरूकुल व्यवस्था की उपदेश विधि को अपनाया जिसे व्याख्यान विधि के नाम से भी जाना जाता है। इसमें तर्क-वितर्क, विचार-विमर्श एवं शंका समाधान आदि व्यवस्थाओं को अपनाया जाता है। इस प्रकार से इस विधि के तरफ भी स्वामी विवेकानन्द का संकेत रहा है।

निर्देशन एवं परामर्श विधि- बालक के अन्दर बाहर से ज्ञान नहीं ठूँसा जा सकता न ही और उससे कोई लाभ भी होगा। अतः यह आवश्यक है कि बालक को व्यक्तिगत रूप से निर्देशन दिया जाये और समय-समय पर उपयुक्त सलाह दी जाये। इस प्रकार से जो उसे अवसर दिया जायेगा उसी से बालक कुछ सीख सकता है। यदि आज की नयी शिक्षा नीति

को देखा जाये तो यह बात आज और महत्वपूर्ण ढंग से मानी जा रही है।

अन्य विधि– उक्त तीनों विधियों के अलावा यदि सूक्ष्म अध्ययन किया जाये तो और भी शिक्षण विधियाँ दिखायी पड़ती है जैसे– यात्रा विधि, अनुकरण विधि, निदिध्यासन विधि, साधु संगत एवं सम्पर्क विधि आदि विधि स्वामी विवेकानन्द जी की शिक्षण में दिखायी पड़ती है। इसमें भ्रमण विधि को विशेष महत्व दिया है चूँकि वैदिक धर्मो का पूर्णत: प्रभाव इन पर रहा। निदिध्यासन विधि को भी योग, जप, तप आदि के लिए उपयोग किया है। अत: वैदिक शिक्षण विधि से लेकर आधुनिक शिक्षण विधि का एक संयुक्त स्वरूप मिलता है। स्वामी विवेकानन्द जी की शिक्षण विधियों में मानव के सम्पूर्ण विकास बल दिया गया है।

शिक्षा-दर्शन के आधारभूत सिद्धान्त- स्वामी विवेकानन्द की गणना संसार के महान् शिक्षा–शास्त्रियों में की जाती है। उनके शिक्षा–दर्शन सम्बन्धी आधारभूत सिद्धान्तों पर हम निम्नलिखित पंक्तियों में प्रकाश डाल रहे हैं–

- स्वामी विवेकानन्द जी ने केवल पुस्तकों का अध्ययन को ही शिक्षा नहीं माना है।
- ज्ञान प्रत्येक व्यक्ति के मन में विद्यमान है, वह स्वयं ही सीखता हैं, बाहरी शिक्षक केवल अन्तर्निहित शिक्षक को मार्गदर्शन देता है।
- प्रत्येक व्यक्ति को चित्त की एकाग्रता की शक्ति पर विशेष ध्यान देना चाहिए। चित्त की एकाग्रता ज्ञान प्राप्त करने की कुंजी है। इस शक्ति को विकसित करने के लिए ब्रह्मचर्य आवश्यकता है।
- प्रत्येक व्यक्ति को आत्म–नियन्त्रण के लिए मन, वचन तथा कर्म की शुद्धि पर विशेष ध्यान देना चाहिए।
- शिक्षा के द्वारा बालक का सर्वांगीण विकास – शारीरिक, मानसिक, नैतिक तथा आध्यात्मिक विकास करें।
- शिक्षा बालक में आत्मिक निष्ठा तथा श्रद्धा विकसित करे एवं उसमें आत्मत्याग की प्रगति करके पूर्णता की अभिव्यक्ति करें और आत्म विश्वास विकसित करने में सहयोग करें।
- शिक्षा से बालक के चरित्र का गठन हो, मन का बल बढ़े तथा बुद्धि विकसित हो जिससे वह अपने पैरों पर खड़ा हो जाये और आत्म विश्वास विकसित करने में सहयोग करें।

जन-साधारण की शिक्षा- स्वामी जी के समय में शिक्षा जन–साधारण को सुलभ न थी। इसका क्षेत्र केवल समर्थ व्यक्तियों तक ही सीमित था। फलस्वरूप दीन, दु:खियों तथा निम्न वर्ग के लोगों को पेट भरकर भोजन भी नहीं मिल पाता था।

अत: स्वामी जी ने तत्कालीन भारतीय समुदाय को आर्थिक दृष्टि से हीन दशा को सुधारने के लिए जन–साधारण की शिक्षा पर बल दिया और कहा, ''मैं जन–साधारण की अवहेलना करना महान् राष्ट्रीय पाप समझता हूँ। यह हमारे पतन का मुख्य कारण है। जब तक भारत की सामान्य जनता को एक बार फिर उपयुक्त शिक्षा, अच्छा भोजन तथा अच्छी सुरक्षा नहीं प्रदान की जायेगी तब तक प्रत्येक राजनीति बेकार सिद्ध होगी।''[8]

स्वामी जी ने शिक्षा को जन–साधारण तक पहुँचने पर विशेष बल दिया। स्वामी

जी का विचार है कि शिक्षा ही बालक का सर्वांगीण विकास- शारीरिक, मानसिक, नैतिक तथा आध्यात्मिक विकास एवं चरित्र निर्माण करने का महत्तवपूर्ण साधन है। जन-साधारण के कल्याण लिए शिक्षा को आवश्यक साधन के रूप में स्वीकार किया है।

निष्कर्ष- स्वामी जी के शिक्षा सम्बन्धी विचारों में प्राचीन तथा आधुनिक विचारों का समन्वय है। अत: वे जहाँ एक ओर बालक के आध्यात्मिक विकास पर बल देते हैं, वहाँ दूसरी ओर वे उसको लौकिक स्मृति के लिए भी तैयार करना चाहते है। इसी प्रकार एक महान् संत की भाँति स्वामी जी जहाँ एक ओर वसुधैव कुटुम्बकम् के भाव का प्रचार करते है वहाँ दूसरी ओर वे राष्ट्र को शक्तिशाली बनाने के लिए शक्ति के निर्माण तथा उसके संचय पर भी बल देते है।

स्वामी जी ने मानव जीवन के विभिन्न पक्षों पर अपने विचार व्यक्त किये हैं। उन्होंने बालक के शारीरिक, मानसिक, सामाजिक, व्यावसायिक तथा आध्यात्मिक विकास पर ही बल नहीं दिया अपितु स्त्री-शिक्षा, जनसमुदाय की शिक्षा तथा धार्मिक शिक्षा आदि अनेक पक्षों की विस्तृत व्याख्या करते हुए मानव के चारित्रिक विकास पर बल दिया है। स्वामी जी मानव जीवन के सम्पूर्ण पक्षों पर बल दिया है।

स्वामी जी के शिक्षा-दर्शन पर विहंगम दृष्टिपात करने के पश्चात् हम इस निष्कर्ष पर आते है कि वे हृदय से आदर्शवादी थे। उन्होंने सर्वप्रथम आध्यात्मिक विकास, दूसरे भौतिक समृद्धि, तीसरे जीवन की रक्षा तथा चौथे भोजन की समस्याओं के सुलझाने पर बल दिया। स्वामी जी ने जीवन की सभी पहलुओं पर बल दिया है।

स्वामी विवेकानन्द के शिक्षा-दर्शन में प्रकृतिवाद, आदर्शवाद तथा प्रयोजनवाद आदि सभी मुख्य-मुख्य दार्शनिक विचारधाराओं की झलक दिखाई पड़ती है। प्रकृतिवादियों की भाँति स्वामी जी ने बताया कि सच्ची शिक्षा प्रकृति से सम्पर्क में रहकर ही प्राप्त हो सकती है। आदर्शवादियों की भाँति उन्होंने बताया कि शिक्षा का मुख्य उद्देश्य बालक का आध्यामिक विकास करके उसके उस पूर्णत्व की अभिव्यक्ति करना है, जो उसमें पहले से ही विराजमान है। ऐसे ही प्रयोजनवादियों की भाँति स्वामी जी ने पाश्चात्य देशों की कला, उद्योग तथा तकनीकी शिक्षा की उपयोगिता को अपनी कला के साथ समन्वित करने का सुझाव प्रस्तुत किया। स्वामी विवेकानन्द के शिक्षा-दर्शन में सभी मुख्य दार्शनिक विचारधाराओं का सम्मलित रूप की झलक दिखाई पड़ती है। वे अपने शिक्षा-दर्शन में मानव कल्याण को सर्वोपरि मानते है।

संदर्भ ग्रन्थ सूची-

1. सक्सेना, एन. आर., (2009), उदीयमान भारतीय समाज में शिक्षक, आर. लाल बुक डिपो, मेरठ, पेज नं. 354-362
2. अग्रवाल, जे. सी. (2011), उदीयमान भारतीय समाज में अध्यापक, अग्रवाल पलिकेशन्स, आगरा, पेज नं. 234-237
3. सिंह, जी., (2013), उदीयमान भारतीय समाज में शिक्षक, आर. लाल बुक डिपो, मेरठ, पेज नं. 462-469
4. पाण्डेय, आर., चतुर्वेदी एम. (2013), उदीयमान भारतीय समाज में शिक्षक, अग्रवाल पलिकेशन्स, आगरा, पेज नं. 217-238

5. सक्सेना, एन. आर., (2009), उदीयमान भारतीय समाज में शिक्षक, आर. लाल बुक डिपो, मेरठ। पेज नं. 359
6. अग्रवाल, जे. सी. (2011), उदीयमान भारतीय समाज में अध्यापक, अग्रवाल पलिकेशन्स, आगरा, पेज नं. 237
7. सिंह, जी., (2013), उदीयमान भारतीय समाज में शिक्षक, आर. लाल बुक डिपो, मेरठ, पेज नं. 465
8. श्रीवास्तव मदन मोहन, शिक्षा के दार्शनिक एवं परिप्रेक्ष्य
9. माथुर, डॉ. एस. एस., शिक्षा के दार्शनिक एवं सामाजिक आधार
10. सर्व शिक्षा अभियान, सब पढ़े सब बढ़े प्रारम्भिक शिक्षा और साक्षरता विभाग, राजीव गांधी शिक्षा मिशन, (छ.ग.)
11. शिक्षा हेतु शिक्षकों के लिए प्रशिक्षण संदर्भिका (राज्य शैक्षिक अनुसंधान एवं प्रशिक्षण परिषद छ.ग. रायपुर)

UGC Journal No. (Old) 2138
Peer-Reviewed Research Journal
Impact Factor 4.875, ISSN 0975-4083
Vol.- 24, Hindi Edition, Year-12, Oct. 2022- March 2023

उत्तर-प्रदेश के शिक्षक-शिक्षा संस्थानों की नैक मान्यता का एक अध्ययन

• योगेश कुमार सिंह

सारांश- - उच्च शिक्षा में गुणवत्ता दुनिया भर के देशों का प्रमुख एजेंडा बन गया है। उच्च शिक्षा के विस्तार और आर्थिक गतिविधियों के वैश्वीकरण से चिह्नित बदलते संदर्भ में, शिक्षा एक राष्ट्रीय चिंता बन गई है। विश्वविद्यालय अनुदान आयोग (यूजीसी) से प्रदत्त वैधानिक शक्तियों के आधार पर संस्थानों के गुणवत्ता नियंत्रण के लिए प्रभावी तंत्र विकसित करने की अपेक्षा की जाती है। 1956 के यूजीसी अधिनियम की धारा 12 में विशेष रूप से यूजीसी को ''विश्वविद्यालयों में शिक्षण, परीक्षाओं और अनुसंधान के मानकों के निर्धारण और रखरखाव'' के लिए जिम्मेदार होने की आवश्यकता है। इस अधिदेश को पूरा करने की दिशा में, यूजीसी ने गुणवत्ता नियंत्रण के लिए विभिन्न निगरानी तंत्र विकसित किए हैं। गुणवत्ता आश्वासन शब्द आमतौर पर भारत में NAAC **जैसे संस्थान की गुणवत्ता के स्तर की पहचान करने के लिए एक बाहरी मान्यता एजेंसी से जुड़ा होता है। यूजीसी के तत्वावधान में गठित राष्ट्रीय मूल्यांकन और प्रत्यायन परिषद (एनएएसी) ने भारत में शैक्षणिक संस्थानों के मूल्यांकन की नई पद्धति लागू की है। नैक द्वारा प्रस्तावित ''गुणवत्ता माप'' के नए आयामों में उच्च शिक्षा संस्थानों के मूल्यांकन की सतत प्रक्रिया शामिल है। मूल्यांकन का परिणाम संस्थानों को प्रदान की जाने वाली अंतिम संस्थागत ग्रेडिंग है।** UGC **और** NAAC **ने गुणवत्तापूर्ण** HEI **को सुव्यवस्थित करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है। इस प्रक्रिया ने गुणवत्ता और इसे बनाए रखने के प्रति सभी हितधारकों की सोच को बदल दिया है और उन्हें इसकी उपलब्धि के लिए योगदान देने के लिए शामिल किया है।**

मुख्य शब्द- शिक्षक शिक्षा संस्थान, नैक, गुणवत्ता माप, संस्थागत ग्रेडिंग

परिचय- शिक्षा सीखने के तीनों क्षेत्रों में वांछनीय परिवर्तन लाती है। संज्ञानात्मक, प्रभावशाली और साइकोमोटर। ये वांछनीय परिवर्तन व्यक्ति को समाज और राष्ट्र के विकास में योगदान करने के लिए ढालते हैं। शिक्षा जानकार और कुशल व्यक्तियों का उत्पादन करती है जो अर्थव्यवस्था के विकास में योगदान करते हैं। बदले में, राष्ट्र शिक्षा के मानकों को बनाए रखने के लिए धन आवंटित करता है। शुल्ट्ज (1961) ने कहा कि शिक्षा पर व्यय उपभोग नहीं है, बल्कि एक निवेश है जिसके परिणामस्वरूप 'भौतिक

• **प्रोफेसर, शिक्षा-शास्त्र, कला संकाय, महात्मा गांधी चित्रकूट ग्रामोदय विश्वविद्यालय चित्रकूट, जिला-सतना, मध्य-प्रदेश, पिन-485334**

वस्तुओं के उत्पादन के लिए श्रम की क्षमता में वृद्धि' होती है। इस प्रकार कहा जा सकता है कि शिक्षा में निवेश किसी एक क्षेत्र की तुलना में अधिक उत्पादन प्राप्त करने में मदद करता है। हैनसेन (1963) ने संकेत दिया कि शिक्षा में निवेश पर रिटर्न की दर भौतिक पूंजी की दर से अधिक है। शिक्षा न केवल व्यक्ति के जीवन की गुणवत्ता को बढ़ाती है बल्कि राष्ट्र के विकास में भी मदद करती है। इस विचार को भारत सरकार (GOI) (2002) के विजन स्टेटमेंट में दर्शाया गया है, "शिक्षा एक जीवंत लोकतंत्र की नींव है जिसमें सूचित नागरिक राष्ट्र के आंतरिक विकास और इसकी रचनात्मक भूमिका का समर्थन करने के लिए अपने मताधिकार का प्रयोग करते हैं। विश्व समुदाय। यह उत्पादकता, आय और रोजगार के अवसरों में वृद्धि और जीवन की गुणवत्ता बढ़ाने के लिए विज्ञान और प्रौद्योगिकी के विकास, अनुप्रयोग और अनुकूलन के लिए आधार है।"

शिक्षक शिक्षा कार्यक्रम- स्कूली शिक्षा समाज का एक मजबूत संगठन है, जिसने अपने व्यक्तियों को शिक्षित करने के लिए संस्थानों की स्थापना की है। स्कूली शिक्षा समाज के आराम, विकास, प्रगति और व्यक्तियों के स्वस्थ जीवन के साथ-साथ सामाजिक गतिविधियों के सुचारू निष्पादन के उद्देश्यों पर काम कर रही है। पारंपरिक प्रकार की शिक्षा इन उद्देश्यों को पूरी तरह से संतुष्ट नहीं करेगी। वैश्विक आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए नवोन्मेषी, अद्यतन, उत्कृष्ट और आधारभूत आवश्यकता आधारित शिक्षा की आवश्यकता है। इसी चिंता के साथ विद्यालय समाज के दृष्टिकोण को ध्यान में रखते हुए शिक्षा में गुणात्मक परिवर्तन लाता है, जिससे शिक्षा की गुणवत्ता में सुधार आएगा और मानव जीवन की बेहतर गुणवत्ता सुनिश्चित होगी।

शिक्षक शिक्षा में गुणवत्ता आश्वासन- टीईपी और छात्र-शिक्षक सीखने में इनपुट को गुणवत्ता सुधार के बाद गुणवत्ता आश्वासन तंत्र की आवश्यकता होती है। संस्था के वैज्ञानिक मूल्यांकन के साथ इसकी माप द्वारा गुणवत्ता आश्वासन किया जा सकता है। यह आंतरिक और साथ ही बाहरी मूल्यांकन द्वारा किसी संस्था के स्वमूल्यांकन पर निर्भर करता है। केवल दर्जा प्राप्त करना ही काफी नहीं है बल्कि शिक्षा में गुणवत्ता सुधार लाने के लिए आवश्यक है। मूल्यांकन के माध्यम से आंतरिक गुणवत्ता आश्वासन स्वयं की तलाश से परे शिक्षा में प्रदर्शन के माध्यम से संभव है, निष्पक्षता के साथ महत्वपूर्ण जांच प्रशिक्षण, मूल्यांकन में कठोरता का रखरखाव, निष्पक्ष निर्णय, कार्यक्रम के अभ्यास की प्रासंगिकता, और परिणामों की रिकॉर्डिंग में निष्पक्षता शिक्षा के लिए मूल्यांकन।

एनसीटीई और मूल्यांकन और नैक द्वारा प्रत्यायन- राष्ट्रीय शिक्षक शिक्षा परिषद भारत सरकार का एक वैधानिक और स्वायत्त निकाय है, जो शिक्षक शिक्षा के लिए मानदंड और नियम प्रदान करता है। यह टीईपी के कामकाज के लिए टीईआई को मान्यता दे रहा है। एनसीटीई ने शिक्षक शिक्षा संस्थानों के लिए एनएएसी एए को स्वीकार कर लिया है। एनसीटीई निगरानी के साथ-साथ नैक द्वारा एए द्वारा गुणवत्ता मानकों को बनाए रख रहा है।

- शिक्षक शिक्षा संस्थानों के मूल्यांकन और प्रत्यायन के लिए कालानुक्रमिक मानदंड और वेटेज
- नैक द्वारा मूल्यांकन और प्रत्यायन के लिए शिक्षक शिक्षा संस्थानों की पात्रता

- अप्रैल 2007 से शिक्षक शिक्षा संस्थानों के मूल्यांकन और प्रत्यायन के लिए मैनुअल
- शिक्षक शिक्षा संस्थानों के मूल्यांकन और प्रत्यायन के लिए पद्धति
- अप्रैल 2007 से शिक्षक शिक्षा संस्थानों के मूल्यांकन और प्रत्यायन के लिए मानदंड
- ग्रेडिंग प्रणाली
- प्रमुख ग्रेड निर्धारक मानदंड और मैनुअल के प्रमुख पहलू

साहित्य की समीक्षा- पिल्लई और श्रीनिवास (2006) ने भारत के उत्तर-पूर्वी क्षेत्र में मान्यता के बाद के परि–श्य के संदर्भ में NAAC प्रक्रियाओं और प्रक्रियाओं के मेटा-मूल्यांकन के रूप में एक शोध अध्ययन किया। शोधकर्ताओं ने भारत के उत्तर-पूर्वी क्षेत्र में मान्यता के बाद के परिदृश्य में संस्थानों पर इसकी स्वीकार्यता और प्रभाव का पता लगाने के लिए NAAC द्वारा अध्ययन किया। अध्ययन एक मेटा-मूल्यांकन अध्ययन था। मान्यता प्राप्त कॉलेजों के लगभग 150 प्राचार्यों ने कुछ प्रासंगिक पहलुओं पर नैक की प्रक्रियाओं और प्रक्रियाओं पर अपनी राय के रूप में फीडबैक प्रदान किया। प्रतिक्रिया ने मूल्यांकन प्रक्रिया की वैधता और प्रभावकारिता निर्धारित करने के लिए समझ, स्पष्टता, प्रासंगिकता, उपयोगिता और प्रयास के मेटा-मूल्यांकन मानदंड को प्रतिबिंबित किया।

कौर और शर्मा (2012) ने पंजाब में शिक्षा के कॉलेजों के लिए नैक के एए मानदंड पर एक सर्वेक्षण किया। अध्ययन के उद्देश्य कॉलेजों की जरूरतों और सीमाओं के आलोक में NAAC द्वारा अनुसरण किए गए शिक्षा के कॉलेजों के लिए AA के वर्तमान मानदंडों का गंभीर रूप से विश्लेषण करना था। NAAC मान्यता के बाद शिक्षक शिक्षा की गुणवत्ता में सुधार के लिए उन कॉलेजों द्वारा की गई गुणवत्ता जागरूकता और पहल के वर्तमान स्तर का अध्ययन करना और शिक्षा के कॉलेजों के लिए AA के लिए NAAC के मौजूदा मानदंडों में सुधार के लिए सुझाव देना। नमूना 2011 तक NAAC द्वारा मूल्यांकन और मान्यता प्राप्त पंजाब में 75 शिक्षा महाविद्यालयों और 03 विश्वविद्यालयों (जहां शिक्षा विभाग मौजूद है) का था। अध्ययन के लिए डेटा एकत्र करने के लिए स्व-निर्मित प्रश्नावली का उपयोग किया गया था। अध्ययन ने डेटा विश्लेषण के लिए टी-टेस्ट और औसत की गणना का उपयोग किया।

राजा सिंह (2009) ने उच्च शिक्षा में गुणवत्ता मूल्यांकन पर एक सर्वेक्षण किया। अध्ययन के प्रमुख उद्देश्य भारत में उच्च शिक्षा के छात्रों और संकायों की गुणवत्ता पर विभिन्न हितधारकों की धारणाओं को मापने के लिए एक अद्वितीय गुणवत्ता माप उपकरण विकसित करना थाय भारत में उच्च शिक्षा की गुणवत्ता पर विभिन्न हितधारकों के बीच धारणा अंतर को निर्धारित करने के लिए और हितधारकों की धारणाओं पर जनसांख्यिकीय चर के प्रभाव को निर्धारित करने के लिए। तमिलनाडु के छह अलग-अलग इंजीनियरिंग कॉलेजों से 200 संकायों, 487 छात्रों, 160 पूर्व छात्रों और 100 उद्योग कर्मियों का नमूना यादृच्छिक रूप से चुना गया था। छात्रों के लिए 23 आइटम और संकायों के लिए उनकी गुणवत्ता धारणाओं को मापने के लिए 18 आइटम वाले

पांच-बिंदु लिकर्ट स्केल का उपयोग करके एक प्रश्नावली का निर्माण किया गया था।

उल्मर (2015) ने प्रत्यायन परिणाम स्कोर में प्रत्यायन प्रक्रिया और व्यावसायिक विकास के प्रति शिक्षकों के दृष्टिकोण का अध्ययन किया। अध्ययन के उद्देश्य स्कूल मान्यता प्रक्रिया और व्यावसायिक विकास के प्रति शिक्षकों के दृष्टिकोण और स्कूल मान्यता परिणाम स्कोर के बारे में चर के बीच बातचीत की जांच करना था। यह एक मात्रात्मक आकस्मिक-तुलनात्मक अध्ययन था। नमूना दुनिया भर में शिक्षा में उत्कृष्टता (Advanced), संयुक्त राज्य अमेरिका (यूएसए) द्वारा मान्यता प्राप्त चार स्कूलों के 61 शिक्षकों का था। शोधकर्ता ने विद्यालय के शिक्षकों के सकारात्मक या नकारात्मक दृष्टिकोण को मापने के लिए एक प्रश्नावली का उपयोग किया। अध्ययन में पाया गया कि नकारात्मक दृष्टिकोण वाले शिक्षकों की तुलना में मान्यता प्रक्रिया के प्रति सकारात्मक दृष्टिकोण वाले शिक्षकों में मान्यता स्कोर काफी अधिक थे। मान्यता प्रक्रियाओं के लिए अनुशंसित अभ्यास शिक्षकों को हितधारकों से निरंतर संसाधन प्रदान कर रहे थेय शिक्षकों को निरंतर सुधार और छात्र उपलब्धि पर ध्यान केंद्रित करने में सक्षम बनाने के लिए मान्यता प्रक्रियाओं में शैक्षिक नेताओं की भागीदारी।

कात्रे और पिल्लई (2004) ने कर्नाटक की प्रत्यायन रिपोर्ट का राज्यवार विश्लेषण किया। अध्ययन का उद्देश्य उच्च शिक्षा की गुणवत्ता में वृद्धि के दृष्टिकोण से पीटीआर का अध्ययन करना थाय पीटीआर से डेटा और पहले उल्लिखित बातचीत से विचारों और सुझावों के आधार पर सामान्य मुद्दों और उनके समाधानों को खोजने और सूचीबद्ध करने के लिएय और राज्य सरकार, विश्वविद्यालय और अन्य संबंधित एजेंसियों को सिफारिशें करना। अलग-अलग संस्थानों के पीटीआर और एनएएसी प्रत्यायन ग्रेड शीट का सांख्यिकीय गणना और सामग्री विश्लेषण दोनों का उपयोग करके अध्ययन में विश्लेषण किया गया था। 29 अप्रैल 2003 को भारत के 94 विश्वविद्यालयों और 448 कॉलेजों में से लगभग आठ विश्वविद्यालयों और कर्नाटक के 69 कॉलेजों को NAAC द्वारा मान्यता दी गई थी। कर्नाटक में इस अवधि के दौरान केवल एक शिक्षा कॉलेज को मान्यता दी गई थी।

उद्देश्य- राष्ट्रीय मूल्यांकन एवं प्रत्यायन परिषद (NAAC) द्वारा मान्यता प्राप्त उत्तर प्रदेश राज्य के शिक्षक शिक्षा संस्थानों (शिक्षक शिक्षा संस्थानों) की समग्र प्रत्यायन स्थिति का अध्ययन करना।

कार्यप्रणाली- प्रस्तुत पेपर में अध्ययन की शोध रूपरेखा शामिल है। यह पत्र कार्यप्रणाली प्रस्तुत करता है, जिसमें वर्तमान अध्ययन के लिए नियोजित जनसंख्या, नमूना, उपकरण, डेटा संग्रह और डेटा विश्लेषण तकनीक शामिल हैं।

अध्ययन के लिए नमूना- उत्तर प्रदेश के सभी 57 NAAC मान्यता प्राप्त शिक्षक शिक्षा संस्थानों को समग्र मान्यता स्थिति का अध्ययन करने के लिए नमूने के रूप में चुना गया थाय विभिन्न प्रकार के शिक्षक शिक्षा संस्थानों के सात मानदंडों और समग्र सीजीपीए पर सीजीपीए की तुलना करना और शिक्षक शिक्षा संस्थानों के सात मानदंडों और समग्र सीजीपीए के बीच संबंध का अध्ययन करना। इसमें सभी मान्यता प्राप्त 57 शिक्षक शिक्षा संस्थानों के गुणवत्ता प्रोफाइल ग्रेड शीट का दस्तावेज शामिल था।

परिणाम और चर्चा- उपरोक्त उद्देश्य संख्या का विश्लेषण और व्याख्या करने के लिए सभी 57 नैक मान्यता प्राप्त शिक्षक शिक्षा संस्थानों और उनके पीटीआर की एडीईएफ सूची से डेटा का उपयोग किया गया था। शिक्षक शिक्षा संस्थानों की प्रत्यायन स्थिति का विश्लेषण आरोही-अवरोही, आवृत्ति वितरण, प्रतिशत गणना और माइक्रोसॉफ्ट ऑफिस एक्सेल में उपयोग किए गए सूत्रों की सहायता से औसत गणना का उपयोग करके किया गया था। उद्देश्य संख्या की पूर्ति में।[1] उत्तर प्रदेश में शिक्षक शिक्षा संस्थानों की प्रत्यायन स्थिति का विश्लेषण और व्याख्या तालिका में दी गई है।

सभी शिक्षक शिक्षा संस्थानों में से उत्तर प्रदेश में मान्यता प्राप्त विभिन्न प्रकार के शिक्षक शिक्षा संस्थान उत्तर प्रदेश में शिक्षक शिक्षा संस्थानों ने NAAC मूल्यांकन किया था और उन्हें ग्रेड और CGPA के साथ मान्यता प्राप्त थी। विभिन्न प्रकार के मान्यता प्राप्त शिक्षक शिक्षा संस्थान शहरी, ग्रामीण, सरकारी, जीआईए और एसएफ थे। ADEF से, 2015 में मौजूदा शिक्षक शिक्षा संस्थानों में से विभिन्न प्रकार के NAAC मान्यता प्राप्त शिक्षक शिक्षा संस्थानों (अप्रैल 2007 से मार्च 2015 तक) का विवरण तालिका संख्या 01 में दिया गया है।

तालिका 01
सभी शिक्षक शिक्षा संस्थानों में से उत्तर प्रदेश में मान्यता प्राप्त विभिन्न प्रकार के शिक्षक शिक्षा संस्थानों की संख्या

शिक्षक शिक्षा संस्थानों के प्रकार	सरकार	जी आई ए	एस एफ	कुल शहरी और ग्रामीण
शहरी शिक्षक शिक्षा संस्थानों की संख्या	2	30	109	141
मान्यता प्राप्त शहरी शिक्षक शिक्षा संस्थानों की संख्या	1	20	9	30
मान्यता प्राप्त शहरी शिक्षक शिक्षा संस्थानों का प्रतिशत	(50.00)	(66.67)	9	30
सभी 315 शिक्षक शिक्षा संस्थानों में से शिक्षक शिक्षा संस्थानों का प्रतिशत	(0.32)	(6.35)	(2.86)	(9.52)
ग्रामीण शिक्षक शिक्षा संस्थानों की संख्या	4	11	159	174
मान्यता प्राप्त ग्रामीण शिक्षक शिक्षा संस्थानों की संख्या	0	11	16	27
मान्यता प्राप्त ग्रामीण शिक्षक शिक्षा संस्थानों का प्रतिशत	(0.00)	(100.00)	(10.06)	(15.52)
सभी 315 शिक्षक शिक्षा संस्थानों में से शिक्षक शिक्षा संस्थानों का प्रतिशत	(0.00)	(3.49)	(5.08)	(8.57)
कुल संख्या सरकार, जीआई	6	41	268	315
मान्यता प्राप्त सरकारी, जीआई	1	31	25	57
मान्यता प्राप्त सरकारी, जीआईए और एसएफ शिक्षक शिक्षा संस्थानों का प्रतिशत	(16.66)	(75.61)	(9.33)	(18.10)
सभी 315 शिक्षक शिक्षा संस्थानों में से शिक्षक शिक्षा संस्थानों का प्रतिशत	(0.32)	(9.84)	(7.94)	(18.10)

उत्तर प्रदेश के मान्यता प्राप्त शिक्षक शिक्षा संस्थानों का ग्रेड-वार वितरण ADEF में प्रत्येक ज्म्प्के ग्रेड और ब्ळच। के बारे में डेटा होता है। तालिका संख्या 1 अप्रैल 2007 से मार्च 2015 तक सीजीपीए प्रणाली के तहत उत्तर प्रदेश के मान्यता प्राप्त शिक्षक शिक्षा संस्थानों का ग्रेड-वार वितरण देती है।

तालिका 02

अप्रैल 2007 से मार्च 2015 तक नई नियमावली की सीजीपीए प्रणाली के तहत उत्तर प्रदेश के मान्यता प्राप्त शिक्षक शिक्षा संस्थानों का ग्रेड-वार वितरण

सीजीपीए ग्रेड पत्र	प्रदर्शन वर्णनकर्ता (स्थिति)	मान्यता प्राप्त शिक्षक शिक्षा संस्थानों की संख्या (प्रतिशत)
A	बहुत अच्छा	03 (5.26)
B	अच्छा	46 (80.70)
C	संतोषजनक	08 (14.04)
कुल मान्यता प्राप्त शिक्षक शिक्षा संस्थान		57 (100.00)
D	असंतोषजनक	01
	सभी मूल्यांकित शिक्षक शिक्षा संस्थान	58

उत्तर प्रदेश के विभिन्न प्रकार के शिक्षक शिक्षा संस्थानों का ग्रेड–वार वितरण सीजीपीए सिस्टम के तहत उत्तर प्रदेश के 57 शिक्षक शिक्षा संस्थानों से एनएएसी से मान्यता प्राप्त विभिन्न प्रकार के ग्रेड–वार वितरण की संख्या तालिका संख्या में दी गई है विभिन्न प्रकार के मान्यता प्राप्त शिक्षक शिक्षा संस्थान शहरी, ग्रामीण, सरकारी, जीआईए और एसएफ को तालिका में ग्रेडवार वितरित किया गया था।

तालिका 03

विभिन्न प्रकार के शिक्षक शिक्षा संस्थानों के ग्रेड-वार वितरण की संख्या

विवरण	शहरी	ग्रामीण	कुल	जीआईए	एस एफ	कुल
'ए' ग्रैंड टीचर एजुकेशन संस्थानों की संख्या	3	0	3 (5.26)	3	0	3 (5.26)
'ए' ग्रेड का प्रतिशत	(10.00)	(0.00		(9.28)	(0.00)	
शहरी/ग्रामीण, जी आइ						
'ए' ग्रेड का प्रतिशत	(5.26)	(0.00)		(5.26)	(0.00)	
57 में से शहरी –ग्रामीण, जी आइ एस एफ शिक्षक शिक्षा संस्थान						
'बी' ग्रेड शि क्षक शिक्षा संस्थानों की संख्या	23	23	46 (80.70)	23	23	46 (80.70)
'बी' ग्रेड का प्रतिशत	(76.67)	(85.19)		(71.88)	(92.00)	
शहरीध्ग्रामीण, जी आइ एध्एस एफ शिक्षक शिक्षा संस्थान						
'बी' ग्रेड का प्रतिशत	(40.35)	(40.35)		(40.35)	(40.35)	
57 में से शहरीध्ग्रामीण, जी आइ एध्एस एफ शिक्षक शिक्षा संस्थान						
'सी' ग्रैंड टीचर एजुकेशन संस्थानों की संख्या	4	4	8 (14.04)	6*	2	8* (14.04)
'सी' ग्रेड का प्रतिशत	(13.33)	(14.81)		(18.75)	(8.00)	
शहरीध्ग्रामीण, जी आइ एध्एस एफ शिक्षक शिक्षा संस्थान						
'सी' ग्रेड का प्रतिशत	(7.02)	(7.02)		(10.53)	(3.51)	
57 में से शहरीध्ग्रामीण, जी आइ एध्एस एफ शिक्षक शिक्षा संस्थान						
सभी भव्य शिक्षक शिक्षा संस्थानों की संख्या	30	27	57 (100.00)	32	25	57 (100.00)
सभी ग्रेड का प्रतिशत	(100.00)	(100.00)		(100.00)	(100.00)	
शहरी/ग्रामीण, जी आइ ए /एस एफ शिक्षक शिक्षा संस्थान						
सभी ग्रेड का प्रतिशत	(52.63)	(47.37)		(56.14)	(43.86)	
57 में से शहरी /ग्रामीण, जी आइ ए /एस एफ शिक्षक शिक्षा संस्थान						

उत्तर प्रदेश के मान्यता प्राप्त शिक्षक शिक्षा संस्थानों का मानदंड-वार और समग्र सीजीपीए एडीईएफ में टाइप किए गए संबंधित टीईआई की ग्रेड शीट से मानदंड-वार और समग्र सीजीपीए और सभी मान्यता प्राप्त शिक्षक शिक्षा संस्थानों के उस मानदंड-वार और समग्र सीजीपीए का औसत सीजीपीए। प्रत्येक मानदंड-वार और समग्र औसत सीजीपीए को नैक की समान चार-बिंदु पैमाने ग्रेडिंग प्रणाली के अनुसार आगे विशिष्ट ग्रेड आवंटित किए गए थे। उत्तर प्रदेश के सभी मान्यता प्राप्त शिक्षक शिक्षा संस्थानों के ग्रेड के साथ मानदंड-वार और समग्र औसत सीजीपीए तालिका संख्या में दिया गया है।

तालिका 04

उत्तर प्रदेश के सभी मान्यता प्राप्त शिक्षक शिक्षा संस्थानों के लिए मानदंड-वार और समग्र सीजीपीए का औसत

	मानदंड	सीजीपीए	श्रेणी
1	पाठ्यचर्या पहलू	2.36	B
2	शिक्षण अधिगम और मूल्यांकन	2.46	B
3	अनुसंधान, परामर्श और विस्तार	1.99	B
4	बुनियादी ढांचा और सीखने के संसाधन	2.41	B
5	छात्र समर्थन और प्रगति	2.51	B
6	सरकार और नेतृत्व	2.29	B
7	अभिनव प्रथाएं	2.13	B
	कुल सीजीपीए	2.37	B

मूल्यांकनकर्ताओं की संख्या NAAC ने शिक्षक शिक्षा संस्थानों के आकलन के लिए संस्थान के ऑन-साइट दौरे के लिए पीयर टीम आवंटित की थी। नैक ने मूल्यांकनकर्ताओं की पंजीकृत सूची के डेटाबेस से पीयर टीमों का निर्माण किया था। NAAC ने विशेष संस्थान की यात्रा के लिए अध्यक्ष, सदस्य समन्वयक या सदस्य के रूप में मूल्यांकनकर्ताओं को एक भूमिका दी थी। एनएएसी के अनुसार पीयर टीम में निर्धारक की भूमिका और जिम्मेदारियां बदल सकती हैं। सभी 57 मान्यता प्राप्त शिक्षक शिक्षा संस्थानों के मूल्यांकनकर्ताओं के बारे में डेटा तालिका संख्या में दिया गया है।

तालिका 05

दो या तीन मूल्यांकनकर्ताओं द्वारा मूल्यांकित शिक्षक शिक्षा संस्थानों की संख्या

	विवरण	शिक्षक शिक्षा संस्थानों की संख्या
1	तीन निर्धारकों द्वारा मूल्यांकित शिक्षक शिक्षा संस्थानों की संख्या	50 (87.72)
2	दो निर्धारकों द्वारा मूल्यांकित शिक्षक शिक्षा संस्थानों की संख्या	7 (100.00)
	कुल	57 (100.00

निष्कर्ष- नैक हमारे संस्थानों की गुणवत्ता में सुधार करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है, मान्यता प्रक्रिया में अभूतपूर्व प्रयास किए गए हैं जो संस्थान को एक सूचित समीक्षा के माध्यम से अपनी ताकत, कमजोरियों और अवसरों को जानने में मदद करता है। आंतरिक गुणवत्ता आश्वासन प्रकोष्ठ स्थापित करने के लिए एसएलक्यूएसी को सकारात्मक रूप से कार्य करने और अपने संबंधित राज्यों में सभी मान्यता प्राप्त संस्थानों को प्रेरित करने की आवश्यकता है। अंततः, प्रत्येक मान्यता प्राप्त संस्थान के लिए बाहरी गुणवत्ता मूल्यांकन और मूल्यांकन तंत्र की तुलना में आंतरिक गुणवत्ता आश्वासन तंत्र

पर अधिक भरोसा करना आवश्यक है। संस्था के भीतर गुणवत्ता आश्वासन की संस्कृति में वृद्धि सुनिश्चित करने के लिए उच्च शिक्षा संस्थान जो दोनों मान्यता प्राप्त हैं, गुणवत्ता आश्वासन तंत्र को आंतरिक और संस्थागत बनाने के महत्व का एहसास करेंगे और सकारात्मक प्रतिक्रिया देंगे ताकि गुणवत्ता संस्थानों की बहुत धमनियों में एक के रूप में चले, गुणवत्ता संस्कृति।

संदर्भ ग्रन्थ सूची-

1. शिक्षक शिक्षा संस्थानों के स्व-मूल्यांकन के लिए संस्थागत प्रत्यायन नियमावली।
2. अग्रवाल, जे.सी., 1998, भारत में शिक्षक की भूमिका, स्थिति, सेवा शर्तें और शिक्षा। दोआबा हाउस, दिल्ली
3. गोस्वामी, डी., 2007, गुणवत्ता शिक्षक शिक्षा के छात्र शिक्षकों की धारणा। अन्वेशिका इंडियन जर्नल ऑफ टीचर एजुकेशन, वॉल्यूम 4
4. जोशी, एस., 2007, पूर्वव्यापी में शिक्षक शिक्षा। इंडियन जर्नल ऑफ टीचर एजुकेशन, वलॅयूम 4
5. चटर्जी, एस.के., 2008, टीचर एजुकेशन: इट्स रिवाइटलाइजेशन एंड क्वालिटी कंट्रोल। अन्वेशिका - इंडियन जर्नल ऑफ टीचर एजुकेशन। खंड-5 संख्या 2 (एनसीईआरटी)
6. पिल्लई, के.एन.एम., और श्रीनिवास, जी., 2006, भारत के उत्तर पूर्वी क्षेत्र में प्रत्यायन के बाद के परि–श्य का अध्ययन: राष्ट्रीय मूल्यांकन और प्रत्यायन परिषद की प्रक्रियाओं और प्रक्रियाओं का एक मेटा-मूल्यांकन। जर्नल क्वालिटी इन हायर एजुकेशन, 12(1), 95-106 डीओआई: 10-1080/13538320600685222
7. कौर और शर्मा, 2012, प्रत्यायन रिपोर्ट का राज्यवार विश्लेषण, कर्नाटक, बैंगलोर
8. राजासिंह, एस., 2009, उच्च शिक्षा में गुणवत्ता का ऑकलन। (अप्रकाशित पीएचडी थीसिस)। प्रबंधन अध्ययन विभाग, मनोनमनियम सुंदरनार विश्वविद्यालय, तिरुनेलवेली। http%//hdl-handle-net/ 10603/26765 से लिया गया
9. उल्मर, पी. जी., 2015, प्रत्यायन परिणाम अंक: प्रत्यायन प्रक्रिया और व्यावसायिक विकास की ओर शिक्षक का रवैया। (एक डॉक्टरेट शोध प्रबंध)। प्रोक्वेस्ट निबंध प्रकाशन से उपलब्ध। (यूएमआई नंबर 3083800)
10. कात्रे, एस., और पिल्लई, एल., 2004, प्रत्यायन रिपोर्ट का राज्यवार विश्लेषण - कर्नाटक। बैंगलोर: नैक।

UGC Journal No. (Old) 2138
Peer-Reviewed Research Journal
Impact Factor 4.875, ISSN 0975-4083
Vol.- 24, Hindi Edition, Year-12, Oct. 2022- March 2023

जनदेवता- भगवान शिव

•आशुतोष शुक्ल

सारांश- समाज से वंचित, शोषित, परित्यक्त, अभिशप्त लोगों के उत्थान, सेवा के साथ जो आगे बढ़ता है और सभी समाज, जाति वर्ग से ऊपर उठकर प्राणि मात्र के हित साधन व कल्याण कार्य में तत्पर रहता है। जन नेता जनसेवक की उपाधि से प्रतिष्ठित होता है। जो अपने हित के लिए नही दूसरों के हित के लिए कार्य करता है, जन नेता होता है। जो बिना किसी भेदभाव के वंचितो, शोषितों के मध्य में रहकर कार्य करता हैं जन नेता है। इसी प्रकार भगवान शिव भी समाज से वंचित जीव, जन्तुओं को अपने शरीर मे भी स्थान देते है व भूत प्रेतों के मध्य में रहकर उनके हित के साथ सृष्टिमात्र के हित में लगे है व उनके लिए सुमता सगम्य उन्ही के लोक स्थान ''कैलाश'' अविमुक्त क्षेत्र है। काशी में रहकर जन देवता के रूप में प्रतिष्ठित है वैसे आज मतदान की स्थिति में सभी मत की एक बराबर कीमत है। चाहे वह समाज की सबसे नीची सीढ़ी पर हो या प्रथम सीढ़ी पर। पर कुछ लोंग इससे भी जाति धर्म, के नाम पर नेता बनना चाहते है, बन भी जाते है, पर जन नेता नही। जन नेता बनने के लिए अभेद दृष्टि आवश्यक है। जाति, धर्म से ऊपर उठर जो समाज के वंचित, शोषित, वाह्य, दलित, अशक्त, असहाय, वेसहारा सभी का आश्रय बनकर सबके साथ समान रूप से उनके भी विकास के रूप में चिन्तन करता है और साथ लेकर एक बहुआयामी स्वस्थ्य समाज की परिकल्पना व स्थापना के विषय में कार्य करता है वही जन नेता बनता है और जन नेता है भी इससे परे नेता बन सकते है पर जन नेता नही।

मुख्य शब्द - वंचित, शोषित, परित्यक्त, जन नेता, जनसेवक

लोक में खाश से आम की ओर सविशेष से अविशेष की ओर अभिजात से अभिसप्त की ओर अग्रसर होने वाला तथा अति ऊचाई से अंतिम पयदान में स्थित तक पहुँचने वाला व्यक्ति ही समाज का नेतृत्व करने की क्षमता वाला होता है। अंतिम पैदान में स्थित मूंमू को देश के प्रथम स्थान तक पहुँचाने वाला देश का प्रमुख सेवक तो होता ही है विश्व में जन नेता के प्रथम पद पर भी प्रतिष्ठित हो जाता है। बिना आम के आश्रय के यह सम्भव नही है। पर यह आमा श्रवण निश्चित होना चाहिए। अन्यथा अभिष्ट तक पहुँचकर व्यक्ति स्थायित्व नही प्राप्त कर सकता। कुछ समय के लिए उसे आत्मश्लाघा अवश्य होगी पर विनाश में भी विलम्ब नही होगा। पहले भी लोग आम के माध्यम से ऊपर उठे पर उनका आश्रय केवल अपने विकास व प्रतिष्ठा के लिए, परिणाम स्वरूप अंत में पुनः

• सहायक प्राध्यापक, संस्कृत, एस.आर.पी.कालेज, हनुमना

नीचे के पायदान पर पहुॅच गये। भारतीय जनता पार्टी जब तक अभिजात्याश्रवण में थी तो तब समिति रह गयी पर अपने में जब संशोधन किया आम का आश्रय लिया तो केन्द्र में अपने बल पर स्थित होकर कई राज्यों में स्थान बनाया। जन का होने का तात्पर्य है कि सर्वोच्च स्थिति से लेकर अंतिम पायदान पर स्थित सब के विकास की सबके हित की समान चिन्ता, जो ऐसा करता है वही जन नेता के रूप में पूजित होता है। यही स्थिति देव वर्ग का भी है। इसी कसौटी पर हम देव समुदाय पर भी चिन्तन करेगें।

बामदेव भगवान शिव बस में करने के लिए सारे चराचर को अपने प्रभाव में ले लेता है। फिर भी शिव को प्रमाणित न कर सकने स्थिति में वह भी आम (सौरभ) का आश्रय लेता है। वह शिव को लोक कल्याण हेतु विवाह के लिए बाध्य करना चहता है। पर अपना प्रभाव ऐश्वर्य प्रकट कर। इसलिए उसका विनाश होता है। यदि आम का आश्रय लेकर शिव की शरण में जाता है तो शायद दूसरा दृश्य होता है। यहा आम से तात्पर्य जन सामान्य है वे अंतिम पायदान पर स्थित व्यक्ति से न किसी जाति वर्ग विशेष से न किसी विशेष धर्मपंथ से।

इसी कड़ी में जब हम रामकथा की ओर पर दृष्टिपात करते है तब पता चलता है कि राम अयोध्या के राज्य को छोड़कर वन जाने की, अपना परम् और बड़ा कार्य मानते है। वन में जाकर जहा एक ओर संतो महात्माओं ज्ञानियों का साथ प्राप्त कर ज्ञान और अनेक विद्यायें प्राप्त करते है वही कोल, किरात, वनवासियों अर्थात आम जन का साथ लेकर यहा तक कि वानर, भालू और पक्षियों को साथ लेकर जहॉ समुद्र पर असम्भव सेतु निर्माण करते है वही दुर्जेय रामवण जैसे अभिजात्य दुर्दन्ति अहंकारी पर विजय प्राप्त करते है, क्योकि राम स्वयं कहते है कि "तुम्हारे बल मै रावण मारेउ। तिलक विभिषण कर पुनि सारेउ।।" इसलिए राम-राम हुए। आज मर्यादा पुरूसोत्तम के रूप में पूजित है। कृष्ण भी मथुरा से निकल कर गोकुल एवं ब्रज में रहकर गायों व ग्वालवालो का साथ लेकर उस समय की दुर्दान्त शक्तियों पर विजय प्राप्ति की ओर शान्ति की स्थापना की।

शिव का रूप व कार्य भी इन्ही की तरह है। पर उनका वेष, उनका कार्य, उनकी रहनि, उनका परिवार, सब आम के अनुरूप या उनका जैसा ही है। इसलिए विशेष जन देवता है। इसी से देव, दानव, मानव, राक्षस, व भूत प्रेतों के भी पूज्य व मान्य है। यहॉ तक कि समाज से उपेक्षित जीव जन्तुओं के भी आश्रय व पालक है।

भगवान शंकर को, जनता ने देव से "महादेव" बना दिया। यदि वे चाहते तो "महादेव" बनते महल खड़े कर लेते। भाँग धतूरा छोड़ मेवा मलाई खाने लगते। बैल की सवारी छोड़कर वायुयान विहारी हो जाते। लेकिन महादेव "भोले" बाबा ही बने रहे। स्मसान में ही रहते रहे। स्मसान की राख लपेटते रहे। गज चर्म ओढ़ते रहे और सर्पो से शरीर को सजाते रहे। भोजन के लिए बेल धतूरा का संग्रहण करते रहे। हर प्रकार के सुगंधित पुष्पों से दूर रहकर आपमंदार पुष्पों से ही सतुष्ठ होते रहे। जिसका कोई ग्राहक नही उसके संग्रहण से किसी को कुछ कहने की व अँगूली उठाने की कोई आवश्यकता न पड़े ऐसा सर्व त्यागी, निसपृह, निस्वार्थगत सेवक व्यक्ति या देव ही "महादेव" ही बन सकता है। इसलिए वे जन-जन के प्रिय और पूज्य हुये।

भगवान शिव भारत के जन देवता है। भारतीय जनता इन्हे जन देव के रूप में ही मानती और पूजती है। वैसे भारतीय मानता के अनुसार तैतीसकोटि देवताओं की सत्ता और महत्ता है। नित नये–नये देवी देवता गढ़े जा रहे है। और स्वयंभू पैदा भी हो रहे है या यो कहे कि आज भगवानों की भरमार है। पर जो महत्व भोले बाबा को प्राप्त है वह किसी दूसरे को नही। जनहित के लिए विष का घड़ा पीने वाले महादेव ही है। इनके विषपान में लोक कल्याण ही इनके शिवत्व की पराकाष्ठा है। अमृत पीनेवाले जहा थे वही रह गये। देव से आगे नही बढ़ पाये। विषपान कर शिव देवत्व की सीमा को लांघ महादेव महेश्वर हो गये। भगवान शिव विषपान कर जनलोक को शिक्षा भी दे रहे है। समाज में काम, क्रोध, लोभ, दम्भ, मद, मात्सर्य ही विष है। जो इसको पी जाता है और लोक कल्याण में तत्पर रहता है। वही महनीय है और महत्व को प्राप्त करता है। शिव विष न विष को मुख में रखते है और न पेट में ही ले जाते है इससे यह शिक्षा दे रहे है कि यदि किसी भी विष रूप दुरक्तियों कटु वचनों व अपमान को मुख में रखोगे तो प्रतिक्रिया होगी जिसका फल भयावह होगा। पेट में रखोगें तो हमेशा प्रतिशोध की भावना बनी रहेगी। इसलिए न बाहर न भीतर मध्य में रखों यह तुम्हारी सहनशीलता, तुम्हारा भूषण होगी और मेरी तरह नीलकण्ठ हो जाओगें। विश्वनाथ बनने का भारतीय आदर्श यही है। अपने न खाने की चिन्ता न पहने की। समस्त वैभव जनता के लिए। अपने लिए केवल चिन्ता भस्म की विभूति रखनेवाला ही भारत में "राष्ट्रनायक" अथवा "राष्ट्रपिता" बन सकता है। जन नेता व जन देवता हो सकता है। यही कारण है कि भारत में शिवोपासको की संख्या सर्वाधिक है। किसी न किसी रूप में शिव सभी के प्रेरणादाय है।

शिव का सानिध्य सबको प्राप्त है। जहॉ समस्त अन्य देवी–देवता दूसरे लोको के निवासी है अर्थात कोई स्वर्गलोक में, कोई ब्रह्लोक में, कोई इन्द्रलोक में तो कोई गोलोक में तो कोई बैकुण्ठ लोक के निवासी है। इनके पास पहुॅचने या इनका सानिध्य प्राप्त करने का प्रश्न ही नही उठता है। पर शिव हमारे लोक में ही हमारे हिमालय की एक चोटी कैलाश पर निवास करते है। उनकी राजधानी महास्मसान और आनंदवनी काशी है। द्वादश ज्योतिर्लिंगों के रूप में समस्त भारत में विराजमान है। अतः उन्हे खोजने में किसी को भटकना न पड़ेगा। भोले बाबा चहारदीवारी से घीरे महल निवासी नही है। उनका निवास स्थान स्मसान भूमि है। उनको मठाधीश बनाकर पूजाया नही चढ़ाया जा सकता है। जिसका प्रसाद "निर्माल्य" है उसे खाया नही जा सकता। उनकी पूजा के लिए न मंदिर की आवश्यकता है, न बहुमूल्य मूर्ति निर्माण की। बालू या मिट्टी का शिवलिंग बनाकर जहॉ इच्छा हो वहा पार्थिव पूजन किया जा सकता है। यदि यह भी न मिले तो अपने दाहिने अँगूठे को शिवलिंग मानकर पूजा की जा सकती है। पूजन सामग्री में भी कुछ नही है तो एक लोटा जल, दो अक्षत व दो बिल्वपत्र ही पर्याप्त है। शिव इतने से ही प्रसन्न होकर अपना सर्वस्व दे सकते है। इससे बढ़कर सर्व सामान्य जन–जन का देवता कौन हो सकता है? इसलिए जो पुष्पदन्त स्तुति करते हुए कहते है–

आत्मात्वं गिरजा मतिः सहचरा प्राणाः शरीरंगृहं,
पूजा ते विषयोपभोग रचना निद्रासमाधिस्थितिः।
संचारः पदयो प्रदक्षिणविधिः स्तोत्राणिसर्वागिरः,
यत यत कर्म करोमि तद्तद्खिलं शम्भोतवाराधनम्।।

भक्त शिव के साथ अपनत्व का बोध कराता है इसलिए शिव के लिए व्यंग करने में भी संकुचित नही होता बल्कि आनंदानुभूति करता है। भक्तो को ऐसा अपनत्व किसी अन्य देवों से नही प्राप्त है। देवों ने शिव से रिद्धि-सिद्धि प्राप्त की तो दानवों ने भी उन्हे रिझा लिया। योगी और भोगी दोनों भगवान की कृपाकांक्षी है। एक ओर वे मदन को भग्नावशेष करने वाले है तो दूसरी ओर "अर्धनारीश्वर" भी है। कला साहित्य और संगीत की उत्पत्ति स्थल है। तो दूसरी ओर "महाअघोरघण्ट" भी है। सभी ज्ञाता ज्ञात रसो के अधिष्ठाता तथा करूणा व वात्सल्य के अवतार है। वे अनाथ कृपासिन्धु है। अपराधी के अपराध को जानकर भी उसे दु:ख न हो इसलिए प्रकट भी नही करते। सती जी उनकी बात भी नही मानी झूठ भी बोली पर शिव कुछ न कहकर मर्यादा की रक्षा हेतु मन में संकल्प करते है, पर सती से कुछ नही कहते बल्कि उनका मन बहलाने के लिए अनेको कथायें कहते आश्रम में आते है। सती को जानने में विलम्ब नही हुआ वो प्रभु की कृपा जानकर कहती है, "कृपासिन्धु प्रभु परमअगाधा। प्रकट न कहेउ न मोर अपराधा।।" आज की स्थिति में कही थोड़ा भी छीद्र मिल जाय तो लोग उसे सागर बना देगें।

भगवान शिव ही स्मसान वासी, मुण्डमालाधारी, परम् अशिष्ट, अशुभ रूपधारी होने पर भी विवाह, गवना, छठी, बरही, मुण्डन आदि सभी मांगलिक अवसरों पर शिव पार्वती के गीत विविध रूप में गाये जाते है। भारत की समस्त भाषाओं और बोलियों में शिव साहित्य उपलब्ध हैं। कश्मिर से कन्याकुमारी, अटक से कटक तक शिव का शिवत्व प्रतिष्ठित है।

रंकापति होते हुए भी वे विश्वनाथ है, महादेव है और प्रलयंकर है और साथ ही भोले बाबा "अवढ़रदानी" भी है। उनके लिए कुछ भी अदेय नही है। साधारण जन उनको अपने से अलग नही समझते। शिवभक्त अपने पारिवारिक जीवन के साथ उनके पारिवारिक जीवन की कल्पना करते है। कही किसी तरह का अभेद नही पाते। अभाव और दरिद्रय जन्य कष्टो की श्रृखला में अपने महादेव को अवेष्ठित पाते है तो मन में धीरज बाध लेते है कि उनकी दशा तो मुझसे भी खराब है। पर वैशम्य की स्थिति में समत्व का सामंजस्य का ऐसा गृहस्थ जीवन अन्यत्र दुर्लभ है। प्रत्येक विपरित परिस्थितियों में भी कोई कलह कोई अवसाद नही। पत्नी स्वयं अन्नपूर्णा है, पर विश्वनाथ पूरे विश्व का व अपने भक्तो के लिए विश्वम्भर होकर स्वयं दीगम्बर है। वही उसी प्रकार अन्नपूर्णा जनता के लिए जगतदात्री है, पर अपने लिए "अपर्णा" है। शिव का वाहन वृषभ है तो पार्वती का सिंह, एवं एक पुत्र षड़ानन है तो दूसरे गजमुख एक का वाहन मूसक है तो दूसरे का मयूर, शिवभूषण भी नाग है ऐसी विषम परिस्थिति में जहा सामान्य मानव का सर्वस्व नस्ट हो जाय वही शिव परिवार आनंदातिरेक के साथ विश्व के लिए गार्हस्थ्य का आदर्श उदाहरण है। वैषम्य की स्थिति में आनंद शिवत्व का परिचायक है।

शिव कथाओं के अध्ययन से हर कथाओं में जहा शिव को देखने में क्रुरत्व प्रकट होता है वही उनका कृपा मय शीघ्रतोषत्व भी प्रकट होता है। अंधकासुर की कथा के अध्ययन से पता चलता है कि अंधकासुर भगवान शिव से ही वरदान प्राप्त कर उन्ही पर आक्रमण करता है जो आज के समाज का चित्र प्रस्तुत करता है। उसके इस क्रूर कर्म का प्रतिशोध लेने हेतु शिव उग्र रूप धारण कर उसी की सेना का संहार करते है और उसके वध

का भी उपक्रम करते है पर उसकी प्रार्थना से स्वयं अपना गणपति बनाकर भौतिक संसार के लिए एक आदर्श भी प्रस्तुत करते है। तथा भारतीय सरणागत वत्सलता को नैरन्तर्य प्रदान करते है। अपराधी के प्रति भी साधुत्व ईश्वर का ईश्वरत्व है। शिव का ताण्डव जहा विनाश का सूचक तो कही नयी संरचना के उल्लास का सूचक है। यही शिव का शिवत्व है। हर बीज बृक्ष बनकर एक न एक दिन जीर्ण-शीर्ण और पूराना होता है। यह सृष्टि संरचना का क्रम है, प्रकृति की नियति है। और परात्पर परम्ब्रह्म शिव की शिवमयी गरिमा है, उनके संहार में ही सृजन का बीज संनिहित है, वे रूद्र है। जन के कष्ट को देख कर रोते है और जन को रूलाने वाले को रूलाते है यही उनके जन देवता का रूप है।

लोक में जो शोषित, वांक्षित, दलित, परित्यक्त, अनाश्रित, अनाथ, अकुल, अगेह, सब के लिए काम करता है, सबको साथ लेकर चलता है, सबका हित चिन्तन करता है, कही भेद नही है, दुराव नही, घृणा नही, सर्वत्र प्रेम, सौहार्द, सेवा का स्वाभाविक सहज भाव रखता है, सही माने में वही जन नेता या लोक नायक है। भगवान शिव का पूरा स्वरूप ही विश्वरूप है। जगत में वंचित, वहिष्कृत, घृणित, हिंसक, भयावह, सबको स्थान देते है। जिसे लोग काल समझकर देखते ही है, मार डालने एवं कुचल देने को तत्पर रहते है। उस काल स्वरूप को भी महाकाल अपने कण्ठ का हार बनाते है। जिससे सारा संसार आतंकित व भयभीत रहता है उन भूत-प्रेतों को भी शिव अपना गण बनाये है। शिव विवाह के समय जब शिव अपने गणों को अन्य देव समाज से अलग होकर चलते है तब उन गणों में कोई मुख हीन कोई बहुमुख, कोई नेत्रहीन, कोई बहुनेत्र, कोई अपावन गति धरे है, इन सबके साथ भगवान बैल पर सवार होकर अपना अलौकिक वेश बनाकर चल रहे थे जिसे देखकर मैना भी भयभीत हो जाती है और भयभीत होकर थाल फेक कर चल देती है उस समय भी जिन्हे किसी प्रकार के अपमान व अमंगल की अनुभूति नही होती बल्कि अपने गणों के साथ सहज रूप में ही स्थित रहते है। वृषभ धर्म का प्रतीक है, सिर पर गंगा ज्ञान का प्रतीक है। मस्तक पर ज्ञान प्रकाश रूप तीसरा नेत्र है जो व्यक्त कर रहा है कि जो धर्म पर आरूढ़ है, जिसके सिर पर ज्ञान की धार है तथा जो प्रकाश रूप नेत्र धारण करता है उसके सारे अमंगल भी मंगल हो जाते है। जिनका अपना कोई नही है उनके भगवान शिव है। जिनका अपने लिए कुछ नही है सब दूसरे के लिए ही है, विषमता में समता का दर्शन ही भगवान शिव का शिवत्व है, महादेव महादेवत्व है, महेश्वरत्व है। इस प्रकार जो सबका हो सबके लिए हो, हर समय सुलभ हो आशुतोष हो वही जन देवता है, जो गाँव से बाहर, सारिता के किनारे किसी एक चबूतरे पर भी रखकर एक लोटा पानी, बिल्वपत्र दो अक्षत और धतूरे आदि के पुष्प से ही अपने भक्तों को सर्वस्व प्रदान करते है, वही जन देवता है।

संदर्भ ग्रन्थ सूची-

1. शिवपुराण
2. मार्कण्डेय पुराण
3. योगवाशिष्ठ
4. रामकथा हिन्दी परिषद् प्रयाग विश्वविद्यालय

UGC Journal No. (Old) 2138
Peer-Reviewed Research Journal
Impact Factor 4.875, ISSN 0975-4083
Vol.- 24, Hindi Edition, Year-12, Oct. 2022- March 2023

भारतीय हिमालय क्षेत्र में अवधाव आपदा प्रबंधन की जटिलताएँ

• अजय कुमार
•• एम. एस. शेखर

सारांश- भारत देश विविधताओं का देश है। यहाँ प्रत्येक क्षेत्र, चाहे वह सामाजिक हो, धार्मिक हो, भाषा का क्षेत्र हो या फिर भौगोलिक क्षेत्र हो, विविधताओं से परिपूर्ण है। इसका भौगोलिक क्षेत्र समुद्र तल के समतल मैदानों से लेकर हिमालय की ऊंची पर्वत श्रृंखलाओं से सुसज्जित है। इसी भौगोलिक विविधता के कारण भारत प्रत्येक आपदा से प्रभावित है या अन्य शब्दों में कहें तो भारत दुनिया में सबसे अधिक आपदा प्रवण क्षेत्रों में से एक है। भारत के लिए आपदा रूपी प्रमुख खतरे भूकम्प, भूस्खलन, हिमस्खलन, सूखा, बाढ, चक्रवात, आग, परिवहन दुर्घटनायें आदि हैं। उत्तरी भारत का बहुत बड़ा भूभाग हिमाच्छादित क्षेत्र है, जिस कारण यह क्षेत्र अवधाव रूपी क्रायोस्फेरिक आपदा से अत्यधिक प्रभावित है। हर वर्ष शीतकाल में अवधाव रूपी आपदा से किसी न किसी प्रकार की क्षति हो ही जाती है। विकसित देशों की अपेक्षा भारत में आपदा प्रबंधन परिपूर्ण नहीं है। इस लेख में भारत में अवधाव आपदा प्रबंधन की जटिलताओं की चर्चा की गई है।

मुख्य शब्द - दुर्घटना, आपदा, अवधाव, संरचना

परिचय- यह एक आकस्मिक दुर्घटना है जो किसी समुदाय, समाज या देश को इतना क्षतिग्रस्त कर देती है कि उससे उबरने के लिए व अपने दैनिक कामकाज का पुन: निर्वाह करने के लिये उस समुदाय, समाज या देश को अन्य समुदाय, समाज या देश की सहायता लेनी पड़ती है। आपदा दो प्रकार की होती है-

1.प्राकृतिक आपदा- प्राकृतिक कारण,जो मनुष्य के नियँत्रण से परे हैं,से होने वाली आपदा को प्राकृतिक आपदा कहते हैं जैसे बाढ़, तूफान, भूकम्प, भूस्खलन, हिमस्खलन, ज्वालामुखी विस्फोट इत्यादी।

2. मानव निर्मित आपदा- वह आपदा जिसके घटित होने का प्रत्यक्ष या परोक्ष मुख्य कारण मानव द्वारा किये गये अच्छे या बुरे कार्य हों, उसे मानव निर्मित आपदा कहते हैं जैसे आग, परिवहन दुर्घटनाएँ, तेल रिसाव, परमाणु विस्फोट, रासायनिक दुर्घटनायें, हिमस्खलन इत्यादि।

• मुख्यालय,रक्षा भू-सूचना विज्ञान अनुसंधान प्रतिष्ठान, चंडीगढ़ 160036
•• मुख्यालय,रक्षा भू-सूचना विज्ञान अनुसंधान प्रतिष्ठान, चंडीगढ़ 160036

आपदाओं का प्रत्यक्ष या परोक्ष प्रभाव सदैव विनाशकारी एवं हानिकारक रहा है। इनके कारण न केवल जान बल्कि माल एवं संसाधनों को भी क्षति पहुँचती है। प्राकृतिक आपदाओं से होने वाले नुकसान को केवल कम किया जा सकता है लेकिन मानव निर्मित आपदाओं को एक निश्चित सीमा तक रोका जा सकता है।

हिमस्खलन/अवधाव- किसी भी पहाड़ी की ढलान से तेजी से बर्फ के नीचे की ओर फिसलने को अवधाव या हिमस्खलन कहते हैं (मेकलंग और शेरर, 1993)। इसकी गति, वेग एवं प्रभाव अत्यधिक होता है जिस कारण यह अपने मार्ग में आने वाली प्रत्येक वस्तु जेसे कि प्राणी, वाहन, भवन इत्यादि को पूर्णतया क्षति ग्रस्त करने में सक्षम होता है (चित्र–1 – 2)।

चित्र –1: अवधाव का छायाचित्र चित्र–2: अवधाव क्षेत्र का छायाचित्र

अवधाव को प्राकृतिक एवं मानव निर्मित आपदा दोनों की श्रेणी में रखा जा सकता है क्योंकि अवधाव की दुर्घटना प्राकृतिक कारणों से भी होती है और कई बार मानव निर्मित कारणों से भी अवधाव घटित हो जाते हैं।

अवधाव के मुख्य घटक- अवधाव के मुख्य घटक से अभिप्राय यह है कि किसी एक भी घटक की अनुपस्थिति होने पर अवधाव उत्तपन नहीं हो सकता।

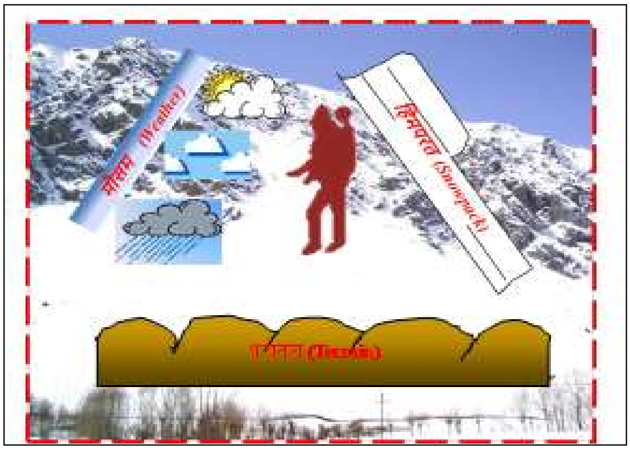

चित्र –3: अवधाव के मुख्य घटक अवधाव के मुख्य तीन घटक हैं (चित्र–3)।

1 धरातल
2 मौसम
3 हिमपरत

अवधाव रूपी आपदा के घटित होने के लिए इन तीनों घटकों का विद्यमान होना अत्यंत आवश्यक है। इनमें से किसी एक भी घटक के अनुपस्थित होने पर अवधाव की घटना नहीं हो सकती। उदाहरणतया ढलान चाहे जितनी भी अनुकूल हो यदि वहाँ हिम उपलब्ध नहीं है तो अवधाव नहीं आ सकता। दूसरी तरफ किसी स्थान पर चाहे जितनी भी बर्फ गिरे पर यदि वहाँ पर अवधाव के अनुकूल ढलान नहीं है तो भी अवधाव नहीं आ सकता।

अवधाव से सुरक्षा के उपाय- अतीत में हुई अवधाव की दुर्घटनाओं के अवलोकन, विश्लेषण एवं परीक्षण के आधार पर अवधाव से सुरक्षा के अनेक उपाय विकसित किए हैं (गंजू और डिमरी, 2004)। इन उपायों को दो श्रेणिओं में बांटा गया है-

1.स्थायी उपाय- इस श्रेणी में वह उपाय आते हैं जो अवधाव से सुरक्षा के लिए स्थाई समाधान प्रदान करते हैं या अन्य शब्दों में कहें तो अवधाव को स्थायी रूप से नियंत्रित करते हैं। उदाहरणतया अवधाव क्षेत्र में अवधाव नियंत्रण संरंचनाओं का निर्माण या वृक्षारोपण करके अवधाव को स्थाई रूप से नियंत्रित करते हैं।

2.अस्थाई/तात्कालिक उपाय-इस श्रेणी में वह उपाय आते हैं जो अवधाव से सुरक्षा के लिए अस्थाई/तात्कालिक समाधान प्रदान करते हैं या अन्य शब्दों में कहें तो इन उपायों का प्रयोग कर अवधाव को अस्थाई/तात्कालिक तौर पर नियंत्रित किया जा सकता है या अवधाव के खतरे को कम किया जा सकता है। इन उपायों में मुख्यत: निम्नलिखित उपाय हैं-

क) अवधाव पूर्वानुमान
ख) कृत्रिम रूप से अवधाव को नियंत्रित करके गिराना
ग) लोगों में अवधाव के खतरे के बारे में जागरूक करना

यह तात्कालिक उपाय हैं जिनका प्रयोग कर अवधाव के खतरे को या अवधाव से होने वाले नुकसान को काफी हद तक कम किया जा सकता है। अतीत में हुई अवधाव दुर्घटनाओं का अध्ययन करने से यह प्रतीत होता है कि अवधाव दुर्घटना से होने वाली मानव हानी के मुख्यत: दो कारण हैं-

1. अज्ञानता
2. लापरवाही

अज्ञानता से अभिप्राय है कि अधिकतर लोगों को इस दुर्घटना से होने वाली क्षति का ज्ञान ही नहीं होता है या वह अवधाव वाले क्षेत्र को पहचान ही नहीं सकते हैं। दूसरी ओर स्थानीय लोग जो इस खतरे से अवगत होतें हैं या जिन्हे इस दुर्घटना का ज्ञान होता है वो भी अवधाव क्षेत्र में निरंतर विचरण करने से (आने जाने से) अति आत्मविश्वास के कारण लापरवाह हो जाते हैं। इन्ही कारणों के फलस्वरूप लोग जाने-अनजाने में अपने वाहनों को अवधाव वाले क्षेत्र में खड़ा कर देते हैं या पैदल यात्री एक साथ झुंड में अवधाव वाले इलाके में बैठ जाते हैं एवं इस दुर्घटना का शिकार हो जाते हैं।

भारतीय हिमालय क्षेत्र में अवधाव आपदा प्रबंधन की जटिलताएँ- भारतीय हिमालय क्षेत्र को तीन भागों में बांटा गया है।

1. **उत्तर-पश्चिम हिमालय-** इसमें जम्मू एवं कश्मीर, लद्दाख एवं हिमाचल का हिमालय क्षेत्र आता है।
2. **मध्य हिमालय-** इसमें उत्तराखंड का हिमालय क्षेत्र आता है।
3. **पूर्वी हिमालय-** इसमें सिक्किम और अरुणाचल का हिमालय क्षेत्र आता है।

उत्तर-पश्चिम हिमालय का लगभग 72000 वर्ग कि. मी. क्षेत्र हिम प्रभावित क्षेत्र है। इस क्षेत्र में लगभग 3000 अवधाव स्थल हैं। इस बर्फीले एवं अवधाव प्रभावित क्षेत्र में वहाँ के स्थानीय निवासियों के साथ भारतीय सेना व अर्धसैनिक बलों का भी ज्यादा आवागमन रहता है। इस हिमाच्छादित क्षेत्र की विविधता भी अधिक है जैसे कि यह क्षेत्र 2000 मीटर की ऊंचाई से लेकर 6500 मीटर तक की ऊंचाई तक फैला है। यह क्षेत्र पाँच पर्वत श्रृंखलाओं नामतः पीर पांजाल, ग्रेट हिमालय, जांसकार, लद्दाख एवं काराकोरम में विभाजित है जिस कारण यहाँ पर भिन्न भिन्न प्रकार के हिम कण पाये जाते हैं। इसी हिम जलवायु की विविधता के आधार पर पश्चिम हिमालय क्षेत्र को मुख्यतः तीन क्षेत्रों (जोन्स)(नामतः लोअर हिमालयन ज़ोन, मिडिल हिमालयन ज़ोन और अप्पर हिमालयन जोन) में वर्गीकृत किया है (शर्मा और गंजू, 1999)। यही कारण है कि भारत देश दुनिया के अन्य देशों की अपेक्षा अवधाव रूपी आपदा से अधिक प्रभावित है।

भारतीय हिमालय क्षेत्र में अवधाव आपदा प्रबंधन की जटिलताओं को दो श्रेणिओं नामतःतकनीकी एवं गैर तकनीकी जटिलताओं में विभाजित किया गया है।

1. तकनीकी जटिलताएँ- भारतीय हिमालय क्षेत्र में अवधाव आपदा प्रबंधन में कई प्रकार की तकनीकी जटिलताएँ हैं। जो निम्नलिखित हैं।

I. **अवधाव संरंचनाओं के निर्माण की सीमाएं-** अवधाव क्षेत्र में अवधाव नियंत्रण संरंचनाओं का निर्माण कर अवधाव को स्थाई रूप से नियंत्रित किया जा सकता है। लेकिन इसकी भी कुछ सीमाएं हैं। यह एक अत्यधिक खर्चीला उपाय है या अन्य शब्दों में कहें तो यह एक लागत प्रभावी उपाय नहीं है। और हिमालय के कई क्षेत्र इतने दुर्गम हैं कि वहाँ मानव का पहुंचना भी कठिन है तो ऐसे क्षेत्रों मेंअवधाव नियंत्रण संरंचनाओं का निर्माण करना वर्तमान में अत्यधिक कठिन है।

II. **अवधाव क्षेत्र में वनीकरण एक चुनौती-** उत्तरी हिमालय क्षेत्र का धरातल एवं वातावरण वृक्षारोपण के अनुकूल नहीं है एवं उच्च तुंगता का क्षेत्र होने के कारण भी यहाँ पर वृक्षारोपण करना एक कठिन कार्य है। इसके अतिरिक्त अवधाव क्षेत्रों में हिम के खिसकने के कारण भी पेड़ पौधों को भारी क्षति होती है।

III. **अवधाव पूर्वानुमान की सीमाएं-** यद्यपि अवधाव पूर्वानुमान के लिए कई तरह के गणितीय एवं सांखिकीय मॉडल उपलब्ध हैं, लेकिन यह मॉडल अभी परिपक्व नहीं हैं। हिमालय क्षेत्र के मौसम, हिम तथा अवधाव के आंकड़े पर्याप्त मात्रा में उपलब्ध नहीं हैं (गंजू और सिंह, 2004)। इस क्षेत्र में अत्यधिक स्थान इतने दुर्गम हैं कि वहाँ पहुंचना मानव के लिए असंभव हो जाता है। इस क्षेत्र

की बनावट के कारण यहाँ के मौसम एवं हिम संबंधी आंकड़ो का संग्रह करना भी कोई सरल कार्य नहीं है। इसके साथ साथ अवधाव संबंधी आंकड़ो का संग्रह करना किसी चुनौती से कम नहीं है। अधिकतर अवधाव खराब मौसम में आते हैं जिस कारण कम दृश्यता होने के कारण इनके सही समय का पता नहीं चल पाता है। इसलिए यहाँ के हिम तथा अवधाव संबंधी आंकड़ों का अभाव है। अवधाव संबंधी आंकड़ों के अभाव के कारण अवधाव पूर्वानुमान मॉडल भी सटीक जानकारी देने में सक्षम नहीं हो पाता है।

IV. **कृत्रिम अवधाव गिराने में सम्पूर्ण दक्षता नहीं है-** कृत्रिम रूप से अवधाव को नियंत्रित करके गिराकर भी अवधाव के खतरे को कम किया जा सकता है। लेकिन अभी यह तकनीक परीक्षण अवस्था में है। भारतीय हिमालय का अधिकतर भाग दुर्गम एवं सीमावर्ती क्षेत्र है और इस तकनीक में अवधाव को गिराने के लिए मुख्यतः विस्फोटक का प्रयोग किया जाता है। इसलिए सुरक्षा कारणों से भी इस क्षेत्र में इस तकनीक का उपयोग करना अनुकूल नहीं है।

2.गैर तकनीकी जटिलताएँ - भारतीय हिमालय क्षेत्र में अवधाव आपदा प्रबंधन में कई प्रकार की गैर तकनीकी जटिलताएँ भी हैं, जो निम्नलिखित हैं–

I. **अपर्याप्त संसाधन-**किसी भी आपदा के प्रभावी प्रबंधन के लिए पर्याप्त संसाधनों जैसे प्रशिक्षित जनशक्ति, उपयुक्त सामग्री एवं धनराशि की आवश्यकता होती है। भारत में इस अवधाव रूपी आपदा से निपटने के लिए इन सभी संसाधनों का अभाव है।

II. **उपयुक्त समन्वय-** किसी भी आपदा का प्रबंधन किसी एक एजेंसी के द्वारा नहीं किया जा सकता, खासकर जब इसके प्रभाव की मात्रा अधिक हो। जब एक से अधिक एजेंसियां आपदा प्रबंधन में सम्मिलित होती हैं तो उनके बीच उपयुक्त समन्वय होना अत्यधिक आवश्यक हो जाता है। भारत में अवधाव रूपी आपदा से निपटने के लिए रक्षा भू-सूचना विज्ञान अनुसंधान प्रतिष्ठान (डी जी आर ई), जो की रक्षा अनुसंधान एवं विकास संगठन की एक प्रयोगशाला है, अवधाव के खतरे को स्थिर एवं तात्कालिक रूप से कम करने के उपायों के शोध में कार्यरत है एवं अवधाव के खतरे का पूर्वानुमान कर अवधाव की चेतावनी भी जारी करता है। अवधाव की दुर्घटना होने पर बचाव एवं राहत कार्य मुख्य रूप से भारतीय सेना, अर्धसैनिक बलों एवं राष्ट्रीय आपदा बचाव बल द्वारा नियुक्त राज्य पुलिस दल के द्वारा किया जाता है। इन सभी एजेंसियों में उपयुक्त समन्वय होना अत्यावश्यक है।

III. **प्रशिक्षित व्यक्तियों का निरंतर स्थानांतरण-**आपदा प्रबंधन के प्रयासों का सीधा संबंध प्रशिक्षित जनशक्ति की उपलब्धता पर निर्भर करता है। अवधाव दुर्घटना के दौरान सुरक्षा एवं बचाव कार्य भारतीय सेना, अर्धसैनिक बलों एवं राज्य पुलिस दलों द्वारा किया जाता है। इन एजेंसियों में सामान्यतः व्यक्तियों (कर्मियों) को दो वर्षों या कम समय के लिए ही हिमाच्छादित पर्वतीय क्षेत्रों में तैनात किया जाता है। कभी कभी तो इस दो वर्षों के कार्यकाल के दौरान ही

अवधाव प्रशिक्षित व्यक्तियों को किसी दूसरे स्थान पर तैनात कर दिया जाता है। जिस कारण भी अवधाव दुर्घटना के प्रबंधन में काफी परेशानियाँ आती हैं। यदि स्थानीय लोगों को ही इस दल में शामिल किया जाये तो काफी हद तक इन परेशानियों को कम किया जा सकता है।

IV. **सुनहरी समय की संकल्पना-**किसी भी आपदा के घटित होने पर की गई प्रतिक्रिया के समय को सुनहरी समय कहा जाता है। अवधाव रूपी आपदा से निपटने के लिए भी यह संकल्पना पूर्ण रूपेण उपयुक्त है। अवधाव में फंसे व्यक्ति के आधे घंटे तक जीवित रहने की संभावना अत्यधिक होती है। फिर समय के व्यतीत होने के साथ साथ यह संभावना कम होती जाती है। किसी भी अवधाव दुर्घटना के होते ही प्रशिक्षित व्यक्तियों के बचाव दल का शीघ्र अति शीघ्र दुर्घटना स्थान पर पहुंचना अत्यावश्यक है। इसके लिए उपयुक्त संसाधनों जैसे वायुयान (हैलिकाप्टर) की सुविधा इत्यादि, का उपलब्ध होना भी अत्याधिक महत्वपूर्ण है।

V. **भारत के लोगों में अवधाव की जागरूकता की कमी-** भारत में हिमाच्छादित क्षेत्र में रह रहे लोगों के अतिरिक्त बहुत ही कम (लगभग नहीं के बराबर) लोग अवधाव के बारे में जानते हैं। यह भी अवधाव दुर्घटना से होने वाली मानव क्षति का एक प्रमुख कारण है। लोगों को अवधाव के प्रति जागरूक करने के लिए अधिकाधिक कार्यक्रम शुरु करने की आवश्यकता है।

निष्कर्ष- आपदा प्रबंधन आपदाओं के प्रभाव को कम करने की एक सतत प्रक्रिया है। यह आपदा के प्रकोप को रोक नहीं सकता है, लेकिन इसके प्रभाव को काफी हद तक कम कर सकता है। आपदाओं का प्रत्यक्ष एवं परोक्ष प्रभाव सदैव घातक, विनाशकरी एवं हानिकारक रहा है। यह मानव के साथ साथ उनकी संपत्ति एवं संसाधनों को भी क्षति पहुँचाते हैं। अवधाव भी एक आपदा है। भारत का एक विशाल भूभाग इस आपदा से प्रभावित है। इस अवधाव रूपी आपदा से भारत के ज्यादातर लोग परिचित नहीं हैं जो कि इस आपदा से होने वाली क्षति का मुख्य कारण है। भारतीय हिमालय क्षेत्र की भौगोलिक संरचना भी इतनी विचित्र है कि इस आपदा का पूर्वानुमान करना एवं इसे स्थायी एवं अस्थाई तौर पर नियंत्रित करना भी नामुमकिन के संतुलय है। अन्य आपदाओं के भांति इस अवधाव रूपी आपदा से होने वाली क्षति को इसके बारे में जागरूकता फैला कर ही कम किया जा सकता है। भारतीय सेना एवं अर्धसैनिक बलों के लिए तो समय समय पर अवधाव जागरूकता कार्यक्रम आयोजित किए जाते हैं, इनकी मात्रा अधिक होनी चाहिए एवं इसके साथ साथ ही अन्य स्थानीय एवं सिविल लोगों के लिए भी इस तरह के कार्यक्रमों का आयोजन करने की आवश्यकता है। जिसके लिए स्थानीय गाँव स्तर या सामुदायिक स्तर पर अवधाव तैयारी कार्यक्रम आयोजित करने की भी आवश्यकता है। इन कार्यक्रमों में लोगों को इतना जागरूक किया जाये जिससे वह स्वयं को इस तरह से तैयार कर लें कि उन्हें अवधाव वाले क्षेत्रों में कम से कम विचरण करना पड़े और कम से कम क्षति पहुंचे।

आभार- लेखक इस लेख को लिखने के लिए प्रोत्साहित करने के लिए, रक्षा भू-सूचना विज्ञान अनुसंधान प्रतिष्ठान के अवधाव पूर्वानुमान विभाग के अतिरिक्त निदेशक

डॉ. अमरीक सिंह के आभारी हैं। लेखक अवधाव पूर्वानुमान विभाग में कार्यरत सभी सहकर्मियों के भी आभारी हैं, जिन्होंने प्रत्यक्ष एवं परोक्ष रूप से इस लेख को लिखने में योगदान किया है।

संदर्भ ग्रन्थ सूची-

1. गंजू, ए., एंड सिंह, ए., 2004, "ए न्यू अप्रोच टु अवलांच फोरकास्टिंग एंड डिसास्टर मेनेजमेंट फॉर वेस्टर्न हिमलाया", वर्ल्ड काँग्रेस ऑन नैचुरल डिसास्टर मिटिगेशन, 19-21, फरवरी 2004
2. गंजू, ए., एंड डिमरी, ए. पी., 2004: "पृवेंशन एंड मिटिगेशन ऑफ अवलांच डिसास्टर इन वेस्टर्न हिमालयन रिज़िन", नेचुरल हजार्ड 31, 357-371
3. मेकलंग, डी., एंड शेरर, पी., 1993: "द अवलांच हेंडबूक" , पब्लिश्ड बाइ द मौंटानीयर्स 1001 एस डब्लू क्लिीटट वे, सीटल एंड वाशिंगटन, 98134
4. शर्मा, एस. एस., एंड गंजू, ए., 1999: "कांप्लेक्सीटिस ऑफ अवलांच फोरकास्टिंग इन वेस्टर्न हिमलाया– एन ओवरविऊ", कोल्ड रीज़न साइन्स एंड टेक्नोलोजी, वॉल्यूम 31, इस्शू 2, 103-117

UGC Journal No. (Old) 2138
Peer-Reviewed Research Journal
Impact Factor 4.875, ISSN 0975-4083
Vol.- 24, Hindi Edition, Year-12, Oct. 2022- March 2023

जनपद शाहजहाँपुर में कृषि व्यावसायिकरण का कृषि आधारित उद्योगों के विकास पर प्रभावः एक भौगोलिक विश्लेषण

• भूपेन्द्र कुमार
•• सन्नवर

सारांश- भारत में स्वतंत्रता प्राप्ति के उपरान्त चाहे वह कृषि हो अथवा उद्योग, जनसंख्या हो या पशुधन सभी ओर चहुँमुखी विकास हुआ है। हाँ यह अवश्य है कि यह विकास उतनी तीव्र गति से नहीं हुआ जितना कि दूसरे देशों में हुआ है। इसके भौतिक, सामाजिक, राजनैतिक और आर्थिक कारण उत्तरदायी रहे हैं। यद्यपि हम विगत कई दशकों से कृषि का आधुनिकीकरण करने के प्रयास कर रहे हैं परन्तु आज भी कृषि देश की दो तिहाई से अधिक जनसंख्या के जीवन का आधार बनी हुई है। इस आधार में हमें निरन्तर गिरावट देखने को मिल रही है।

मुख्य शब्द - कृषि व्यावसायिकरण, उद्योग, पशुधन, आधुनिकीकरण

प्रस्तावना- जैसा कि विदित ही है भारतीय अर्थव्यवस्था कृषि प्रधान ही है। प्राचीन काल से यहाँ का जनमानस कृषि से अभिन्न रूप से जुड़ा हुआ है। स्वतंत्रता प्राप्ति से पूर्व जहाँ भारतीय कृषि खाद्यान्नोन्मुख होने के साथ ही अपनी दयनीय दशा में थी, वहीं 1970 के आते-आते कृषि क्षेत्र हरित क्रांति जैसे विकासोन्मुख क्रिया-कलाप सम्मिलित कर लिये गये। अगले दो दशकों में जहाँ देश में खाद्यान्नों में आत्म-निर्भरता आयी वहीं कृषि का रूप भी धीरे-धीरे परिवर्तित होने लगा। 1990 से 2000 के दशक में कृषि में खाद्यान्नों के स्थान पर व्यापारिक फसलों का क्षेत्रफल धीरे-धीरे बढ़ा है, और आज भारतीय कृषि व्यवस्था भरण-पोषण वादी न होकर व्यापारोन्मुख हो गयी है। आज हमारे देश के किसान का उद्देश्य अपने और देश के जीवन-यापन हेतु कृषि करना मात्र ही नहीं वरन् उसका उद्देश्य कृषि से लाभ कमाना है। आज कृषि व्यवस्था बाजारोन्मुख हो गयी है। और धीरे-धीरे कृषि को उद्योगों का दर्जा दिया जाने लगा है। कृषि व्यावसायीकरण की संकल्पना का यही मूल मंत्रा है। कृषि व्यावसायिक दृष्टि से सुदृढ़ करना मुख्य उद्देश्य रहता है। व्यावसायीकरण से जहाँ बाजार तंत्रा मजबूत होता है, वहीं कृषि क्षेत्र में किये गये निवेश को लाभकारी दृष्टि से अकृषित कार्यो में लगाया जाता है। कृषि व्यावसायीकरण का मॉडल भी विकसित देशों

• शोध छात्र, भूगोल विभाग, दिगम्बर जैन कॉलिज बड़ौत, बागपत
•• असिस्टेंट प्रोफेसर, भूगोल विभाग, महाराजा अग्रसेन कॉलेज ऑफ एजुकेशन, सराय छबीला, बुलंदशहर, उत्तर प्रदेश

की अपेक्षा भारत जैसे विकासशील देशों में भिन्न होता है, क्योंकि विकासशील देशों में यह श्रम की गहनता पर निर्भर करता है, वहीं विकसित देशों में यह पूँजीगत साधनों और तकनीकी पर निर्भर करता है।

कृषि व्यावसायीकरण का अन्तिम उद्देश्य कृषि औद्योगिक विकास है। कृषि औद्योगिक विकास, कृषि प्रघान क्षेत्रों में विकास की चरम अवस्था की ओर अग्रसर होना हैं। कृषि व्यावसायीकरण एक सूक्ष्म स्तरीय क्षेत्राीय संकल्पना है जो कि कृषि आर्थिक विकास पर विशेष जोर देती है। भारत जैसे विकासशील देशों में कृषि औद्योगिक विकास की संकल्पना का यही उद्देश्य है। वर्तमान शाहजहाँपुर जनपद क्षेत्र में कृषि व्यावसीकरण का चरण-बद्ध अध्ययन प्रस्तुत करता है। इसके साथ ही कृषि औद्योगिक विकास का अध्ययन भी इसमें सम्मिलित किया जाता है। कृषि आधारित उद्योगों की वर्तमान तथा कृषि औद्योगिक सम्भाव्यता का विश्लेषण भी इस संकल्पना का अभिन्न अंग हैं।

पूर्व साहित्य का समीक्षात्मक विवरण- कृषि और कृषि विकास के क्षेत्र में विश्व के भूगोलवेत्ताओं के कार्य को प्राचीन समय से ही देखा जा सकता हैं परन्तु इस सन्दर्भ में स्टाम्प[1] के कार्य को सर्वप्रथम हम प्रामाणिक मानते हैं। जिन्होने ब्रिटेन के भूमि उपयोग सर्वेक्षण का कार्य किया। इस सर्वेक्षण का उद्देश्य ब्रिटेन की एक-एक इंच भूमि उपयोग प्रस्तुत करना था। इसी सन्दर्भ में प्रो.जे.एल.बर्क[2] ने चीन के भूमि उपयोग के सन्दर्भ में विस्तृत विवरण प्रस्तुत किया। इन्होनें विद्यार्थियों के सहयोग से चीन के भूमि उपयोग का विवरण प्रस्तुत किया। लिस्वन की अन्तर्राष्ट्रीय भौगोलिक संघ के कांग्रेस में बल्किन वर्ग[3] ने एक योजना प्रस्तुत की, जिसे उन्होनें विश्व के सभी देशों के लिए सम्पूर्ण भूमि उपयोग सूचर की संज्ञा दी। यह विचार यूनेस्को द्वारा सहर्ष समर्पित था। अमेरिका के उत्तरी मिशीगन प्रान्त की भूमि के सापेक्षिक गुणो के मूल्यांकन हेतु बनर्स[4] द्वारा सर्वेक्षण प्रारम्भ किया गया। कोपेक[5] द्वारा कृषि भूगोल में अनुसंधान की अवस्थाओं का विस्तार से विवरण प्रस्तुत किया। उक्त भूगोलवेत्ताओं के अतिरिक्त अन्यानेक विदेशी भूगोलवेत्ताओं ने कृषि एवं कृषिगत विशेषताओं के सन्दर्भ में अपने विचार प्रस्तुत किये हैं।

भारतवर्ष में इस दिशा में संगठित प्रयास देर से प्रारम्भ हुए। सर्वप्रथम चटर्जी[6] ने पश्चिम बंगाल के चौबीस परगना जिले के संक्षिप्त क्षेत्र को भौतिक वातावरण तथा सामाजिक आर्थिक कारकों के प्रभाव को कृषि पर अध्ययन हेतु चुना। सन् 1951 में शफी[7] ने भारतवर्ष में भूमि- उपयोग सर्वेक्षण की एक योजना बनाई। उन्होंने 1960 में पूर्वी उत्तर प्रदेश की भूमि उपयोग के निर्धारण में निर्देशन का कार्य किया।[8] भारत में एक प्रदेश की कृषि क्षमता के मापन की समस्याओं का विवेचन शफी (1960) द्वारा किया गया। उन्होंने उत्तर-प्रदेश के प्रत्येक जिले में 8 चयनित फसलों के प्रति एकड़ उपज के आधर पर कृषि क्षमता को निर्धरित करने का प्रयास किया और उत्तर प्रदेश की कृषि क्षमता का चित्रण किया। 1962 में शफी ने एक शोध पत्र में उत्तर प्रदेश में कृषि विकास के विवेचन का प्रयास किया और जनपद स्तर पर कृषि क्षमता स्तर एवं विभिन्न वर्षो में उत्पादन के बीच सहसम्बन्ध स्थापित करने का प्रयास किया।

ब्रजभूषण सिंह (1988)[9] ने भारतीय कृषि के बदलते प्रतिरूप का अध्ययन करते हुए मेरठ और राष्ट्रीय राजधानी क्षेत्र में हुए कृषि परिवर्तनों, कृषि व्यावसीकरण,

कृषि व्यवसायीकरण का मॉडल तथा भारतीय सन्दर्भ में कृषि व्यवसायीकरण के उपरान्त नियोजन पर विस्तार से प्रकाश डाला है।

अध्ययन के उद्देश्य- प्रस्तुत अध्ययन का उद्देश्य क्षेत्र के कृषि व्यावसायीकरण का कृषि आधारित उद्योगों के विकास पर प्रभाव, एक भौगोलिक विश्लेषण का अध्ययन करना ही है, जनपद शाहजहाँपुर उत्तर प्रदेश का एक प्रमुख कृषि प्रधान क्षेत्र है, जिसमें अनेकानेक भौतिक-सांस्कृतिक एवं कृषि भिन्नतायें विद्यमान है। कृषि विकास की दृष्टि से पिछले कुछ दशकों में इस क्षेत्र में मूलभूत परिवर्तन हुए हैं। जहाँ पिछले दशकों में कृषि में खाद्यान्न उत्पादन को ही प्राथमिकता प्रदान की जाती थी, बदलते सामाजिक, आर्थिक परिवेश में यहाँ पर धीरे-धीरे कृषि का व्यावसायीकरण हुआ है। फलतः क्षेत्रो में खाद्यान्नों के स्थान पर व्यावसायिक फसलों को प्राथमिकता दी जाने लगी है। बदलते क्षेत्रों में कृषि आधरित उद्योगों का विकास शस्य प्रतिरूप परिणामतः तीव्र गति से हुआ है। जिससे कृषि औद्योगिक भूदृश्यों को मिला-जुला रूप विकसित हो रहा है।

अध्ययन क्षेत्र शाहजहाँपुर जनपद एक सघन कृषि प्रधान क्षेत्र है। कृषि व्यावसायीकरण का कृषि आधारित उद्योगों के विकास पर प्रभाव-एक भौगोलिक विश्लेषण को दृष्टिगत रखते हुए उक्त अध्ययन के निम्न उद्देश्य हैं -

1. शाहजहाँपुर जनपद के भौतिक पर्यावरण का अध्ययन करना।
2. मानवीय पर्यावरण में जनसंख्या वृद्धि वितरण एवं घनत्व का अध्ययन करना।
3. अध्ययन क्षेत्र की कृषि आधारित जनसंख्या का अध्ययन करना।
4. अध्ययन क्षेत्र में कृषि व्यावसायीकरण के स्तर का अध्ययन करना।
5. अध्ययन क्षेत्र में कृषि आधारित उद्योग एवं कृषि औद्योगिक सम्भाव्यता का अध्ययन करना।
6. अध्ययन क्षेत्र के कृषि औद्योगिक विकास के चर एवं सम्मिश्र की अवधारणा का अध्ययन करना।
7. अध्ययन क्षेत्र में कृषि औद्योगिक विकास की सम्भावनाओं का अध्ययन करना।

अध्ययन क्षेत्र- अध्ययन क्षेत्र शाहजहाँपुर जनपद बरेली मण्डल का एक प्रमुख जनपद है। जिसका अक्षांशीय विस्तार 270 37' उत्तर से 280 20' उत्तर तथा देशान्तरीय विस्तार 790 37' पूर्व से 800 23' पूर्व दंशान्तर के मध्य स्थित है। जनपद का कुल क्षेत्रफल 4575 वर्ग कि.मी. है। अध्ययन क्षेत्र में 4 तहसीले क्रमशः तिलहर, जलालाबाद, पुवायाँ तथा शाहजहाँपुर हैं यहाँ 15 विकासखण्ड, 124 न्याय पंचायात, 922 ग्राम पंचायत, 2080 आबाद गाँव, 251 गैर आबाद गाँव तथा 11 नगरीय केन्द्र हैं। क्षेत्र के उत्तर-पश्चिम में पीलीभीत जनपद, पश्चिम मे बरेली जनपद, दक्षिण-पश्चिम में बदायूँ जनपद, दक्षिण में फर्रूखाबाद जनपद, दक्षिण-पूर्व में हरदोई जनपद तथा उत्तर-पूर्व में खीरी जनपद स्थित है।[10]

जनांकिकीय दृष्टि से शाहजहाँपुर जनपद देश एवं प्रदेश में अधिक सघन बसे क्षेत्रों के अन्तर्गत आता है। क्षेत्र की 2011 की कुल जनसंख्या 3002376 है, जिसमें 1610182 पुरुष तथा 1392194 स्त्रियाँ हैं। क्षेत्र का जनसंख्या घनत्व 673 व्यक्ति प्रति वर्ग कि.मी. तथा लिंगानुपात 865 स्त्री प्रति 1000 पुरुष है। क्षेत्र की कुल साक्षरता दर 61.61

है।[11] क्षेत्र की जनसंख्या में कृषिगत जनसंख्या का बाहुल्य है। कुल जनसंख्या का 2/3 से अधिक जनसंख्या कृषि कार्यों में संलग्न है।

शाहजहाँपुर जनपद का भू-भाग गंगा के वृहद् मैदान का एक हिस्सा है, जिसका धरातल एक समान समतल है लेकिन यहाँ बहने वाली नदियों एवं अन्य जल-स्रोतों द्वारा काट दिया गया है। जनपद की उत्तरी-पश्चिमी सीमा पर इसकी अधिकतम ऊँचाई समुद्र तल से 166.11 मीटर है, जबकि शाहजहाँपुर और हरदोई की सीमा के पास न्यूनतम ऊँचाई 146.30 मीटर पाई जाती है। धरातलीय दृष्टिकोण से जनपद को बांगर एवं खादर दो मुख्य भागों में बांटा गया है। बांगर क्षेत्र उच्च भूमि वाला क्षेत्र है। और प्राचीन व स्थिर कॉप का बना हुआ है। खादर क्षेत्र को तराई का क्षेत्र अथवा निचली भूमि के नाम से जाना जाता है। जिसके निर्माण में अपरदन की लम्बी प्रक्रिया कार्यरत रही है। क्षेत्र के धरातलीय स्वरूप के निर्धारण में यहाँ बहने वाली रामगंगा, गर्रा, गोमती, खन्नौत, कटना और बहगुल इत्यादि नदियों की भूमिका बहुत ही महत्वपूर्ण रही है।

धरातलीय स्वरूप की विवेचना के आधर पर जनपद को तराई क्षेत्र या वन पेटी, गोमती क्षेत्र, बांगर क्षेत्र, खादर क्षेत्र तथा वनकटी क्षेत्र में बांटकर अध्ययन किया है। अध्ययन क्षेत्र की मिट्टी दोमट बलुई, बलुई दोमट, दोमट, चिकनी दोमट तथा बजरी दोमट प्रकार की है।

अध्ययन क्षेत्र की जलवायु मृदुमानसूनी है, जिसमें गर्मियों में तीव्र गर्मी और जाड़ों में अधिक ठण्ड पड़ती है। वर्षा की मात्राा सामान्य है ग्रीष्म काल में 35 से 430 और जाड़ों में 5 डिग्री से कम और वर्षा लगभग 100 से.मी. के आस-पास होती है। जलवायु के विधिवत् अध्ययन हेतु क्षेत्र को शीत ऋतु, ग्रीष्म ऋतु, वर्षा ऋतु तथा निर्वतनमान मानसून की ऋतु में विभाजित किया गया है। क्षेत्र में स्थानीय तथा क्षेत्रीय स्तर पर भौतिक कारकों मे विभेद दर्शनीय है।

शाहजहाँपुर जनपद उ.प्र. में मानव संसाधन विकास की दृष्टि से अपना अलग स्थान रखता है। क्षेत्र में जनसंख्या का तीव्र विकास यहां के कृषि संसाधनों के विकास पर अपना अमिट प्रभाव छोड़ता है। अध्ययन क्षेत्र के यदि जनांकिकीय आंकड़ों का अध्ययन करें तो हम पाते हैं कि यह क्षेत्र सघन जनसंख्या का क्षेत्र रहा है। क्षेत्र की 1901 से 2011 तक की जनसंख्या वृद्धि के आंकड़ों से यह बात प्रमाणित होती है। 1901 से 2011 के मध्य 219.57 प्रतिशत की वृद्धि हुई है। जनसंख्या वृद्धि के आंकड़े क्षेत्र की जनसंख्या में अनियमित वृद्धि की ओर इशारा करते हैं। 1901 से 1921 के मध्य कुल जनसंख्या में 11.2 प्रतिशत की कमी हुई है। 1921 से 1931 के मध्य ग्रामीण, नगरीय एवं कुल जनसंख्या में वृद्धि की दर मन्द रही है। इस मध्य कुल जनसंख्या में 5.7 प्रतिशत, ग्रामीण जनसंख्या में 4.6 प्रति’’ात तथा नगरीय जनसंख्या में 13.2 प्रतिशत की वृद्धि हुई है। 1977-1981 के मध्य नगरीय जनसंख्या में सर्वाधिक वृद्धि 62.9 प्रतिशत रही है। जनपद में 1981 के बाद 1991 में यद्यपि जनसंख्या में वृद्धि तो हुई है पर यह वृद्धि 1981 की तुलना में कम है। क्षेत्र में 2001-2011 के मध्य कुल जनसंख्या वृद्धि दर 21.8 प्रतिशत है।

अध्ययन क्षेत्र में जनसंख्या के वितरण एवं घनत्व में भी अत्यधिक विभेद दर्शनीय है। क्षेत्र में 1971 से 2011 के जनसंख्या घनत्व के आंकड़े इसके स्पष्ट उदाहरण

है। शाहजहाँपुर जनपद में 1971 में जहां जनसंख्या का घनत्व 281 व्यक्ति प्रतिवर्ग कि. मी. था, वह 2011 में बढ़कर 673 व्यक्ति प्रति वर्ग कि.मी. हो गया है। क्षेत्र में जनसंख्या का असमान वितरण पाया जाता है इसका मुख्य कारण अन्य सामाजिक आर्थिक कारकों के साथ-साथ भौतिक कारकों का स्पष्ट प्रभाव है। अध्ययन क्षेत्र में विकासखण्डानुसार भी जनसंख्या के घनत्व में अत्यधिक विभेद दर्शनीय है। अध्ययन क्षेत्र में सर्वाधिक घनत्व 658 व्यक्ति प्रति वर्ग कि.मी. भावलखेड़ा में तथा सबसे कम 193 व्यक्ति प्रतिवर्ग किलोमीटर खुटार विकासखण्ड में हैं। जनसंख्या घनत्व का विधिवत् अध्ययन करने के लिए क्षेत्र को उच्च, मध्यम और निम्न घनत्व क्षेत्रों में विभाजित किया गया है।

क्षेत्र के सर्वांगीण विकास हेतु मानव संसाधन विकास के अन्य पहलुओं पर दृष्टिपात करना आवश्यक है। क्षेत्र में साक्षरता, व्यावसायिक संरचना का अध्ययन इस श्रेणी के अन्तर्गत आता है। जनपद में साक्षर व्यक्ति एवं साक्षरता प्रतिशत कम होने के साथ-साथ क्षेत्रीय एवं अन्य स्तरीय विभिन्नता लिये हुए है। साक्षरता में स्त्री-पुरूष, आयुवर्ग, ग्रामीण एवं नगरीय, धर्मिक स्तर एवं क्षेत्रीय, स्तर पर अनेकानेक भिन्नतायें विद्यमान है। अध्ययन क्षेत्र में 1971 में कुल साक्षरता 17.09 प्रतिशत, पुरूष साक्षरता 24. 09 प्रतिशत तथा स्त्राी साक्षरता 8.31 प्रतिशत थी जो 2011 में बढ़कर 61.61 प्रतिशत कुल, 70.09 प्रतिश पुरूष तथा स्त्री साक्षरता 51.73 प्रतिशत हो गई है। जनपद में 1971 में 797 स्त्राी प्रति 1000 पुरुष थी जो सरकारी प्रयासों से बढ़कर 2011 में 865 स्त्री प्रति 1000 पुरुष हो गयी। इस वृद्धि दर का मुख्य कारण जन्म से पहले बच्चे के लिंग पता करने पर रोक है।

क्षेत्र की व्यावसायिक संरचना पर दृष्टिपात करें तो स्पष्ट होता है कि क्षेत्र में 2011 में 331090 कृषक, 99634 कृषि श्रमिक, 17899 पारिवारिक उद्योगों में कार्यरत, 147632 अन्य कर्मकर, 596255 कुल मुख्य कर्मकर, 108307 सीमान्त कर्मकर तथा 704562 कुल कर्मकर है।

अध्ययन क्षेत्र में कृषि यहाँ के निवासियों का प्रमुख व्यवसाय है। कृषि सम्बन्धी अध्ययनों में भूमि उपयोग का सूक्ष्मस्तरीय अध्ययन अपना महत्वपूर्ण स्थान रखता है। अध्ययन क्षेत्र के वर्तमान भूमि उपयोग पर यदि हम दृष्टिपात करें तो हम पाते हैं कि जनपद का 79.99 प्रतिशत भाग शुद्ध बोया गया क्षेत्रा 9.20 प्रतिशत कृषि के अतिरिक्त अन्य उपयोग में लायी गई भूमि, 2.39 प्रतिशत वन, 0.86 प्रतिशत कृषि योग्य बंजर 4.81 प्रतिशत परती भूमि, 1.59 प्रतिशत कृषि के अयोग्य भूमि तथा शेष भूमि चारागाह, उद्यानों आदि के अन्तर्गत है। अध्ययन क्षेत्र की भूमि का विधिवत् अध्ययन कृषित, अकृषित और कृष्य भूमि में बांटकर अध्ययन किया गया है। अध्ययन क्षेत्र में विकासखण्डानुसार भूमि के उपयोग में अत्यधिक विभिन्नता विद्यमान है। क्षेत्र में सर्वाधिक कृषित क्षेत्र 88.25 प्रतिशत खुदागंज कटरा विकासखण्ड और सबसे कम कृषित भूमि 74.72 प्रतिशत खुटार में है। जनपद में सर्वाधिक अकृषित भूमि 22.30 प्रतिशत खुटार और सबसे कम 8.35 प्रतिशत सिंधैली विकासखण्ड में है। अध्ययन क्षेत्र में कृष्यभूमि के क्षेत्र मे निरन्तर कमी प्रदर्शित की गई है। जनपद में इस श्रेणी में वर्तमान में कुल भूमि 5.22 प्रतिशत ही है।

भूमि उपयोग में शस्य प्रतिरूप का स्थान प्रमुख है। क्षेत्र में शस्य प्रतिरूप में विविधता दर्शनीय है। क्षेत्र में गन्ना, गेहूँ, चावल आदि प्रमुख फसलें हैं। इसके अतिरिक्त मक्का, बाजरा, दलहन, तिलहन, आलू आदि फसलें भी क्षेत्र में बोयी जाती हैं। क्षेत्र में गेहूँ और चावल प्रमुख फसलें है जो कि क्षेत्र के 73.12 प्रतिशत और 61.79÷ क्षेत्र पर बोयी जाती है। इसके अतिरिक्त गन्ना, आलू, दलहन तथा तिलहन फसलें बोयी जाती है।

कृषि सम्बन्धी अध्ययन कृषि क्षमता अथवा कृषि उत्पादकता अध्ययन के बिना सम्पूर्ण नहीं है। अध्ययन क्षेत्र में कृषि क्षमता मापन हेतु विभिन्न चरों का प्रयोग किया गया है। प्राप्त 7 चरों के आधार पर जनपद की विकासखण्ड स्तर पर वृद्धि क्षमता निर्धरण का प्रयास किया गया है। जनपद में उपर्युक्त आधर पर सर्वाधिक कृषि क्षमता मदनापुर विकासखण्ड और सर्वाधिक कम कृषि क्षमता ददरौल विकासखण्ड में पायी जाती है। उपर्युक्त आधर पर जनपद की विकासखण्ड स्तर पर उच्चतम, उच्च और समान्य क्षमता प्रदेशों में विभाजित कर अध्ययन किया गया है।

अध्ययन क्षेत्र के कृषि विकास के अध्ययन को जब तक पूर्ण नहीं माना जा सकता जब तक कि क्षेत्र के कृषि पर्यावरण परिवर्तन पर दृष्टिपात न किया जाये। अध्ययन क्षेत्र की कृषि में स्वातंत्रायोपरान्त आमूल-चूल परिवर्तन हुए हैं परन्तु इस परिवर्तन की दर एवं मात्रा स्थान-स्थान पर भिन्न-भिन्न है। अध्ययन क्षेत्र के कृषि पर्यावरण में परिवर्तन के परिप्रेक्षय में यदि हम भूमि उपयोग के आंकड़ों का अध्ययन करें तो हम पाते हैं कि 2018-19 की तुलना में 2019-20 के भूमि उपयोग में कोई विशेष परिवर्तन नहीं हुआ है। शुद्ध बोया गया क्षेत्रा में 3.18 प्रतिशत की वृद्धि हुई है। परती भूमि, ऊसर एवं कृषि के अयोग्य भूमि, चारागाहों उद्यानों के क्षेत्रफल में कमी हुई है। जबकि अकृषित भूमि का क्षेत्रफल निरन्तर बढ़ रहा है। जनपद में विकासखण्ड स्तर पर भी भूमि उपयोग के परिवर्तन में भिन्नता दर्शनीय है।

जनपद में कृषि पर्यावरण परिवर्तन का प्रमुख कारण सिंचाई के साधनों एवं सिंचित क्षेत्र में निरन्तर प्रगति होना है। जनपद का अधिकांश भाग सिंचित है। जनपद में 94.60 प्रतिशत तक सिंचित है जो कि नहरों, नलकूपों, राजकीय एवं व्यक्तिगत, पम्पिंग सैट, कुओं आदि द्वारा सींचा जाता है। जनपद के कुल सिंचित क्षेत्र का 94.82 प्रतिशत नलकूपों द्वारा, 3.28 प्रतिशत नहरों द्वारा और शेष अन्य साधनों द्वारा सिंचित है। सिंचित क्षेत्र में नलकूपों द्वारा सिंचाई का प्रतिशत निरन्तर बढ़ रहा है। जनपद में कृषि उत्पादन बढ़ाने में उपर्युक्त के अतिरिक्त अन्य कृष्यार्थिक सुविधाओं का भी महत्वपूर्ण योगदान रहा है। जिनमें कृषि का मशीनीकरण, रासायनीकरण, विपणन केन्द्र, व्यापार एवं वाणिज्य, बैंक सुविधयें, नवीनतम बीजों का प्रयोग, यातायात एवं संचार के साधन, शीतगृहों की संख्या में वृद्धि मण्डी समितियाँ आदि में वृद्धि प्रमुख है क्षेत्र में उपर्युक्त सभी सुविधाओं में निरन्तर एवं तीव्र गति से वृद्धि हुई है। अध्ययन क्षेत्र में मशीनीकरण में ट्रैक्टर, थ्रेसर, कल्टीवेटर का प्रयोग तथा विभिन्न रासायनिक उर्वरकों के प्रयोग में निरन्तर वृद्धि हुई है। जनपद में 2004-05 में 104.8 कि.ग्रा. प्रति हेक्टेयर रासायनिक खादों का उपयोग हुआ जो 2018-19 में बढ़कर 206.4 कि.ग्रा. प्रति हेक्टेयर हो गया है। उपर्युक्त कृष्यार्थिक सुविधाओं में वृद्धि के फलस्वरूप क्षेत्र में कृषि उत्पादन में अभूतपूर्व वृद्धि हुई है।

कृषि के विकासात्मक स्वरूप के अध्ययन मे कृषि व्यावसायीकरण का अध्ययन एवं मात्रा का निर्धारण महत्वपूर्ण स्थान रखता है। इससे किसी क्षेत्र विशेष के कृषि विकास के विषय में महत्वपूर्ण सूचनायें उपलब्ध होती हैं। कृषि से प्राप्त लाभ तथा क्षेत्र निवासियों के जीवन स्तर का मापन भी क्षेत्र के कृषि व्यावसायीकरण के स्तर के आधार पर किया जा सकता है। जनपद के कृषि सम्बन्धी आंकड़ों के अध्ययन से यह बात स्पष्ट है कि जनपद में कृषि व्यावसायीकरण द्वारा निर्धारित 12 चरों के आधार पर जनपद को 3 व्यावसायीकृत क्षेत्रों क्रमशः अत्यधिक, महत्व तथा सामान्य में वर्गीकृत किया गया है। जनपद का अधिकांश भाग मध्यम व्यावसायीकृत क्षेत्रों में आता है।

शाहजहाँपुर जनपद के कृषि व्यावसायीकरण में कृषि आधारित उद्योगों एवं अन्य उद्योगों की महती भूमिका है। अध्ययन क्षेत्र में कृषि आधरित कच्चे माल के साथ-साथ कृषि आधारित उद्योगों के विकास हेतु अन्य सभी सुविधायें पूँजी, श्रम, परिवहन, बाजार आदि पर्याप्त मात्रा में सुलभ है। अध्ययन क्षेत्र में गन्ना, चारा, गेहूँ, चावल, आलू की कृषि पर्याप्त मात्रा में होती है जो कि यहाँ के कृषि आधारित उद्योग चीनी, खाण्डसारी, गुड़, रसायन एवं डेयरी उद्योग के लिए आधारभूत कच्चे माल है। इसके अतिरिक्त मूढा, चटाई निर्माण, आटा, दाल मिलें भी क्षेत्र में स्थानीय कच्चे माल पर आधारित उद्योग है। अध्ययन क्षेत्र में 2018-19 में कुल कार्यरत कारखानों की संख्या 72 थी।

अध्ययन क्षेत्र मे जहाँ एक ओर कृषि आधारित उद्योगों का तीव्र विकास हुआ है। वहीं क्षेत्र में कृषि आधारित उद्योगों के विकास की और अधिक सम्भावनायें विद्यमान है। जनपद में गन्ने के सम्बन्धित और अधिक चीनी मिलों की स्थापना क्षेत्र के गन्ना प्रधान क्षेत्रों में की जा सकती है। इसके साथ ही, अल्कोहल, रसायन, फार्मास्युटिकल, गत्ता, कागज आदि के निर्माण की और अधिक इकाईयां लगाने की असीम सम्भावनायें हैं जहां दुग्ध एवं दुग्ध पदार्थों की अत्यधिक मांग है, क्षेत्रा में कृषि उत्पादन के साथ ही डेयरी उद्योग के विकास की असीम सम्भावनायें छिपी हैं जिससे न केवल क्षेत्रीय किसानों की आय में वृद्धि होगी वरन् कृषि पर जनसंख्या की निर्भरता घटाने के साथ ही स्थानीय लोगों को रोजगार भी मिलेगा। मूढा, चटाई, खाद्य प्रसंस्करण, फलों के भण्डारण, आलू भण्डारण के विस्तारण की भी क्षेत्र में अनेकानेक सम्भावनायें छिपी हुई है।

शाहजहाँपुर जनपद में जहां कृषि उत्पादकता वृद्धि से व्यावसायीकरण को बढ़ावा मिला है तथा विभिन्न कार्यों, अकृषि कार्यों में कृषि भूमि के उपयोग से कृषि क्षेत्र में निरन्तर कमी हो रही है। अवस्थापनात्मक तत्वों की भरपूर मात्रा के साथ-साथ जनसंख्या भी तीव्र गति से बढ़ी है। कृषि के अतिरिक्त अन्य कार्यों में जनसंख्या का बहुत कम ही भाग रोजगार पाता है। इसे दूर करने हेतु कृषि औद्योगिक विकास की प्रक्रिया कसे सुदृढ़ बनाना होगा। शाहजहाँपुर जनपद के कृषि उत्पादकता स्तर एवं कृषि आधारित उद्योगों के सूक्ष्म स्तरीय अध्ययन से यह बात स्पष्टतः सामने आती है कि क्षेत्र में कृषि औद्योगिक विकास हेतु सूक्ष्म स्तर पर कोई योजना प्रस्तुत की जाये जिससे क्षेत्र का समन्वित क्षेत्रीय आर्थिक विकास हो इस हेतु कृषि औद्योगिक सम्मिश्र की अवधारण को ध्यान में रखकर एक नियोजित मॉडल के आधार पर विकास करना होगा जिससे क्षेत्र का संतुलित कृषि औद्योगिक हो इसी आधार पर शोधार्थिनी ने डॉ. ब्रजभूषण के राष्ट्रीय राजधानी क्षेत्र हेतु

सुझाये गये मॉडल को आधार क्षेत्र में स्थानीय संसाधनों तथा कृषि बचतों पर तीन कृषि औद्योगिक तंत्र 1. गन्ना-अल्कोहल-रसायन-पेपर तथा विविध कृषि औद्योगिक तंत्र, 2. चावल, सरसों, सब्जी, पफल कृषि औद्योगिक क्षेत्र 3. डेयरी, कृषि यंत्र तथा फ्रलोर मिल कृषि औद्योगिक क्षेत्रा के लिए क्षेत्रीय स्तर पर अलग-अलग क्षेत्रों मे विकास की सम्भावनायें प्रस्तुत की है।

अन्त में कहा जा सकता है कि अध्ययन क्षेत्र शाहजहाँपुर जनपद एक सघन कृषि प्रधान क्षेत्र है, साथ ही कृषि आधारित उद्योगों के विकास की असीम सम्भावनायें भी क्षेत्र में विद्यमान है। अध्ययन क्षेत्र भूमि व्यावसायीकरण एवं कृषि औद्योगिक विकास की स्थानीय समस्याओं हेतु निम्न सुझाव प्रस्तुत किये जा सकते हैं।

अध्ययन क्षेत्र में कृषि व्यावसायीकरण एवं कृषि औद्योगिक विकास पूर्ण रूप से विकसित नहीं है, साथ ही कृषि आधारित उद्योगों के वितरण में स्थानीय स्तर पर विषमतायें हैं जिन्हें दूर करने के प्रयास किये जाने चाहिए।

अध्ययन क्षेत्र में जनसंख्या वृद्धि, घनत्व साक्षरता की कमी विशेष समस्यायें हैं। अत: क्षेत्र मे जनसंख्या एवं कृषि संसाधनों में भावी संतुलन बनाये रखने के लिए भविष्य में जनसंख्या तथा कृषि संसाधनों की उपलब्धता का आंकलन अति आवश्यक है।

अध्ययन क्षेत्र में व्यापक प्राकृतिक एवं मानवीय संसाधना के उपरान्त भी अनेक आर्थिक, सामाजिक और कृषिगत विषमतायें वास्तव मे मानवकृत है, इसका मुख्य कारण एक ओर तो प्राकृतिक संसाधनों का सम्यक् विकास न हो पाना तथा दूसरी ओर मानवीय संस्थाओं और अवस्थापनाओं द्वारा उनका विषम विकास हुआ है। क्षेत्र में परिश्रमी लोगों का शोषण होता है। जिससे उत्पादनशीलता में जनवृद्धि के समकक्ष भी वृद्धि दर तीव्र नहीं हो पायी है। वर्तमान समय में विभिन्न संस्थाओं एवं अवस्थापनाओं का इस रूप में सुधर एवं विकास हो रहा है। जिससे प्राकृतिक संसाधनों का मानव कल्याणार्थ अधिक से अधिक विकास होता रहे।

अन्तत: शोधार्थी आशान्वित है कि यदि क्षेत्र में कृषि व्यावसायीकरण एवं कृषि औद्योगिक विकास हेतु सुझाये गये उपायों को यदि ठीक प्रकार से लागू किया जाये तो जहां एक ओर कृषि का समग्र विकास होगा वहीं क्षेत्र में कृषि औद्योगिक विकास से खुशहाली आयेगी।

संदर्भ ग्रन्थ सूची-

1. Stamp, L.D. (1962), "Land of Britain its use and misuse" London 1.
2. Buck, J.L. (1973), "Land Utilisation in China".
3. Valken Burg, S.V. (1949), "The Project Forward Before the international Geographical Union at Lisbon".
4. Burnes, C.P. (1928), "Land Resources inventory in Michigan" Economic Geography, Vol. 5, page no. 1.
5. Coppack, J.T. (1971), "An Agricultural Geography of Great Britain", London, page 34.
6. Chaterjee, S.P. (1945), "Land use survey in India."
7. Safi, M. (1951), "A Plea for land use survey. Geographer."
8. Safi, M. (1960), "Land Utilisation in Eastern U.P.A.M.U. Aligarh."

9. Singh, B.B. (1988), Agro-Industrial integration A model for rural Development.
10- सांख्यिकीय पत्रिका जनपद शाहजहाँपुर, 2009
11. Shahjahanpur Census 2011 Highlights, Indian Population.

UGC Journal No. (Old) 2138
Peer-Reviewed Research Journal
Impact Factor 4.875, ISSN 0975-4083
Vol.- 24, Hindi Edition, Year-12, Oct. 2022- March 2023

व्यावसायिक आकांक्षा एवं संज्ञानात्मक विभेदन

•सोना राम वर्मा

सारांश- इस वर्तमान शोध कार्य का उद्देश्य व्यावसायिक आकांक्षा एवं आत्म संप्रत्यय, संज्ञानात्मक विभेदन के बीच संबंधों की जाँच करना है। यादृच्छिक प्रतिचयन तकनीक का प्रयोग करते हुए वर्तमान शोध कार्य में प्रतिभागिता हेतु रायपुर जिले (छ.ग.) के विभिन्न विद्यालयों एवं महाविद्यालयों से 16 से 20 वर्ष की आयु के 200 (100 छात्रों एवं 100 छात्राओं) को सम्मिलित किया गया। व्यावसायिक आकांक्षा के मापन हेतु व्यावसायिक आकांक्षा परीक्षण-हसन एवं शुक्ला (1998) का उपयोग किया गया है। संज्ञानात्मक विभेदन के मापन हेतु- संज्ञानात्मक विभेदन ग्रिड (मनचंदा एवं हसन, 1998) का उपयोग किया गया है। अध्ययन के परिणाम से स्पष्ट है कि व्यावसायिक आकांक्षा एवं आत्म संप्रत्यय, संज्ञानात्मक विभेदन, परिवेश (ग्रामीण एवं शहरी) के बीच सकारात्मक संबंध पाया जाता है। यह निष्कर्ष निकाला गया है कि व्यावसायिक आकांक्षा एवं आत्म संप्रत्यय, संज्ञानात्मक विभेदन के बीच संबंध के पर्याप्त अनुभवजन्य और सांख्यिकीय प्रमाण हैं।

मुख्य शब्द - व्यावसायिक आकांक्षा, आत्म संप्रत्यय, संज्ञानात्मक भिन्नता, मनोसामाजिक निर्धारक, परिवेश

प्रस्तावना- व्यावसायिक आकांक्षा वर्तमान में व्यवसाय चयन एक महत्वपूर्ण विषय है, चाहे वह आर्थिक दृष्टि से हो या समाज कल्याण या राष्ट्र के लिए हो। किसी व्यक्ति के कार्य करने की मात्रा एवं उस कार्य को सोचने की मात्रा उसके आकांक्षा स्तर पर आधारित होती है किसी भी व्यक्ति की व्यवसाय के प्रति जो आकांक्षा होती है उसे उसकी व्यावसायिक आकांक्षा कहा जाता है। वेबस्टर शब्दकोश (1976) उद्धृत करता है कि, "आकांक्षाएँ, प्राप्ति की बलवती इच्छा हैं।"[1] छात्र की व्यावसायिक आकांक्षा तीन प्रकार की हो सकती है । पहले छात्र जिनकी आकांक्षा अधिक है। दूसरे प्रकार के वे छात्र भी हैं जिनकी व्यावसायिक आकांक्षा अपने स्तर के अनुकूल होती है। अतः उन्हें आत्म-विश्वास की प्राप्ति होती है। तीसरे वे छात्र जो निम्न स्तर की आकांक्षा रखते हैं उनकी आकांक्षाओं पर उनके परिवार के निम्न स्तर का प्रभाव पड़ता है और काबिल होने पर भी वह पिछड़ जाते हैं।

एनसाइक्लोपीडिया ऑफ रिलीजन एंड एथिक्स (1971), "यह एक तीव्र इच्छा

• सहायक प्राध्यापक, पं. रविशंकर शुक्ल विश्वविद्यालय, रायपुर (छत्तीसगढ़)

है जिसके अंतर्गत व्यक्ति अपनी भौतिक भावनाओं की प्रतिपूर्ति करता है।''[2] जीवन को सुचारू रूप से चलाने के लिए प्रत्येक व्यक्ति को कोई न कोई कार्य अवश्य करना पड़ता है। प्रत्येक व्यक्ति को अपनी इच्छानुसार कार्य की प्राप्ति नहीं होती। व्यक्ति के आकांक्षा स्तर भिन्न-भिन्न होने के कारण कार्यों में भिन्नता होती है। बौद्धिक एवं मानसिक स्तर में भिन्नता भी स्पष्ट रूप से दिखलाई पड़ती है। इसका प्रत्यक्ष उदाहरण है कि हम समाज में सभी व्यक्तियों को विभिन्न व्यवसाय में संलग्न पाते हैं। व्यक्ति का जीवन निर्माण आकांक्षा स्तर द्वारा प्रभावित होता है। एक व्यक्ति क्या बनना चाहता है ? वह इस दिशा में कितना प्रयास या सफलता प्राप्त करना चाहता है। यह उस व्यक्ति के आकांक्षा स्तर पर निर्भर करता है। यही आकांक्षा स्तर व्यक्ति के लक्ष्य को निर्धारित करता है। ऑक्सफोर्ड शब्दकोश (1972) के अनुसार, ''यह वर्तमान स्थिति है जो अपनी इच्छाओं की प्रतिपूर्ति करता है।''[3]

व्यावसायिक आकांक्षा को प्रभावित करने वाले कारक-

1. आयु एवं लिंग का व्यावसायिक आकांक्षा का प्रभाव
2. व्यावसायिक आकांक्षा एवं उपलब्धि अभिप्रेरणा
3. व्यावसायिक आकांक्षा और समायोजन की क्षमता
4. व्यावसायिक आकांक्षा और निर्णय लेने की क्षमता
5. मानसिक तनाव एवं व्यावसायिक आकांक्षा
6. आत्म सम्मान और व्यावसायिक आकांक्षा

व्यावसायिक आकांक्षा के मनोसामाजिक निर्धारक- ऊपर दिए गए अध्ययनों से पता चलता हैं कि निम्नलिखित मनोवैज्ञानिक और सामाजिक निर्धारकों पर अध्ययन बहुत कम हुए हैं -

1. आत्म संप्रत्यय
2. संज्ञानात्मक भिन्नता
3. परिवेश (ग्रामीण एवं शहरी)

आत्म संप्रत्यय- आत्म संप्रत्यय को परिभाषित करते हुए कि यह बताया गया है कि यह व्यक्ति की अपने बारे में भावनाएँ हैं इसमें व्यक्ति का अपने बारे में प्रत्यक्षीकरण-अपने शरीर के संबंध में जागरूकता, योग्यताएँ, व्यक्तित्व, शील गुण और कार्य शैली समाहित है। जैसे-जैसे बच्चे उम्र में वृद्धि और विकास होता हैं वह इस दुनिया के बारे में सीखते है आत्म संप्रत्यय का सभी व्यक्ति के व्यक्तित्व अनुभव और व्यक्तिगत मूल्यांकन से है। हेमाचेक (1987) ने इसको परिभाषित करते हुए बताया है कि आत्म संप्रत्यय व्यक्ति का अपने बारे में संपूर्ण दृष्टिकोण है।[4]

रोजर्स (1951) ने बताया है कि आत्म संप्रत्यय व्यक्ति का ऐसा संगठित विन्यास है जिसमें वह स्वयं को प्रत्यक्षीकृत करता है और जिसके प्रति वह जागरूक रहता है। वास्तव में व्यक्ति अपने चारों तरफ के वातावरण के बीच में रहते हुए अपने बारे में एक धारणा बनाते है इस धारणा में इस धारणा के बहुत से तत्व होते है जैसे- उसकी योग्यताएँ, उसके व्यक्तित्व, शील गुण, उसकी पारिवारिक पृष्ठभूमि, उसकी शारीरिक बनावट, उसकी सामाजिक आर्थिक स्थिति, स्वास्थ्य इत्यादि।[5] इसके अतिरिक्त इसमें

उसके जीवन के मूल्य, अनुभव, लक्ष्य धनात्मक और निषेधात्मक विचार इत्यदि भी शामिल हैं। हेमाचेक (1987) ने कहा है कि यदि किसी व्यक्ति को पूर्ण स्वतंत्रता दी जाए कि वह अपने बारे में बताए तो वह अपने को बुद्धिमान, परिश्रमी, परिपक्व, जिम्मेदार एवं अन्तर्दृष्टिपूर्ण बताएगा।[6]

संज्ञानात्मक विभेदन- विभिन्न व्यवसायों के मध्य संज्ञानात्मक विभिन्नता का अर्थ यह है कि विभिन्न व्यवसायों से व्यवसाय संगत चरों के आधार पर अंतर करने की योग्यता। व्यवसाय संगत चरों के आधार पर जब कोई व्यक्ति विभिन्न व्यवसायों के मध्य अंतर करने की योग्यता विकसित कर लेता है तो यह योग्यता उसके व्यवसाय चयन में सहायक होती है।

कैली (1955) कहता है कि यह व्यक्तिगत निर्मितियाँ वास्तविकता की प्रतिनिधि होती है और इसके आधार पर व्यक्ति विभिन्न वस्तुओं में अंतर कर सकता है और विभिन्न घटनाओं में भी अंतर कर सकता है। व्यक्तिगत निर्मिति द्विध्रुवी होती है जैसे- लंबा बनाम छोटा यह व्यक्तिगत निर्मिति चीजों अथवा घटनाओं में विभिन्न आयामों के आधार पर अंतर करना भी सीखाती है।[7] इसी व्यक्तिगत निर्मिति तंत्र का प्रयोग बॉडेन ने व्यावसायिक मनोवैज्ञानिक के क्षेत्र में किया और व्यवसायों के मध्य संज्ञानात्मक विभेदन के संप्रत्यय को स्थापित किया। कैली की सिद्धांत में मनोवैज्ञानिक विमाओं पर आधारित है जैसे- छोटा-बड़ा, नीचे-ऊपर इसके आधार पर व्यक्ति को किसी विमा पर पूरा स्थान मिल जाता है जिससे जिसकी विभेदन क्षमता विकसित होती है। बॉडेन ने इसी संप्रत्यय का निर्माण करते हुए अपने प्रतिभागी से विभिन्न व्यवसायों के मध्य अंतर करने की क्षमता का अध्ययन किया। यह अंतर करने के लिए उसने व्यवसायों से संबंधित विभिन्न चरों जैसे- आर्थिक, सामाजिक प्रतिष्ठिता, परिश्रम, जोखिम इत्यादि चर।

परिवेश सामाजिक निर्धारक-

ग्रामीण एवं शहरी परिवेश- विद्यार्थियों के व्यावसायिक आकांक्षा पर भौगोलिक परिवेश का भी प्रभाव पड़ता है, ग्रामीण क्षेत्रों में निवासरत् विद्यार्थियों/बच्चों को पर्याप्त मात्रा में व्यावसायिक सूचनाएँ सही समय में नहीं मिल पाती है एवं ग्रामीण क्षेत्रों में व्यावसायिक सूचनाओं का अभाव होता है, जबकि शहरी क्षेत्रों में निवासरत् विद्यार्थियों को सही समय पर पर्याप्त मात्रा में व्यवसाय से संबंधित सूचनाएँ प्राप्त होती है, जिनसे विद्यार्थियों को व्यवसाय संबंधित मूल्यों को चयन करने में सहायता मिलती है। जिसके आधार पर भौगोलिक परिवेश बच्चों की व्यावसायिक आकांक्षा को प्रभावित करता है।

निवास स्थान- व्यावसायिक आकांक्षा को निवास स्थान भी प्रभावित करता है, व्यक्ति व विद्यार्थी जिस स्थान पर निवास करते है वहाँ कि पर्यावरण एवं भौगोलिक स्थिति जैसे- नदी, पहाड़ (पर्वत), झील, झरने, मैदानी भाग, जलवायु, ऋतु और वहाँ की आवागमन की सूविधाएँ, प्राकृतिक व मानवीय संसाधन, व्यवसाय संबंधी सूचनाएँ इत्यादि विद्यार्थियों की व्यावसायिक आकांक्षा को प्रभावित करती है। वनांचल् क्षेत्रों में निवासरत् विद्याथियों को पर्याप्त मात्रा में सुविधाएँ नहीं मिल पाती है जिनसे विद्यार्थियों की व्यावसायिक आकांक्षा कम पायी जाती है। जबकि शहरी क्षेत्रों में निवासरत् विद्यार्थियों को व्यवसाय संबंधी सूचनाएँ एवं आवागमन की सुविधाएँ पर्याप्त मात्रा में मिलती है। जिनसे

शहरी विद्यार्थियों की व्यावसायिक आकांक्षा उच्च होती है। शहरी क्षेत्रों में निवासरत् विद्यार्थियों में व्यवसाय संबंधी प्रतिस्पर्धात्मक भावनाएँ अधिक होती है।

विधि-

शोध अभिकल्प- वर्तमान शोध अध्ययन में सह-संबंध शोध अभिकल्प का उपयोग किया गया है। पूर्ववक्ता चर के रुप में आत्म संप्रत्यय, संज्ञानात्मक भिन्नता, परिवेश एवं कसौटी की चर के रुप में व्यावसायिक आकांक्षा का उपयोग किया गया है।

न्यादर्श- प्रस्तुत शोध अध्ययन में रायपुर जिले के विभिन्न शासकीय एवं अशासकीय महाविद्यालयों के (स्नातक स्तर के प्रथम वर्ष एवं द्वितीय वर्ष के कला एवं विज्ञान संकाय) 200 विद्यार्थियों एवं विभिन्न शासकीय, अशासकीय विद्यालयों के (कक्षा-11वीं एवं कक्षा-12वीं के कला एवं विज्ञान संकाय) 200 विद्यार्थियों का चयन स्तरीकृत यादृच्छिक न्यादर्श तकनीक के द्वारा किया गया है। प्रतिभागियों की आयु सीमा 16 वर्ष से 20 वर्ष तक थी।

परीक्षण: व्यावसायिक आकांक्षा परीक्षण - हसन एवं शुक्ला (1998)- व्यावसायिक आकांक्षा के मापन हेतु व्यावसायिक आकांक्षा परीक्षण हसन एवं शुक्ला (1998) का उपयोग किया गया है। इस परीक्षण में 16 प्रश्न सम्मिलित किये गये हैं। इन प्रश्न हेतु 10 विकल्प निर्मित किये गये है। प्रतिभागियों से सावधानीपूर्वक पढ़कर, स्वतंत्र व निष्पक्ष होकर जिस व्यवसाय से वह अपने आप को सहज रूप से पसंद करते है, उन पर निशान लगाने का निर्देश दिया गया था। प्रतिभागियों द्वारा दिये गये उत्तर का फलांकन तालिका के अनुसार किया गया है। विभिन्न शोध अध्ययनों से स्पष्ट है कि इस परीक्षण की विश्वसनीयता एवं वैधता संतोषजनक है।

संज्ञानात्मक विभेदन ग्रिड (मनचंदा एवं हसन, 1998)- यह परीक्षण मनचंदा एवं हसन (1998) द्वारा निर्मित किया गया है। इसका मुख्य उद्देश्य प्रतिभागी के उस क्षमता का परीक्षण करना है जिसके आधार पर वह एक व्यवस्था को दूसरे व्यवसाय से व्यावसायिक जनित मूल्यों के आधार पर अलग करते हैं इनमें क्षैतिज कॉलम में विभिन्न व्यवसायों की जानकारी दी जाती है एवं उर्ध्वाधर कॉलम में व्यवसाय जनित मूल्यों को लिखा जाता हैं। प्रतिभागी का कार्य व्यवसाय जनित मूल्यों के आधार पर विभिन्न व्यवसायों में अन्तर करना है।

इस परीक्षण में 12 व्यवसाय को 12 व्यावसायिक मूल्यों के आधार पर 6 बिन्दु लिकर्ट मापनी (बहुत कम = 1, और कम = 2, कम = 3, अधिक = 4, और अधिक = 5, बहुत अधिक = 6) पर उत्तर प्रतिभागियों ने दिया है। परीक्षण में न्यूनतम प्राप्तांक 144 तथा अधिकतम प्राप्तांक 792 है। विभिन्न शोध अध्ययनों से स्पष्ट है कि इस परीक्षण की विश्वसनीयता एवं वैधता संतोषजनक है।

प्रक्रिया- वर्तमान शोध अध्ययन पं. रविशंकर शुक्ल विश्वविद्यालय, रायपुर, भारत की मनोविज्ञान के शोध नैतिक समिति के द्वारा नैतिकता अनुमोदन प्रदान करने के उपरांत प्रारंभ किया गया है। प्रतिभागियों के शैक्षणिक संस्थान के प्राचार्य/संस्था प्रमुख के साथ अध्ययन के उद्देश्य एवं संभावित जोखिम एवं लाभ के बारे में विस्तार पूर्वक चर्चा की गई। संस्था प्रमुखों के सहमति के पश्चात् विद्यार्थियों के मध्य अध्ययन के उद्देश्य एवं

संभावित जोखिम एवं लाभ के बारे में बताया गया। तत्पश्चात् सभी प्रतिभागियों ने अपनी लिखित सहमति प्रदान करते हुए समस्त प्रश्नावली के प्रश्नों का उत्तर दिया। उत्तर देने के पश्चात् वर्तमान शोध अध्ययन में प्रतिभागियों को यह आश्वस्त कराया गया कि उनके द्वारा दिये गये उत्तर एवं व्यक्तिगत जानकारी की गोपनीयता रखी जायेगी एवं इसे किसी के साथ, किसी भी प्रकार की स्थिति होने पर साझा नहीं किया जायेगा। अंत में समस्त प्रतिभागियों, संस्था प्रमुखों एवं शिक्षकों को आभार प्रकट किया गया।

परिणाम एवं विवेचना- सभी 200 छात्रों के आँकड़ों को प्रदत्त विश्लेषण में शामिल किया गया है। प्रदत्त गणना हेतु बहु- प्रतिगमन विश्लेषण के उपयोग किया गया है। प्रदत्त विश्लेषण, एस. पी. एस. एस. के 21वें संस्करण के माध्यम से किया गया है।

व्यावसायिक आकांक्षा पर संज्ञानात्मक विभेदन के पूर्वानुमान प्रभाव- तालिका से स्पष्ट है कि भविष्यवक्ता संज्ञानात्मक विभेदन कुल भिन्नता की व्याख्या 26 प्रतिशत करता है ($R2 = 0.260$; $F(1,398)= 86.95$; $p<0.01$)। संज्ञानात्मक विभिन्नता व्यावसायिक आकांक्षा के साथ धनात्मक संबंध (0.235; $p<0.01$) पाया गया। स्पष्ट है कि जिन प्रतिभागियों में संज्ञानात्मक विभेदन क्षमता अधिक होती है, उनमें व्यावसायिक आकांक्षा उच्च स्तर की पायी जाती है।

तालिका क्रमांक 01
व्यावसायिक आकांक्षा पर संज्ञानात्मक
विभेदन के पूर्वानुमान प्रभाव के लिए प्रतिगमन मॉडल

तालिका क्रमांक 01
व्यावसायिक आकांक्षा पर संज्ञानात्मक विभेदन के पूर्वानुमान प्रभाव के लिए प्रतिगमन मॉडल

भविष्यवक्ता	β
संज्ञानात्मक विभेदन	0.235**
R^2	0.260**
$F_{(1, 398)}$	86.951**

*p<.05; **p<.01

स्पष्ट है कि शोध परिकल्पना व्यावसायिक आकांक्षा के पूर्ववक्ता के रूप में संज्ञानात्मक विभेदन विमा के अनुरूप प्रकट होगी, स्वीकृत होती है। पूर्व में भी विभिन्न सांस्कृतिक परिदृश्य में किये गये शोध अध्ययनों में लगभग समान प्रभाव पाए गए। नीमेयर, (1988)ए अली एवं मैकविहिटर, (2006)ए एवं चॉय एवं येंग (2022) के परिणाम भी उपरोक्त परिणाम की सहमति प्रदान करते है।

उपरोक्त परिणाम-जिन व्यक्तियों में विभिन्न व्यवसायों के बीच विभेदन क्षमता अधिक होती है अर्थात् वह विभिन्न व्यवसायों को व्यावसायिक मूल्यों के आधार पर अलग-अलग करने की समझ रखते हैं, उनकी व्यावसायिक आकांक्षा अधिक पाये जाने का कारण विभिन्न व्यवसायों के प्रति जागरूकता एवं समझ है। चूँकि वह संज्ञानात्मक रूप से शक्तिशाली होते हैं इसलिए स्वाभाविक रूप से व्यवसायों के चुनाव में उनकी

आकांक्षा स्तर उच्च पायी जाती है। इस परिणाम की व्याख्या में यह भी महत्वपूर्ण है कि इस अध्ययन में जिन प्रतिभागियों का प्रयोग किया गया वह सब शिक्षित थे। शिक्षित होने के कारण भी विश्लेषण की क्षमता बढ़ जाती है एवं इस विश्लेषण क्षमता का उपयोग व्यवसाय विभेदन में करते हैं जो हमारी परिकल्पना में संयमित होते है। अतः जिन विद्यार्थियों में संज्ञानात्मक विभेदन की क्षमता अधिक होती है उनका व्यावसायिक आंकाक्षा का स्तर अधिक होती है।

निष्कर्ष- इस वर्तमान शोध अध्ययन से स्पष्ट है कि व्यावासायिक आकांक्षा एवं संज्ञानात्मक विभेदन के मध्य संबंध हेतु अनुभवजन्य एवं सांख्यिकी प्रमाण है। वर्तमान शोध अध्ययन व्यावसायिक आकांक्षा के द्वारा संज्ञानात्मक विभेदन पर पड़ने प्रभाव के बारे विस्तृत जानकारी प्रदान करता है।

संदर्भ ग्रन्थ सूची-

1. वेबस्टर (1976). थर्ड न्यू इंटरनेशनल डिक्शनरी लंदन : इनसाइक्लोपीडिया ब्रिटैनिका, इंक., जी सी मेर्रियन, पृष्ठ 251-259.
2. एनसाइक्लोपीडिया ऑफ रिलिजन एवं एथिक्स (1971), जेम हेस्टिंग्स : पब्लिश्ड बाय मर्रिसन एंड गिब्ब एलटीडी. एडिनबर्ग, वॉल्यूम 2, पृष्ठ 127-128.
3. ऑक्सफोर्ड इंग्लिश डिक्शनरी (1972), लंदन : डब्ल्यू. एस. ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस, वॉल्यूम 1
4. हेमाचेक, डी. (1987). ए हिस्ट्री ऑफ़ ह्यूमनिस्टिक साइकोल, जी. इन जे. ए. ग्लोवर एंड आर. आर. रेनिंग (एडिशन) हिस्टोरिकल फॉउण्डेशन्स ऑफ़ एजुकेशनल साइकोल, जी. न्यूयार्क : प्लेनॉम, पृष्ठ 354-361
5. रोजर्स (1951), क्लाइंट सेंटरर्ड थेरेपी, इट्स करेंट प्रैक्टिस इम्प्लिकेशन्स एंड थ्योरी, बॉस्टन हॉगटन, पृष्ठ415-423
6. हेमाचेक, डी. (1987), ए हिस्ट्री ऑफ़ ह्यूमनिस्टिक साइकोल, जी. इन जे. ए. ग्लोवर एंड आर. आर. रेनिंग (एडिशन) हिस्टोरिकल फॉउण्डेशन्स ऑफ़ एजुकेशनल साइकोल, जी. न्यूयार्क : प्लेनॉम, पृष्ठ 354-361
7. केली, जी. (1955), द साइकोल, जी ऑफ़ पर्सनल कंस्ट्रक्टस. न्यूयार्क : नॉर्टन
8. डोनाल्ड, डब्ल्यू. बी. (1971), सोशिओ कल्चरल डिफरेंस अमंग थ्री एरियस इन केंटुकी ऐज डिटर्मिनेन्ट्स ऑफ़ एजुकेशनल एंड ऑक्यूपेशनल ऐस्पिरेशन एंड एक्सपेक्टेशंस ऑफ़ रूरल यूथ, डिज़र्टेशन एब्स्ट्रैक्ट इंटरनेशनल, ए, वाल्युम 31 (8), 4279 - ए
9. देसाई, ए. एन. (1974), ऐस्पिरेशन एंड वैल्यू प्रिफरेंस ऑफ़ रूरल एंड ओवरसीज स्टूडेंट्स इन मेकिंग ऑक्यूपेशनल डिसिजन्स, इंडियन जर्नल ऑफ़ साइकोलॉजी, 4 (1), पृष्ठ 39-46.
10. अहुजा, ए. (2016), ए स्टडी ऑफ सेल्फ - एफिकेसी अमंग सेकण्डरी स्कुल स्टूडेंट्स इन रिलेशन टु एजुकेशनल ऐस्पिरेशंस एण्ड एकेडमिक अचीवमेंट एजुकेशनल क्यूस्ट एन इएनटी. जे. ऑफ एजुकेशन एण्ड अप्लाइड सोशल साइंसेस. 7 (3), पृष्ठ 275-283.
11. आलम, एम. (2016), होम एनवायरनमेंट एंड एकेडमिक सेल्फ कांसेप्ट ऐज प्रेडिक्टर्स ऑफ कैरियर मैच्युरिटी. इंटरनेशनल जर्नल्स ऑफ़ एजुकेशन एंड मल्टीडिसपेंसेनरी स्टडीज, 4, (3), पृष्ठ 359-372.
12. इंगा एच. अनड्रेस्सेन (2016), कैरियर ऐस्पिरेशंस एंड सेल्फ नॉलेज डुरिंग एडोलसेन्स, जर्नल प्लस एजुकेशन. 16, पृष्ठ 15-23.

13. नीमेयर, जी.जे. (1988), व्यावसायिक व्यवहार में संज्ञानात्मक एकीकरण और भेदभाव, परामर्श मनोवैज्ञानिक, 16 (3), 440-475
14. अली, एस. आर., एवं मैकविहिरटर, ई. एच. (2006), रूरल एपलाचियन यूथ्स वोकेशनल/शैक्षिक पोस्टसेकंडरी एस्पिरेशन्स एप्लाइडिंग सोशल कॉग्निटिव कैरियर थ्योरी, कैरियर डेवलपमेंट जर्नल, 33 (2), 87-111.
15. चॉय, एम. डब्ल्यू., एवं येंग, ए. एस. (2022), संज्ञानात्मक और प्रभावशाली अकादमिक आत्म-अवधारणाएँ: जो व्यावसायिक शिक्षा के छात्रों के कैरियर की पसंद की भविष्यवाणी करती है? इंटरनेशनल जर्नल ऑफ एजुकेशनल रिसर्च ओपन, 3, 100-123।

UGC Journal No. (Old) 2138
Peer-Reviewed Research Journal
Impact Factor 4.875, ISSN 0975-4083
Vol.- 24, Hindi Edition, Year-12, Oct. 2022- March 2023

लिंग प्रादुर्भाव एवं लिंगार्चन

• आशुतोष शुक्ल

सारांश- ब्रह्म-विष्णु के व्यक्तिगत महानता के युद्ध में, उनके युद्ध को शान्त करने के लिए भगवान शिव का ज्योतिर्लिंग रूप में प्रकट होना ही लिंग का प्रादुर्भाव है। लिंग शिव का एक प्रतीक है, इसका जननेद्रिय रूप से पूर्णरूप से निरसन किया गया है। जो ज्योतिर्लिंग के प्राकट्य से ही व्यक्त है। ब्रह्म-विष्णु उसका आदि अंत भी नही जान पाते है तो क्या वह 'शिश्न' के लिए सम्भव होगा। यदि ऐसा होता तो कृष्ण व मार्कण्डेय आदिक लिंगार्चन न करते और सिद्ध प्राप्त करते जैसे विष्णु के प्रतीक रूप में शालिग्राम की पूजा होती है उसी प्रकार शिव के प्रतीक में लिंग की पूजा होती है।

मुख्य शब्द - ज्योतिर्लिंग, प्रतीक, शैव सम्प्रदाय

शैव सम्प्रदाय में लिंग के प्रादुर्भाव की कथा से लेकर लिंगार्चन का बहुत बड़ा महत्व है। प्राचीनता की दृष्टि से भी सृष्टिकाल के अनादिकाल से ही उद्भूत मानी जा सकती है। ऋग्वेद के अनुसार एक वह समय था कि सत्, असत्, स्थूल, सूक्ष्म एवं व्यावा, भूमि कुछ नही था। फिर विद्युत पुरूष (ज्योतिर्लिंग) उत्पन्न हुआ। इसी से कला, काष्ठादि सब चराचर उत्पन्न हुआ। जिस ज्योतिर्लिंग का पार ऊपर-नीचे, आस-पास कोई न पा सका। मनुस्मृति में इसकी पुष्टि की गई है। इससे यह स्पष्ट हो जाता है कि लिंगोपति की कथा वैदिक काल से ही प्रचलित है। लिंग की उत्पत्ति ब्रह्म और विष्णु के आयशी श्रेष्ठत्व के झगड़े को मिटाने के लिए हुई थी। बाद में लिंग के आदि अंत का पता न लगा सकने के कारण दोनों देव अंत में भगवान की स्तुति करते है। जो लिंगार्चन का समय भी वैदिककाल से ही मानने का संकेत है।

पुराणों में कुछ अंतर के साथ लिंगोत्पत्ति की कथा उपलब्ध होती है। ब्रह्म पुराण में लिंगोत्पत्ति की कथा शिवपुराण जैसी ही है। पर शिवपुराण जैसी विस्तृत नही। शिवपुराण में यह कथा तीन बार आई है। जबकि ब्रह्मपुराण में एक बार ही उल्लेख है। ब्रह्म और विष्णु में जब अपने श्रेष्ठत्व के विषय में विवाद होता है तभी एक ज्योतिर्लिंग उनके मध्य उत्पन्न होता है। उसके उत्पन्न होते ही ब्रह्म-विष्णु अपना युद्ध छोड़कर उसका पता लगाने के लिए क्रमशः ऊपर और नीचे की ओर चल देते है। ब्रह्म से पहले ही असफल होकर विष्णु वापस आ जाते है तथा ब्रह्म कुछ समय बाद वापस आकर विष्णु को वहा देखकर लिंग आदि का पता लगाने का झूठा प्रलाप करते है। उनकी झूठी वाणी को सुनकर महेश्वर उन्हे नही होने का श्राप देते है। शिवपुराण में ब्रह्म अपने आदि प्रगति के साक्षी रूप में केतकी पुष्प को भी

• **सहायक प्राध्यापक, संस्कृत, एस.आर.पी.कालेज, हनुमना**

साथ लाते है पर ब्रह्मपुराण में इसका कोई साक्ष्य नही है।

ब्रह्मपुराण के बाद यह कथा भविष्यपुराण में प्राप्त होती है जो अतिसंक्षिप्त है। कथा शिवपुराण जैसी ही है। लिंगोत्पत्ति के बाद विष्णु स्वयं ब्रह्म को ऊपरी भाग का पता लगाने के लिए कहकर वराह् रूप धारण कर नीचे की ओर लिंग का अंत पता लगाने स्वयं जाते है। लिंग पता न लगने पर दोनों ज्योतिर्लिंग के पास आकर सदाशिव की स्तुति करते है। स्तुति से प्रसन्न हो शिव विष्णु को भक्ति का वरदान देकर ब्रह्म को पालन करने के लिए कहकर अन्तर्धान हो जाते है, यहा शिवपुराण की कथा से यही अन्तर है।

स्कन्ध पुराण में कथा तीन बार आती है। प्रथम कथा आदि भाग दूसरे प्रकार का है। इसका कारण ब्रह्म-विष्णु का युद्ध नही है। बल्कि दारूवन में नग्न शिव को घूमता देखकर ऋषि पत्नियॉ उनके साथ घूमने लगी। जिससे कुपित हो ऋषियों ने उन्हे खण्ड होने श्राप देते है। फलतः उनका लिंग पृथ्वी पर गिर पड़ता है और द्यावा-पृथ्वी को व्याप्त कर लेते है। शेष कथा विष्णुपुराण जैसी है। दूसरी कथा पूरी शिवपुराण जैसी है। पर यहा केतकी के साक्षी रूप में प्रस्तुत करने का उल्लेख नही है। तीसरी कथा झूठे साक्ष्य का उल्लेख होने के कारण मूर्तरूप में शिवपुराण जैसी है।

वावनपुराण की कथा स्कन्धपुराण की प्रथम कथा के अनुरूप है। कुर्मपुराण में यह कथा स्वयं कृष्ण द्वारा मार्कण्डेय ऋषि को सुनाई गयी है। कृष्ण को लिंग पूजा करते देख मार्कण्डेय ऋषि को आश्चर्य होता है और वे कृष्ण से पूछते है कि आप सर्वश्रेष्ठ होते हुए भी किसकी पूजा करते है? इस प्रसंग में यह कथा कही गई है। कथा लिंगपुराण की कथा के अनुरूप हैं। ब्रह्मण्ड पुराण में यह कथा दो बार आई है। प्रथम बली के बाधने पर जब देवता विष्णु की स्तुति करते है तो प्रसन्न विष्णु उसमें शिव को कारण बताते है। इसी प्रसंग मे शिव के लिंग रूप में उत्पन्न होने की कथा कही गई है। कथा शिवपुराण जैसी ही है। यहा भी ब्रह्म द्वारा झूठ साक्ष्य का उल्लेख नही है। पर ब्रह्म एवं विष्णु की स्तुति से उस लिंग के प्रकट शिव उन्हे अपने दक्षिण एवं बाम भाग से उत्तपन्न बताते है। इससे स्पष्ट होता है कि लिंग स्वयं शिव स्वरूप है। ब्रह्म और विष्णु के जनक भी।

लिंग के विषय में भ्रमात्मक धारणा के निवारण बिना शिव के ''लिंगोपासना'' की वास्तविकता व सार्थकता को समझना होगा। लिंग के विषय में भ्रमात्मक धारणाओं को फैलाने वाले लोगों का तर्क, दारूवन में शिव के लिंग के गिरने के लिए, ''शिश्न'' शब्द का प्रयोग करते है। इससे यह स्पष्ट होता है कि दारूवन में प्रवेश के समय शिव नग्न थे, पर वैसे तो वे दीगाम्बर कहे जाते है, अतः उनके वेश वर्णन में शिश्न का वर्णन आया है किन्तु श्राप के समय ''लिंग'' का प्रयोग जननेन्द्रिय का निराकरण करता है और लिंग को शिव स्वरूप होना निश्चित करता है। यहॉ प्रसंगतः लिंग शब्द का जननेन्द्रिय से भिन्न मानने पर लिंग शब्द की व्युत्पत्ति एवं इन कथाओं से लिंग शब्द के तात्पर्य का स्पष्टीकरण कर देना अनुचित न होगा।

व्याकरण के विद्यार्थी शब्दों की विशिष्ट श्रेणी के लिये स्त्रीलिंग, पुलिंग एवं नपुंसकलिंग का प्रयोग करते है। हम लिंग शब्द का अर्थ यदि जननेन्द्रिय मानने लगे तो ग्रंथ का भाव ही समाप्त हो जाय और शब्दों में बड़ी कठिनाई हो जायेगी। साथ ही शीलता के भय से लोग व्याकरण के ज्ञान से शून्य हो जायेगे जो वाणी के शुद्धाशुद्धि का निर्णय न कर

सकेगें। इस तरह अशुद्ध शब्दों के प्रयोग से अनेको अनर्थ होगें। अभीष्ट सिद्धि में बाधा होगी जैसा कि वृत्तासुर के विषय में प्रसिद्ध है। इसलिए लिंग शब्द का मात्र जननेन्द्रिय के लिए रूढ़ करना हिन्दू धर्म के प्रति विरोध भावना को व्यक्त करना है। तथा उसे अन्य धर्म से हेय बताना है। इस तरह के प्रलापों से अशिक्षित लोगों को सुगमता से धर्मवंचित किया जा सकता है और दूसरे धर्म में दिक्षित करने का अवसर मिल सकता है। यही भावना पाश्चात्य विद्वानों ने की थी। साथ ही उनका अंधानुकरण करने वाले भारतीय विद्वान उसी राग में अलापने में अपना महत्व समझते है। यदि आर्य ग्रंथों में उपलब्ध लिंग शब्द के अर्थो पर विचार किया जाय तो यह भ्रम बिल्कुल दूर हो जायेगा। यह लिंग शब्द के विभिन्न अर्थो में प्रयुक्त होने के कुछ कारण प्रस्तुत किये जाते है।

"निष्क्रमण प्रवेशनमित्याकाशस्य लिंगम्" (वैदिक दर्शन 2.9.90)

यहॉ लिंग शब्द आकाश के लक्षण अर्थ में प्रयुक्त हुआ है। इसी प्रकार काल, दिशा, आत्मा एवं मनादि के लक्षण के लिए भी लिंग शब्द का प्रयोग हुआ है। उपर्युक्त प्रमाणों से यह सिद्ध होता है कि लिंग शब्द का प्रयोग लक्षण के लिए भी किया गया है। इस तरह लिंग शब्द का जननेन्द्रिय के अतिरिक्त व्याकरण व न्याय वैशेषिक दर्शनों में विशिष्ट पारभाषिक शब्द के रूप में प्रयुक्त हुआ है। इस तरह लिंग शब्द का अर्थ, प्रतीक, संज्ञा, परिभाषा, लक्षण, चिन्ह, निशान आदि होता है। यही अर्थ शिव के लिंग रूप में प्रतिष्ठित होने के विषय में भी है। शिव परम्ब्रह्म माने गये है और लिंग उनका चिन्ह (प्रतीक) है। अतः लिंग रूप में उनकी उपासना प्रत्येक आस्तिक का कर्तव्य ही है।

दूसरी बात यह है कि लिंग प्रादुर्भाव की कथा में उसके आदि-अंत का पता न लगने की भी बात कही गई है। यदि हम लिंग का अर्थ जननेन्द्रिय मान लेते है तो उसके लम्बाकार होने से उसका पता लगाना सम्भव है किन्तु शिव चिन्ह अण्डाकार माना गया है। अतः उसका आदि अंत स्थिर न होगा स्वाभाविक ही है। क्योकि उसके हर एक पहलू को केन्द्र और परिधि दोनों कहा जा सकता है। इससे भी शिवलिंग को जननेन्द्रिय से समवद्ध करने की बात अपलाप ही प्रतीत होती है। ब्रह्मण्ड पुराण के कथनक के प्रसंग में भी इसका निराकरण कर दिया गया है

लिंनार्थ गमकं चिन्हं लिंगमित्यभिधियते।
यं वृद्धिं गच्छति यत्यार्द भगः प्रकृति रूच्चते।।
मुख्यो भगस्तु प्रकृतिर्भगवानशिवउच्चते (शिवपुराण वि.सं.16/106)

यहा पर अव्यक्त वस्तु का ज्ञान कराने वाले को लिंग कहा गया है और प्रकृति को भग नाम से सम्बोधित किया गया है। अतः उसके अधिष्ठाता शिव को लिंग रूप में माना जाना न्यायसंग ही है। यहा योनि को भी जननेन्द्रिय मानना अन्याय ही होगा। क्योकि यर्जुवेद में कहा गया है कि-

लिंगमर्थ ही पुरूषं शिवम् गमयतीत्पदः।
शिवशक्त्योश्र चिन्हस्य मेलनं लिंगमुच्चते।। (शि.वि.सं.16/107)

लोक में दो प्रकार की उपासना उपलब्ध है। एक निराकार दूसरी साकार शिव की साकर (बेर) व निराकर (लिंग) दोनों रूपों में पूजा होती है। सकार रूप में उसकी मानवाकृति की पूजा होती है तथा निराकार में लिंग स्वरूप की। इसका मुख्य कारण यह है

कि सृष्टि के आरंभ में निराकार ब्रह्म साकर रूप में परिणित होता आया। सर्वप्रथम गोल अण्डाकर ब्रह्मण्ड के रूप में प्रकट हुआ यही गोल अण्डाकार ओं (ऊँ) अथवा शिवलिंग नाम से ब्रह्म का संकेत नियत हुआ। इसलिए अनादिकाल वह ब्रह्म उपास्य आस्तिकों का पूजा चिन्ह आज भी उसी रूप मे स्थित है। शालिग्राम पूजा भी इसी निराकारोंपासना की परिचायक है।

उपासना में एक बात और देखी जाती है कि जब उपासक साकार से निराकर की ओर बढ़ता है और उसकी उपासना क्रमशः सम्प्रज्ञात समाधि से असम्प्रज्ञात समाधि की ओर बढ़ती है तो सम्प्रज्ञात समाधि के चित्रादि उसके चिन्ह मात्र में ही अवशिष्ट रहते है। अतः वे भी आलोक के रूप में भी अवशिष्ट हो जाते है। शिवोपासना में लिंगोपासना उसी सोपान का निदर्शन है जो आज की सर्वश्रेष्ठ एवं बहुप्रचलित, सर्वग्राह्य, सार्वजनीन उपासना के रूप स्थिर है।

इसी कथा से एक ओर निराकारोपासना का संकेत प्राप्त होता है वही दूसरी ओर शिव का महत्व एवं उनकी अन्य देवों की अपेक्षा श्रेष्ठता का भी प्रतिपादन होता है। आलोचकों के अनुसार "शिव ब्रात्य" देव है। इसी पुष्टि में भी यह कथा दी जाती है। यह कथा शिव के महत्व ज्ञान के लिए बाद में शैवोपासकों द्वारा शिव को बड़ा एवं आदि देव बनाने की कल्पना से गढ़ी गई थी पर वैदिक साहित्य मे भी इस कथा का संकेत प्राप्त होने से इसप्रकार का आक्षेप विरोध भावना को ही पुष्ट करता है।

इससे स्पष्ट होता है कि लिंगोत्पत्ति की कथा जितनी पुरानी है, उतनी ही लिंगोपासना। वैदिक साहित्य के साथ सिंधुघाटी सभ्यता एवं सूत्र ग्रंथों में मूर्ति पूजा के साथ लिंगोंपासना का भी पूर्ण उल्लेख प्राप्त होता है।

इस तरह अनादि, अपौरूषेय वेदों एवं तन्मूलक इतिहास, पुराण, तंत्रों द्वारा शिव का परमेश्वरत्व, शान्तत्व, सर्वपूज्यत्व सिद्ध होते है, और उनकी पूजा भी उसी प्रकार अनादि सिद्ध है। वे शिवमूर्ति एवं अनन्तमूर्ति है, अतः यौगिक, आध्यात्मिक, वैदिक, भावनामयी, यथार्थमयी, अनेक सूक्ष्म, स्थूल, मूर्त, अमूर्त, पंचमुख, अर्धनारेश्वर और लिंगवेर आदि के रूप में तथा अन्य सूर्य, विष्णु आदि के रूप मे वही उपास्य है। उनकी यह उपासना समीचीन एवं परम कल्याणमय है।

संदर्भ ग्रन्थ सूची-

1. ब्रह्मपुराण –हरिनारायण आपटे
2. ब्रह्मण्ड पुराण – बोधायन धर्मशास्त्र
3. स्कन्ध पुराण
4. पुराण परशीलन, पंण्डित गिरधर शर्मा चतुर्वेदी
5. पुराण तत्व मीमांसा, कृष्णमणि त्रिपाठी लिंगपुराण, नवल किशोर प्रेस लखनऊ

UGC Journal No. (Old) 2138
Peer-Reviewed Research Journal
Impact Factor 4.875, ISSN 0975-4083
Vol.- 24, Hindi Edition, Year-12, Oct. 2022- March 2023

आधुनिक युग और गांधी की अहिंसा

• सत्यनारायण

सारांश- आज देश बारूद के ढेर पर बैठा हुआ है। दुनिया कब लीर-लीर हो जाएगी या धुं-धुं करके जल जाएगी, मानव इस ओर कब देख रहा है, बल्कि उल्टे वह परमाणु शक्ति की होड़ में तेजी से दौड़ रहा है। आज प्रत्येक देश शक्तिशाली बनना चाहता है और उसके लिए वह हर सम्भव परीक्षण किये जा रहा है। घातक से घातक हथियार खोजे जा रहा है, यहां तक कि कैमिकल बम तक बना लिए गए हैं, जो क्षण-भर में ही मनुष्य को अस्ति-पिंजर में बदल सकते हैं। इतना ही नहीं यह परमाणु-होड़ न केवल मनुष्य के लिए ही घातक है, बल्कि पशु-पक्षी, पेड़-पौधों और पर्यावारण के लिए भी घातक है । कहने का तात्पर्य यह है कि पूरे ब्रह्मण्ड के विनाश का धोतक है। दूसरी ओर ऐसा भी नहीं है कि अंतराष्ट्रिय स्तर पर शान्ति के लिए प्रयास नहीं किए जा रहे हैं। परमाणु सन्धि के लिए भी अंतराष्ट्रिय कोशिश की जा रही है। परन्तु इन सन्धियों को लेकर अनेक देश आन्तरिक-क्लेश से भी गुजर रहे हैं। इन समझौतों में किसके हाथ क्या लगेगा, यह कोई नहीं जानता। लेकिन इस सत्यता से कोई भी इन्कार नहीं कर सकते कि आज की इन असमंजस भरी परिस्थितियों में विश्व की रक्षा एवं शान्ति के लिए अहिंसा ही सबसे कारगर हथियार है अर्थात अहिंसा से ही स्थाई शान्ति प्राप्त की जा सकती है। इस लिए आज के परिपेक्ष्य में यह कहना अनुचित न होगा कि आधुनिक युग की इस परमाणु होड़ में गाधी की अहिंसा अधिक मूल्यवान हो जाती है। जिसे गांधी 'प्रेम' की संज्ञा देते हैं, क्योंकि प्रेम से ही मनुष्य का ह्रदय परिवर्तित हो सकता है न कि युद्ध आदि से।

मुख्य शब्द -अहिंसा, परमाणु शक्ति, देश, शक्तिशाली, हथियार

अहिंसा शब्द ऐसा नहीं है कि अहिंसा गांधी की ही देन है अहिंसा शब्द का अति प्राचीन काल से प्रयोग होता रहा है। स्वदेश-विदेश में इसकी व्याख्या भी असंख्य हुई है। भारतवर्ष में वैदिक-काल से लेकर आधुनिक काल तक इसकी चर्चा हुई है। अहिंसा हमारे धार्मिक संस्कारों से जुड़ी हुई है। आर्य संस्कृति के प्रारम्भिक स्वरूप में अहिंसा विद्यमान थी, किन्तु शुद्ध रूप में नहीं। लेकिन धीरे-धीरे समय के साथ उसका स्वरूप परिष्कृत होता गया और उपनिषद् काल तक आते-आते अपने सम्पूर्ण बौद्धिक परिमार्जन के रूप से प्रकट हुआ है। अहिंसा शब्द का पहली बार प्रयोग छान्दोग्य-उपनिषद् में हुआ है जिसमें यह तक कहा गया है कि यज्ञ, हवन आदि में भी अहिंसा को महत्व दिया जाना चाहिए।[1]

• **एसोसिएट प्रोफेसर, राजकीय स्नातकोत्तर महिला महाविद्यालय, पंचकुला**

महाभारत अहिंसा के उल्लेखों से भरा पड़ा है। अहिंसा की सर्वाधिक लोकप्रिय व्याख्या करते हुए अहिंसा को परम धर्म, परम तप, परम सत्य, परम संयम, परम यज्ञ, परम मित्र, परम सुख कहा गया है।[2] ऋग्वेद में हिंसा से मुक्त होने की प्रार्थनाएं की गयी हैं। बुद्ध ने अपने धर्म में अहिंसा को स्थान दिया है। जैनियों ने भी अहिंसा का पालन करने पर जोर दिया है। ईशामसीह की अहिंसा की शिक्षा सर्वविदित है। इस्लाम धर्म में भी 'इस्लाम' का अर्थ शान्ति है।

अहिंसा एक शब्द नहीं, बल्कि एक नियम है, सिद्धान्त है, जिसका पालन व्यक्ति एवं समाज दोनों को ही करना चाहिए। गांधी जी ने अहिंसा का न केवल पालन ही किया, बल्कि उसे अपने जीवन में भी उतारा। अर्थात् प्राचीन काल से सैद्धान्तिक-रूप में चली आ रही अहिंसा को गांधी जी ने ही उसे व्यावहारिक रूप दिया और अपना सारा जीवन सत्य और अहिंसा के लिए ही जीया। उन्होंने स्पष्ट रूप से समझा कि अहिंसा ही मानव-कल्याण के लिए परम शस्त्र है और उसे व्यवहार में लाया जा सकता। भारतवर्ष की आजादी के लिए गांधी ने अहिंसा को ही हथियार बनाकर अंग्रेजों को खदेड़ा। परन्तु दुश्मनों की तरह नहीं, अपितु मित्रों की तरह। अब जब गांधी अहिंसा का सहारा लेकर अपने देश को आजादी दिलवा सकते हैं तो फिर आधुनिक परिस्थितियों से निपटने के लिए, यदि पूरा विश्व गांधी की अहिंसा को अपना ले तो स्थायी शान्ति प्राप्त कर सकता है। क्योंकि अहिंसा का अर्थ - किसी को न मारना ही नहीं है, जो कि एक आंशिक अर्थ है, बल्कि वह प्रेम है। प्रेम से ही आप किसी का हृदय परिवर्तित कर सकते हैं न कि ताकत से या युद्ध आदि से। गांधी ने तो यहां तक कहा है कि मानव जाति के इस नियम के अनुसार आचरण करते हुए एक अकेला इन्सान भी अपने सम्मान, अपने धर्म या अपनी आत्मा की रक्षा के लिए किसी भी अन्यायी साम्राज्य की पूरी शक्ति का मुकाबला कर सकता है और उस साम्राज्य के पतन का अथवा पुनरुथान की नींव रख सकता है।[3] इस प्रकार गांधी ने अहिंसा को एक नया संदर्भ दिया, एक नया स्वरूप दिया, एक नया आयाम दिया, एक नयी व्याख्या दी।

आधुनिक युग पंख लगाकर आकाश में उड़ रहा है और अपनी पृष्ठभूमि से दूर होता जा रहा है, जबकी जीवन तो पृथ्वी पर ही सम्भव है न कि आकाश में। यही कारण है कि अक्सर लोग अहिंसा को निषेधात्मक अर्थ में देखते हैं और कहते हैं कि अहिंसा तो कायर लोगों के लिए है। परन्तु गांधी की अहिंसा भावात्मक है। गांधी अहिंसा का भावात्मक पक्ष रखते हुए कहते है कि "अगर हम अहिंसक प्रतिरोध का इस्तेमाल करना जानते होते, जो सिर्फ मजबूत लागों के ही बस की बात है, तो हम दो टुकड़ों में बंटे भारत के बजाए दुनिया के सामने आजाद भारत की बिल्कुल दूसरी ही तस्वीर पेश कर सकते थे।"[4] यहां भारत के दो टुकड़े हो जाने का यह मतलब नहीं निकालना चाहिए कि यह निष्क्रिय प्रतिरोध का परिणाम है। क्योंकि निष्क्रिय प्रतिरोध कमजोर व्यक्तियों का साधन है, जबकि अहिंसात्मक प्रतिरोध बहादूरों का मार्ग है। अहिंसात्मक प्रतिरोध में हृदय परिवर्तन की शक्ति होती है। गांधी का मानना है कि निष्क्रिय प्रतिरोध में इतना बल नहीं होता की वह लोगों को हृदय बदल सके। विष को अमृत में बदलना सम्भव है और इसका तरीका है हृदय-परिवर्तन, जो अहिंसा द्वारा ही किया जा सकता है।[5] इससे स्पष्ट है कि

अहिंसा मात्र निषेधात्मक नहीं, बल्कि इसका भावात्मक अर्थ भी है। क्योंकि हिंसा से, कमजोर व्यक्ति को डराया तो जा सकता है, परन्तु उसका हृदय-परिवर्तन नहीं किया जा सकता। गांधी की अहिंसा का मूल आधार प्रेम है। प्रेम अहिंसा है। प्रेम से विरोधी को भी जीता जा सकता है, विश्व जीता जा सकता है। लेकिन परमाणु शक्ति से विश्व को जीता नहीं जा सकता बल्कि उसको नष्ट किया जा सकता है। इतिहास इस बात का गवाह है कि युद्ध से, हिंसा से भूमि का कुछ टुकड़ा तो अवश्य जीता जा सकता है, वह भी अस्थाई तौर पर। परन्तु लोगों के दिलों को नहीं जीता जा सकता। इसके लिए सबसे बड़ा प्रमाणित उदाहरण है अशोक महान। इस घटना को पूरी दुनिया जानती है कि युद्ध के दौरान अशोक ने कितने ही लोगों को मार गिराया, लेकिन वह महान नहीं हुए। उसके बाद अहिंसा का पालन करते हुए, प्रेम का सन्देश लेकर जगह-जगह घूमें और अशोक महान कहलाए। इसी लिए गांधी कहते है कि हमें प्रेम का प्रसार करना चाहिए और अपने प्रति अनीति एवं पापाचरण करने वाले के साथ भी नेकी तथा दया का व्यवहार करना चाहिए।6 अतः अहिंसा मार्ग में विरोधी की बुराई को प्रेम के द्वारा दूर करना आवश्यक है। यही सच्ची अहिंसा है। जैसा कि ईशा ने सूली पर कहा था, ''परम पिता इन्हें क्षमा कर दीजिए क्योंकि इन्हें पता ही नहीं कि ये क्या कर रहे हैं।''[7] यही अहिंसा का सही अर्थ है। गांधी ने स्वयं इस प्रकार के प्रयोग किए और उन्हें सफलता भी मिली थी।

अब प्रश्न यह उठता है हम किसी को नहीं मारते, किन्तु दूसरा हमें मारे तो अहिंसा का प्रयोग कैसे करें? यह प्रश्न आधुनिक युग की ही समस्या है जिसे देखते हुए मैंने इस विषय का चुनाव किया क्योंकि प्राचीन-काल में तो अहिंसा साधू-सन्तों तक ही सीमित मानी जाती रही है। गांधी जी ने यह महसूस किया कि अहिंसा का पालन करना जितना साधू-सन्तों के लिए आवश्यक है उतना जनसाधारण के लिए भी है। आधुनिक युग में, जहां नैतिकता का दिन-ब-दिन पतन होता जा रहा है, वहां तो अहिंसा का पालन करना और भी अधिक आवश्यक हो गया है। आज जिस आतंकवाद जैसी गम्भीर समस्याओं से हर देश गुजर रहा है, उसके लिए अहिंसा का महत्व और भी बढ़ गया है। उक्त प्रश्न के जवाब में गांधी जी कहते हैं कि जो खतरा सामने देख कर भागे, वह अहिंसक हो ही नहीं सकता। कुत्ते को देख कर भाग जाने वाला खरगोश इसलिए नहीं भागता कि यह बड़ा अहिंसक है। वह बेचारा तो कुत्ते को देखते ही भय से कांपने लगता है और अपनी जान बचाने के लिए भागता है। इसलिए सच्चे अहिंसक की तभी परीक्षा होती है कि वह ऐसे अवसर पर प्रेम से सहिष्णुतापूर्वक व्यवहार करे। अर्थात वह अहिंसक व्यवहार करे।[8] अतः मनुष्य को अहिंसा का मार्ग कभी नहीं छोड़ना चाहिए। क्योंकि अहिंसा न केवल विरोधी पर हमारी विजय सम्भव बनाती है, अपितु हमें भीतर से अधिक उदात्त बनाकर अपने मानव-बन्धुओं के साथ संयुक्त करती है। वह हमारे भीतर सबसे उच्च और सबसे श्रेष्ठ तत्व को जाग्रत करती है, क्योंकि वह प्रेम पर आधारित है। गांधी प्रेम को ऐसी उर्जा कहते हैं जो अनजाने ही, पर निश्चित रूप से मानव जाति के उत्थान के लिए सक्रिय रहती है। उन्होंने मानव कि ''सम्पूर्ण प्रेम का नियम ही अस्तित्व का नियम है।''[9] इस लिए अहिंसा ही सम्पूर्ण विश्व में स्थाई शान्ति स्थापित करने का एकमात्र मार्ग है क्योकि अहिंसा प्रेम है। जबकि परमाणु-शक्ति विश्व का विनाश तो कर सकती है, लेकिन शान्ति

स्थापित नहीं कर सकती। इसलिए आधुनिक युग जिस रफतार से परमाणु-शक्ति की और बढ़ रहा है, अर्थात् मनुष्य के विनाश की ओर बढ़ रहा है, ऐसे समय मे गांधी की अहिंसा और भी अधिक मूल्यवान हो जाती है, जो विश्व को एक सूत्र में पिरोकर विश्व-बन्धुत्व की ओर ले जाती है।

गांधी जी अहिंसा पर ओर अधिक प्रकाश डालते हुए कहते हैं कि जैसे पशु-जगत का नियम हिंसा है, वैसे ही मानव जाति का नियम अहिंसा है। क्योंकि पशु की आत्मा सोई रहती है और यह शरीर-बल के अलावा कोई नियम नहीं जानता लेकिन मनुष्य का गौरव एक उच्चतर नियम-आत्मा की शक्ति के निर्देश पर चलने में है।[10] यही सत्य है कि अहिंसा सभी मानव जाति के लिए है। इसे बच्चे, युवा, स्त्री-पुरुष, प्रौढ़ व्यक्ति सभी साध सकते हैं। गांधी लिखते है कि "मैंने अपने युवाजीवन के आरम्भ से ही समझा कि अहिंसा व्यक्ति द्वारा अपनी शान्ति और मोक्ष प्राप्ति के लिए अपनाया जाने वाला कोई एकान्तिक गुण नहीं है, बल्कि यह सामाजिक आचरण का नियम है, यदि समाज को निरन्तर मानव गरिमा के साथ जीना है और उस शान्ति को प्राप्त करने की दिशा में प्रगति करनी है, जिसके लिए वह युगों से तरस रहा है।"[11] अतः अहिंसा पूरे समाज के लिए। यह व्यक्तिगत होते हुए भी सामूहिक है। जिस प्रकार पृथ्वी गुरुत्वाकर्षण के प्रभाव में बंधकर अपनी कक्षा में स्थित है उसी प्रकार सारा समाज अहिंसा के सूत्र मे बन्धा हुआ है। अतः अहिंसा का नियम मनुष्य के लिए अति आवश्यक है क्योंकि अहिंसा आत्म-शक्ति है।[12]

मनुष्य मूलरूप से अहिंसक ही है। दैनिक जीवन में अहिंसा का प्रथम मार्ग यह है कि हमें अपने व्यवहार में परस्पर सच्चाई, विनम्रता, सहिष्णुता और प्रेममय दयालुता का परिचय देना चाहिए और ऐसा परिचय कोइ अहिंसक ही दे सकता है न की हिंसक। गांधी जी कहते हैं कि अहिंसक व्यक्ति के साथ अहिंसा का व्यवहार करना कोई बड़ी बात नहीं है। अहिंसा का व्यवहार उस समय आवश्यक है जब चारों और हिंसा व्याप्त हो रही हो।[13] इसी लिए आज के युग में गांधी की अहिंसा की प्रासंगिकता और भी अधिक मूल्यवान है। क्योंकि आज साम्प्रदायिक दंगे, धर्म के नाम पर आंतकवाद, परमाणु-शक्ति की होड़ आदि हिंसा का तांडव चारों और फैला हुआ है। मनुष्य अपने को कहीं भी सुरक्षित नहीं पाता। प्रश्न उठता है कि इसमें गांधी की अहिंसा का क्या क्या योगदान है? इसका उत्तर यह है कि ऐसी परिस्थितियों में केवल गांधी की अहिंसा ही मनुष्य की, समाज की, राष्ट्र की रक्षा कर सकती है। ऐसे समय में ही गांधी की अहिंसा की परीक्षा हो सकती है। इसके लिए इतना-सा करना है कि गांधी की अहिंसा को व्यवहार में लाना है। यदि पूरा समाज अहिंसा को अपना वो यह दुनिया स्वर्ग बन जाएगी। अगर पूरा समाज नहीं तो भी एक या एक से अधिक व्यक्ति भी अहिंसा का पालन करने लग जाएं वो भी आज की हिंसा का मुकाबला कर सकते हैं और उसमें सफल भी हो जाएंगे। इसके लिए गांधी स्वयं उदाहरण है जिन्होंने अहिंसा के मार्ग पर चलते हुए भारतवर्ष को आजादी दिलवायी। रविन्द्रनाथ टैगोर का भी कहना है कि "आगामी कल में विजय उसकी नहीं होगी जो मार सकता है, बल्कि विजय उसकी होगी जो मौत झेल सकता है।"[14]

आज के इस यान्त्रिक युग में गांधी की अहिंसा पर विवाद खड़ा करना कोई नया तथ्य नहीं है, क्योंकि गांधी के जीवन-काल में भी उनकी अहिंसा को लेकर विद्वानों ने उन

पर अनेक आक्षेप लगाए। परन्तु गांधी अपनी अहिंसा के साथ आगे बढ़ते रहे और बिना विचलित हुए तथा बड़ी विनम्रता से उन आक्षेपों का जवाब देते रहे। उन आक्षेपों में मुख्यरूप से यह था कि अहिंसा को निर्बल व्यक्ति हो अपना सकते है और यह तो कायरता है। इसके लिए गांधी कहते है कि हिंसा और कायरतापूर्ण पालन में मैं हिंसा को ही तरजीह दूंगा। क्योंकि अहिंसा कायरता नहीं, बल्कि वह तो वीरता की चरम सीमा है।[15] अतः अहिंसा कायरता की आड़ नहीं वह तो वीर का सर्वोच्च गुण है। इस लिए प्रेम ही वह शक्ति है जो पूरे विश्व को एक सूत्र में पिरो सकती है। आज यदि विश्व की महाशक्तियां हिंसात्मक दृष्टिकोण त्यागकर सच्चे हृदय से अहिंसात्मक आदर्श को अपना ले जिसे गांधी प्रेम कहते है, तो विश्वशान्ति कोई बड़ी बात नहीं। ऐसी शान्ति युद्धजन्य शान्ति की अपेक्षा अधिक चिर-स्थायी प्रभावी, सन्तोषजनक और सुखद होगी। इस प्रकार गांधी द्वारा प्रतिपादित अहिंसा में व्यक्ति के आत्मकल्याण व आत्मशुद्धि के साथ-साथ लोक-कल्याण की भावना भी विद्यमान है। अतः आज का कटु सत्य यह है कि व्यक्ति को हिटलर बनना जितना आसान लगता है उससे कहीं लाख गुना मुश्किल है, गांधी बनना। यही आज के युग के मानव की सबसे बड़ी समस्या है कि वह त्याग नहीं कर सकता, जबकि गांधी जी की अहिंसा पूर्ण त्याग पर आधारित है।

संदर्भ ग्रन्थ सूची-

1. डॉ. प्रभात कुमार, गांधी दर्शन, कॉलेज बुक डिपो जयपुर, पृ.-37
2. वही
3. गांधी; यंग इण्डिया, 1.8.1920, नवजीवन पब्लिशिंग हाऊस, अहमदाबाद, पृ.-3
4. गांधी, हरिजन, 20.07.1749, गरलैण्ड पब्लिशिंग इनक, पेरिशन न्यूयॉर्क, लंदन, पृ.243
5. वही
6. यंग इण्डिया, 25.5.1920, असहयोग का धार्मिक तत्व, अंश का लेख, नवजीवन पब्लिशिंग हाऊस, अहमदाबाद
7. त्रिपाठी, गांधी का सामाजिक धर्म, स्तति प्रकाशन, नई दिल्ली, पृ.-69
8. यंग इण्डिया, 28.5.1924, नवजीवन पब्लिशिंग हाऊस, अहमदाबाद, पृ.-179
9. वही, 6.3.1922
10. खड़ग-बल का सिद्धान्त, सम्पूर्ण गांधी वाड्मय, खण्ड-18, प्रकाशन विभाग सूचना और प्रसारण मंत्रालय, भारत सरकार, दिल्ली पृ.-144
11. श्री गांधी जी कॉरैस्प,डैन्स विद द गवर्नमैंट, नवजीवन पब्लिशिंग हाऊस, अहमदाबाद,पृ. -44
12. गांधी, हरिजन, 7.1.1939, गारलैंड पब्लिशिंग इनक, पेरिशन न्यू य,र्क, लंदन, पृ.-417
13. वही, 2.4.1938 पृ.-64
14. रामनारायण उपाध्याय, अहिंसा की कहानी, रचनाकार प्रकाशन, दिल्ली, पृ.-15
15. यंग इण्डिया, 28.05.1924, नवजीवन पब्लिशिंग हाऊस, अहमदाबाद, पृ.-178

UGC Journal No. (Old) 2138
Peer-Reviewed Research Journal
Impact Factor 4.875, ISSN 0975-4083
Vol.- 24, Hindi Edition, Year-12, Oct. 2022- March 2023

स्त्री चेतना का पुरुषात्मक विमर्श

• नीरज चौबे

सारांश- भारतीय संकल्पना में अर्धनारीश्वर की अवधारणा को भी पर्याप्त स्थान मिला है। स्त्रीवादी दृष्टिकोण को व्यापक स्तर पर देखा जाए तो आलोचक स्त्री लेखन को पुरुष लेखन के बराबर चलने वाली प्रक्रिया मानते हैं, क्योंकि केवल स्त्रियों के लेखन को ही नहीं बल्कि उन पुरुषों को भी शामिल किया जा सकता है, जो स्त्रीवादी मानसिकता के साथ स्त्रियों के उत्पीड़न व शोषण और उनकी संभावनाओं के उचित समाधान से सरोकार रखते हैं। नारी चेतना के पुरुषवादी विमर्श में कुछ महिलाएं भी पुरुषवादी सोच रखती है, तो यह आश्चर्य की बात नहीं है। वास्तव में देखा जाए तो स्त्री विमर्श की प्रमुख लड़ाई पुरुषों से नहीं बल्कि पुरुषवादी सोच से हैं। पुरुषवादी विमर्श का दूसरा पहलू यह भी है कि परंपरा वादी स्त्री साहित्य पाठ अपनी व्यापकता में पुरुषों द्वारा रखते थे, उनमें सम्मिलित स्त्रियां सामान्यतः चले आ रहे हैं घिसे-पिटे तौर पर ही निरूपित होती थी। स्त्रीवादी साहित्य सिद्धांत कोई ऐसा एकीकृत साहित्य सिद्धांत नहीं है ना ही किसी स्त्रीवादी मार्क्स की भी उपस्थिति नहीं है, जो स्त्रीवाद को एक सिद्धांत के रूप में परिभाषित कर सके।

मुख्य शब्द- स्त्री चेतना, संकल्पना, मानसिकता, उत्पीड़न, शोषण

स्त्री लेखन की रूढ़ीगत का सोच अथवा शास्त्रीय सोच ही प्रस्तुत करने से पहले यह जान लेना आवश्यक है कि स्त्री विमर्श का साहित्य के केंद्र में एक ऐसा मुद्दा है जो महिला लेखन की आग को जलाए रखता है। स्त्री लेखन, सांस लेती हुई जीवित स्त्री की अस्मिता की तलाश है। यह कहना न्याय संगत नहीं होगा कि स्त्री मनोविज्ञान को केवल स्त्री ही समझ सकती है। प्रत्येक मानव शरीर में पुरुष व स्त्री के भाव होते हैं, इस मनोभाव की प्रतिशतता की मात्रा उस व्यक्ति के मानसिक क्षमता व परिवेश पर निर्भर करता है, यह विभिन्न अवधारणाओं ने स्पष्ट कर दिया है। यह कहना निरर्थक होगा कि पुरुष लेखक की कलम स्त्री मनोभाव को नहीं उकेर सकती क्योंकि स्त्री मनोभाव का सूक्ष्म विश्लेषण अनेक पुरुष लेखकों द्वारा किया जाना इस बात को सार्थकता प्रदान करता है। पुरुष और स्त्री को साहित्य में भिन्न-भिन्न तो माना गया है लेकिन इस भिन्नता को अलग से परिभाषित नहीं किया गया। स्त्री स्त्री शक्ति की सत्ता को तलाशते हुए अपनी संस्कृति, अपने इतिहास तथा जीवन परंपरा के साथ अलग धारा में बहती रही है, जहां स्त्री शक्ति की

• सहायक प्राध्यापक, भिलाई मैत्री कॉलेज, रिसाली, भिलाई

सत्ता पूरुष शक्ति की सत्ता के समक्ष आकार नहीं ले पाई है।

स्त्री देह के प्रति, भाव के प्रति, पुरुष की चेतना अधिपत्य की रही है क्योंकि पुरुषवादी सोच ने अपने विचार व अवधारणा को स्त्री पर लाद दिया है। यह स्त्री लेखन की विडंबना ही है कि स्त्री के स्वरूप का पुरुष लेखकों के द्वारा निर्धारण स्वयं किया गया। पितृसत्तात्मक समाज ने औरतों के लिए औरतपन का खांचा तैयार करके अपने अनुरूप औरत तैयार करने का प्रयास किया। समाज में स्त्रियों को केवल एक वस्तु व उपभोग का साधन ही समझा जाता है। सदियों से शोषित स्त्री अपने ऊपर हो रहे अत्याचार को निर्यात समझ कर तमाम परिस्थितियों के अनुकूल कर लिया। पुरुष सदियों से शोषक की भूमिका में रहते हुए हर परिस्थिति में अपने को अधिनायक ही समझता रहा है। स्त्री को समग्रता के साथ जानने समझने और बेहतर बनाने की हर संभव कोशिश स्त्री विमर्श का है। वस्तुतः स्त्री विमर्श का व्यापक अर्थ किसी निश्चित फ्रेमवर्क में स्त्री विषयक धारणाओं मान्यताओं के विषय में अपनी राय रखना है। स्त्री विमर्श का अर्थ है स्त्री को समग्रता के साथ समझने जानने और उसे बेहतर बनाने की हर संभव कोशिश है।

साहित्य के केंद्र में स्त्रीवाद और स्त्रीवादी लेखन का पक्ष व विपक्ष दोनों एक साथ चलते दिखाई पड़ते हैं। पुरुषात्मक परिप्रेक्ष्य में स्त्रीवादी विमर्श को उन्हें स्वतंत्रता पाने के लिए अपने आसपास के माहौल के साथ अपने घर में भी स्वतंत्रता पूर्ण माहौल बनाना पड़ेगा। कुछ स्त्रियों को यौनिक स्वतंत्रता तो प्राप्त है लेकिन ज्यादातर स्त्रियों का यौनिक स्वतंत्रता के नाम पर शोषण का शिकार होना पड़ता है। स्त्री विमर्श के बारे में पुरुष वर्ग की सोच का अगर आकलन करें तो हिंदी साहित्य में प्रेमचंद से लेकर जान स्टुअर्ट की पुस्तक "आन सब्जेक्शन ऑफ वूमेन" को ब्रिटेन में उदारवादी नारीवाद की श्रेष्ठ किताब माना गया है। पिछले दशक से स्त्री विमर्श, नारी जीवन तथा नारी मुक्ति के प्रश्नों को लेकर साहित्य के केंद्र में रहा है। स्त्री अत्याचार, अन्याय, स्त्री शोषण को साहित्य में अभिव्यक्ति मिली। स्त्री के अलग अलग रूपों का हिंदी साहित्य के इतिहास में स्थान मिला। स्त्री को केंद्र में रखकर भारतेंदु युग से लेकर आधुनिक कालीन साहित्यकारों ने अपनी रचनाओं का सृजन किया जिसमें स्त्री के यथार्थ जीवन व स्त्री समस्याओं को केंद्र में रखकर रचनाएं की गई। पुरुष साहित्यकारों ने साहित्य के माध्यम से स्त्री की समस्याओं को चित्रित करते हुए समस्याओं का समाधान करने का भी प्रयास किया साथ ही नारी को सुदृढ़ करने तथा स्त्री मुक्ति के पुरजोर प्रयास भी किए गए। इन महिला उपन्यासकारों के साथ पुरुष उपन्यासकारों का भी महत्वपूर्ण योगदान है। नारी जागृति के विभिन्न काल खंडो में नारी को जागृत करने के प्रयास करते हुए, स्त्री को सब के प्रति जागृत करके समाज की नारी विषयक धारणा को बदलने का प्रयास किया गया। ब्रिटिश काल में पाश्चात्य विचारों के प्रभाव तथा अंग्रेजी शिक्षा के प्रसार से महिलाओं में जागृति लाने का प्रयास किया गया। जिसकी वजह से स्त्री की स्थिति में व्यापक बदलाव आने लगे। सामाजिक बुराइयों को नष्ट करके 19वीं शताब्दी में सामाजिक सुधार का प्रमुख केंद्र स्त्री को बनाया गया। "फेमिनिज्म शब्द का सर्वप्रथम प्रयोग 25 अप्रैल 1895 को अन्तेन्वय नामक पत्रिका में हुआ था, जिसका अर्थ है अपनी स्वायत्ता को स्थापित करने वाली। इसमें संदेह बिल्कुल नहीं होना चाहिए कि स्त्री पुरुष समता वाले मानवीय दर्शन से प्रेरित

होकर नारीवाद का आरम्भ हुआ था जो स्वतंत्रता संघर्षहीन पारिवारिक एवम् सामाजिक जीवन व्यवस्था की कामनाओं को पालता है। पितृसत्तात्मक व्यवस्था और उसकी परिपोषक सामाजिक व्यवस्था से हाथ छुड़ाने के लिए स्त्री जाति मजबूर हो रही थी। इसी कारण पुरे संसार के समाजो में स्त्री पक्षीय आशयों का पुरजोर स्वागत हुआ। जाति मजबूर हो रही थी। इसमें स्त्री के व्यक्तिगत, अस्तित्व एवम् समस्याओं पर विशेष तरह से सोच विचार होने लगा। स्वाभाविक रूप से पितृसत्तात्मक समाज एव वर्चस्ववादी संस्कृति के परम्परागत रवैयों पर प्रश्न चिन्ह लगाए गए थे। पुरूषाधिपत्य से नियंत्रित समाज को पूर्णतया बदलने के लिए कार्यरत आंदोलन के रूप में स्त्रीवाद को राजनैतिक महत्व मिलने लगा। परवर्ती समय में नारीवादी की चर्चा में लिंग या लिंगस्तर, दैहिक राजनीति, यौनता आदि से लेकर वर्ग, वर्ण, भाषा देश प्रदेश जैसे विषयों को भी मिला दिया गया। ई. पोर्टर ने अपनी किताब "विमन एण्ड मॉरल आइडेंटिटी (1991) में नारीवाद को यौन अस्मिता के कारण स्त्रियों के साथ होने वाली समस्त प्रकार की उपेक्षा, उत्पीड़न असमानता और अन्याय से मुक्ति का रास्ता खोजने का वैचारिक दर्शन बताया।"[1] स्त्री विमर्श के बारे में पुरुषवादी लेखन की कड़ी में अगर पुरुष आलोचकों की बात करें तो आलोचक पुरुष लेखन के साथ साथ चलने वाली प्रक्रिया स्त्री लेखन को मानते हैं। पंकज बिष्ट लिखते हैं कि "लेखन के संदर्भ में नारी पुरुष के भेद को बनाए रखने की ऐसी साजिश के रूप में देखी जानी चाहिए जो नारी के वास्तविक सरोकारों और पीड़ाओं की अभिव्यक्ति में बाईपास का काम करेगी।"[2]

स्त्रीवादी लेखिकाओं का मानना है कि स्त्रियों के दर्द का यथार्थ परक पीड़ा को केवल स्त्री ही समझ सकती है क्योंकि वह खुद भुक्तभोगी होती है। स्त्री लेखन जब अपने खुद के अनुभवों की अभिव्यक्ति की बात करता है तब स्त्री रचनाकार को रचना की नायिका के साथ जोड़कर पाठक को देखना आसान हो जाता है। "फेक्टस और फिक्शन का भेद मिट जाता है स्त्री जब लिखती है तब अपने निजी जीवन और निजता को दॉव पर लगा रही होती है। अपने घर परिवार और समाज का भय और प्रतिक्रिया का डर अवचेतन रूप से उसकी कलम को संचालित कर सेल्फ सेंसर का काम करता है।"[3] यह मानना है कि स्त्री जब स्त्री के बारे में लिखती है तो अपने लिए अस्मिता, स्वतंत्रता, समान अवसरों और अधिकारों की बात करती है। यह कहना बिल्कुल गलत नहीं होगा कि आंतरिक व बाह्य जगत के अनुभवों को दुःसाहस के साथ लिखने वाली ना केवल भारतीय बल्कि समूचे विश्व साहित्य में महान लेखिकाओं का त्रासद जीवन शोध का विषय है।

इस प्रकार देखा जाए तो भारतीय संकल्पना में अर्धनारीश्वर की अवधारणा को भी पर्याप्त स्थान मिला है। स्त्रीवादी दृष्टिकोण को व्यापक स्तर पर देखा जाए तो आलोचक स्त्री लेखन को पुरुष लेखन के बराबर चलने वाली प्रक्रिया मानते हैं, क्योंकि केवल स्त्रियों के लेखन को ही नहीं बल्कि उन पुरुषों को भी शामिल किया जा सकता है, जो स्त्रीवादी मानसिकता के साथ स्त्रियों के उत्पीड़न व शोषण और उनकी संभावनाओं के उचित समाधान से सरोकार रखते हैं। नारी चेतना के पुरुषवादी विमर्श में कुछ महिलाएं भी पुरुषवादी सोच रखती है, तो यह आश्चर्य की बात नहीं है। वास्तव में देखा जाए तो स्त्री विमर्श की प्रमुख लड़ाई पुरुषों से नहीं बल्कि पुरुषवादी सोच से हैं। पुरुषवादी विमर्श का

दूसरा पहलू यह भी है कि परंपरा वादी स्त्री साहित्य पाठ अपनी व्यापकता में पुरुषों द्वारा रखते थे, उनमें सम्मिलित स्त्रियां सामान्यत: चले आ रहे हैं घिसे-पिटे तौर पर ही निरूपित होती थी। स्त्रीवादी साहित्य सिद्धांत कोई ऐसा एकीकृत साहित्य सिद्धांत नहीं है ना ही किसी स्त्रीवादी मार्क्स की भी उपस्थिति नहीं है, जो स्त्रीवाद को एक सिद्धांत के रूप में परिभाषित कर सके।

संदर्भ ग्रन्थ सूची-

1. के.पी.प्रमिला, स्त्री अध्ययन की बुनियाद, नई दिल्ली, राजकमल प्रकाशन, प्रथम संस्करण, 2015, पृष्ठ- 13
2. यादव राजेन्द्र संपादक, हंस, नई दिल्ली, अक्षर प्रकाशन, जनवरी 1999, पंकज विष्ट (सम्पादकीय से) पृष्ठ-31
3. कस्तवार रेखा, स्त्री चिंतन की चुनौतियां, नई दिल्ली, राजकमल प्रकाशन, प्रथम संस्करण : 2013, पृष्ठ-कवर पेज

UGC Journal No. (Old) 2138
Peer-Reviewed Research Journal
Impact Factor 4.875, ISSN 0975-4083
Vol.- 24, Hindi Edition, Year-12, Oct. 2022- March 2023

प्राचीन भारत में मुद्राओं पर प्रतीक चिन्ह एक अध्ययन

• प्रीतम कुमार

सारांश- **भारतीय इतिहास के खण्ड काल में प्राचीन भारत का इतिहास स्वर्णिम रहा है। भारत का भव्य महल प्राचीन भारत के नीवं पर ही बना है। भारत के गौरवशाली अतीत् के वर्णन हेतु साहित्यिक एवं पुरातात्विक साक्ष्यों की आवश्यकता पड़ती रही है। पुरातात्विक धरोहरों में मुद्राओं का विशिष्ठ स्थान है। प्राचीन भारत के सामाजिक, सांस्कृतिक एवं धार्मिक एवं राजनीतिक विरासत को समझने में उत्खनन से प्राप्त मुद्रायें तथा उस पर बने प्रतीक चिन्ह महत्वपूर्ण माध्यम रहे है। मुद्रायें आकार-प्रकार में छोटे-छोटे होने के बावजूद क्रमबद्ध सूचनायें तो प्रस्तुत करती ही है प्रशासन से लेकर जीवन के विविध पक्ष को उजागर करती है। मुद्राओं पर अंकित विविध प्रतीत तथा देवाकंन तत्कालीन समाज की सामाजिक व धार्मिक मान्यताओं का मूर्त रूप है। प्राचीन भारत के गौरवशाली अतीत के प्रकटीकरण में मुद्राओं तथा उस पर अंकित प्रतीक चिन्ह दृष्टान्त तथा अन्वेषण का प्रमाण है। प्राचीन कला अवशेषों की अमूल्य निधि संजोये भारत की कलात्मक दृष्टि अत्यन्त विस्तृत रही है। मूर्तिकला, स्थापत्य कला, चित्रकला के साथ-साथ प्राचीन गह्वा चित्रों, मिट्टी के बर्तनों, पत्थर काँसे की मूर्तियाँ तो इनके उदाहरण तो रहे ही है। मुद्राओं, पर आत्म विभोर करने वाली चित्रकारी अविस्मरणीय रही है।**

मुख्य शब्द - मुद्रा, प्रतीक चिन्ह, इतिहास, गौरवशाली

भारतीय कला के क्षेत्र में उत्खनन में विभिन्न स्थानों से प्राप्त प्रचलित मुद्राओं का महत्वपूर्ण स्थान है। इनका भारतीय इतिहास को स्थापित करने तथा भारतीय संस्कृति को गरिमामयी बनाने में महती भूमिका रही है। मुद्रायें निर्जीव होते हुए भी हमें अतीत् का सजीव दर्पण दिखाती है तथा अपने समय की सभ्यता, संस्कृति और कला की जानकारी देती हैं। प्राचीनतम काल में जब विनिमय की प्रक्रिया वस्तुओं के माध्यम से होती थी तो जीवन बड़ा जटिल होता था, लेकिन जब मनुष्य के जीवन में मुद्रा का पदार्पण हुआ तो जीवन में सरलता आयी तभी से मुद्रा की महत्ता परिलक्षित होती है। उत्खनन में प्राप्त मुद्रायें प्राचीन भारत के राजाओं, राजवंशों, निगमों एवं वर्णिक समुदाय के विषय में जानकारी तो देते ही हैं, उन पर अंकित चिन्हो, प्रतीकों, पशुओं, प्राकृतिक वस्तुओं, वाहनों, देवी-देवताओं, अलंकरणों आदि से अनेक विषयों का परिज्ञान होता है। प्राचीन

• **शोध छात्र, प्राचीन भारतीय इतिहास संस्कृति एवं पुरातत्व विभाग अवधेश प्रताप सिंह विश्वविद्यालय, रीवा, मध्य प्रदेश**

काल से ही भारत एक धर्मपरायण देश रहा है, जिसका दृष्टिगोचर कला संस्कृति के रूप में भी दिखता है। यही कारण है कि उत्खनन से प्राप्त मुद्राओं पर मुख्यतः धार्मिक विषयवस्तु से सम्बन्धित प्रतीकों तथा अराध्य देवों की अभिव्यक्ति को अंकित किया गया है। मुद्राओं पर कलात्मक प्रतीक चिन्ह का प्रारम्भ आहत सिक्कों से माना जाता है, इन पर विभिन्न कलाकृतियों के ठप्पों से प्रतीक उत्पादित किये जाते थे, जो बाद में कला का रूप ले चुकी थी। हिन्द यवन मुद्राओं के साथ ही देवांकनों का प्रचलन प्रारम्भ हुआ। इसमें आगाथाक्लीज् की मुद्रायें मुख्य है जिन पर कृष्ण और बलराम का अंकन प्रमुख है। आहत मुद्राओं पर सूर्य, चन्द्र, वृक्ष, नदी, स्वस्तिक का चिन्ह, चैत्य, चक्र, अश्व, वृषभ, मांगलिक चिन्ह इत्यादि का अंकन धार्मिक प्रवृत्ति का परिचायक तो है ही साथ ही परोक्ष रूप से सामान्य जन में प्रचलित लोकधर्मो एवं प्रकृति के प्रति आस्था का सूचक है। प्राचीन भारतीय मुद्राओं पर अंकित प्रतीकों की संख्या मात्र आहत मुद्राओं पर 200से अधिक है। उत्खनन के प्राप्त पुरास्थलों हस्तिनापुर, अहिच्छत, अंतरजीखेड़ा, मथुरा सोख तथा कौसाम्बी से प्राप्त आहत मुद्राओं के प्रतीकों में सूर्य एवं चक्र सर्वाधिक महत्वपूर्ण है। चक्र के रूप में सूर्य की पूजा की पुष्टि ब्राह्ण साहित्य से होती है। अश्व का अंकन मिलता है जिसे सूर्य का वाहन माना गया है। अश्व का अंकन राजवंशों की प्रतिष्ठा का भी सूचक है। इसका अंकन मौर्यकालीन आहत सिक्कों से शुरू होकर मौर्योत्तर कालीन जनपदीय आरै राजतंत्रीय सिक्कों पर भी मिलता है, प्रमुख रूप से पद्मावती के नाग सातवाहन के गौतमीपुत्र शातकर्णी व गुप्त सिक्कों पर यह अंकित है। आहत सिक्कों पर वेदिकायुक्त वृक्ष का चिन्ह भी धार्मिक रूप से महत्वपूर्ण है, जिसका अंकन हस्तिनापुर, अहिच्छन्न, कौशाम्बी शोख इत्यादि से प्राप्त मुद्राओं पर है। वृषभ भी आहत सिक्कों पर कई रूपों में प्राप्त हुआ है। वृषभ बल और पोरुष का प्रतीक माना जाता है। अथर्ववेद में देवराज इन्द्र को वृषभ कहा गया है। वैदिकोत्तर काल में वृषभ को शिव के वाहन के रूप में प्रस्तुत किया गया है, जिसका अंकन आहत सिक्कों के अलावा अयोध्या, कौशाम्बी, अर्जनुशयन, यौधेय के सिक्के पर विदेशी राजवंशों में हिन्द, यवन, शक, कुषाण शासकों के कुछ सिक्कों पर दक्षिण भारत के सातवाहन पश्चिमी क्षतपों व पद्मावती के नाग वंशो, गुप्त शासकों में स्कन्दगुप्त के सिक्कों पर वामाभिमुख आरै दक्षिणाभिमुख प्राप्त होता है। कच्छप धर्म में गज दिशा का प्रतीक माना गया है, साथ ही वह चिन्ह् ऐश्वर्य का भी प्रतीक है जिसका सम्बन्ध लक्ष्मी से जोड़ा गया है। इसका भी अंकन आहत मुद्रा पर देखने को मिला। मेरु का प्रमुखता से अंकन मगध साम्राज्य के मुद्राओं पर हुआ है। परमेश्वरी लाल गुप्त का मानना है कि अर्द्धचन्द्रयुक्त त्रिमेरु के साथ 'मयूर का अंकन' जो आहत सिक्कों पर प्राप्त होता है, उसका सम्बन्ध मौर्य साम्राज्य से है। ताम्र ढलित मुद्राओं पर भी आहत मुद्राओं के समान ही अंकन मिलते हैं।

ताम्र मुद्राओं पर वृक्ष की टहनियों के साथ वेदिका में वृक्ष का अंकन मिलते है। साथ ही चक्र-वेदिकायुक्त वृक्ष, वृषभ, हस्ति, नंदीपद तथा स्वास्तिक आदि के चिन्ह भी प्राप्त हए है।

स्वस्तिक प्रतीक का अंकन "कौशाम्बी के ज्येष्ठ मित्र" की मुद्राओं पर प्राप्त है। मुद्राओं पर सूर्य का अंकन अहिछत के पांचाल शासकों तथा सूर्य मित्र और भानुमित्र

की मुद्राओं पर पीठिका के ऊपर वृक्ष के रूप में सूर्य अंकित है जिसके चारों और किरणें प्रस्फुटित हो रही हैं। चक्र का अंकन कौशाम्बी के मद्य शासकों की मुद्राओं पर अंकित है। कुषाण काल के सिक्कों पर भगवान शिव व बुद्ध का अंकन मिलता है। सर्वप्रथम गजलक्ष्मी का अंकन कौशाम्बी के लेख रहित ढलुआ सिक्कों पर दो हस्तियों के बीच कमल पर हुआ है तथा कुमार गुप्त के धर्नुधारी अप्रतिघ सिक्कों पर 'लक्ष्मी' का अंकन है।

उज्जनैनी के सिक्कों पर शिव के जटाधारी रूप जिसमें उसके पास दण्ड आरै कमण्डल है का अंकन है। कुषाण शासक विम कडफिसेस के सिक्कों पर शिव, त्रिशूल, नन्दी का अंकन व खरोष्ठी लेख महेश्वर प्राप्त हआु है। प्राचीन भारत की संस्कृति आरै सभ्यता में गज का महत्व जैन, बौद्ध और ब्राह्ण तीनो धर्मो में समान रूप से दिखता है, यही कारण है कि भारतीय तथा विदेशी शासकों के सिक्कों पर हस्ती का अंकन दिखता है। यवन शासकों में अपोलोडोटस, एण्टीमेकस, थियासे हेलियोक्लीज, लीसिमस आदि के सिक्कों के पृष्ठ भाग पर हस्त का अंकन हुआ है। हुविष्क के सिक्कों पर गज को हुविष्क के वाहन के रूप में दिखाया गया है। गुप्त कालीन कुमार गुप्त के सिक्कों पर हस्ति का अंकन उनके राजकीय वैभव का प्रतीक लगता है। सिक्कों पर सिंह का अंकन है हमें आहत मुद्राओं पर देखने को मिलता है। यवन राजाओं में पेण्टालियान के सिक्कों के पृष्ठ भाग पर सिंह का अंकन किया गया है। गुप्त शासक राम गुप्त के विदिशा और एरण से प्राप्त कुछ सिक्कों पर पूंछ उठाये सिंह का अंकन मिलता है, सिंह माँ दुर्गा का वाहन है जो दुर्गा का प्रतीक है, सम्भवतः इसी कारण से मुद्राओं पर अंकन किया गया होगा।

ढलुओं व टप्पों से निर्मित मुद्राओं पर वृषभ का अंकन किया गया है। जिसकी प्राप्ति अयोध्या के विशाखदेव, धनदेव, शिवदत्त, आर्य मित्र, अभिमित्र के शासन काल की मुद्राओं पर मिलता है। यही नहीं ईसा पूर्व छठी शताब्दी से लेकर पांचवीं शताब्दी ई. तक देशी विदेशी राजाओं के सिक्कों पर वृषभ का अंकन विविध रूपों में होता रहा है।

भारतीय लोक धर्म में जल, नदी, तालाब आदि का बहुत महत्व माना गया है, जिसका स्पष्ट छाप मुद्रा अंकन में भी देखने को मिलता है। तक्षशिला से प्राप्त मुद्राओं पर स्तम्भ के ऊपर मत्स्य का अंकन मिलता है। आन्ध्र में सातवाहन की मुद्राओं पर दो लकीरों के बीच मत्स्य का अंकन किया गया है। अयोध्या से प्राप्त कुणिन्द शासक की मुद्राओं पर मृग और लक्ष्मी का अंकन है। गुप्तकालीन मुद्राओं पर गरूड़ का अंकन देखने को मिलता है। मुद्राओं पर स्वास्तिक का अंकन विविध अलंकृत रूपों में हुआ है। स्वास्तिक को चतुष्पाद ब्रह्म का प्रतीक भी कहा गया है। प्राचीन काल में स्वास्तिक लक्ष्मी का प्रतीक था। गौतमी पुत्र शतकर्णी के सिक्कों के अग्रभाग पर चैत्य के अंकन के साथ रणो गौतमी लेख अंकित है, जबकि पृष्ठ भाग पर उज्जनै चिन्ह का अंकन है। पहल्लव शासक गोण्डो फर्जीज के सिक्कों के अग्र भाग पर यूनानी लिपि में बेसिलिआसे गगोलाऊ इण्डोफराऊ लेख अंकित है। चन्द्रगुप्त प्रथम ने राजरानी प्रकार के सवर्ण सिक्के जारी किये यह सिक्का मथरुा, लखनऊ, बनारस व बयाना से प्राप्त है। इन सिक्कों के अग्रभाग पर ब्राह्मी लिपि में चन्द्रगुप्त श्रीकुमार देवी अंकित है, पृष्ठ भाग पर नाल युक्त कमल लिये वाहिनी देवी के चिन्हांकन के साथ लिच्छैवयः लेख अंकित है। समुद्रगुप्त

द्वारा जारी वीणाधारी सिक्के के अगभ्राग पर राजा के चित्रांकन के साथ ब्राह्मी में महाराजाधिराज ही समुद्रगुप्त लेखांकित है तथा पृष्ठ भाग पर हाथ में केनकोपिया लिये देवी के चित्रांकन के साथ समुद्रगुप्त का लेखांकन है।

स्पष्टत: कहा जा सकता है कि प्राचीन भारत के उत्खनन से प्राप्त मुद्राओं पर विभिन्न प्रतीक चिन्ह व लेखों की संख्यात्मक एवं व्याख्यातमक चरित्रता के सम्बन्ध में यह अन्वेषण तत्कालीन दर्शन और परिदृश्य को ध्यान में रखकर किया गया होगा। मुद्राओं पर विभिन्न प्रतीक चिन्ह चक्र, वैदिकायुक्त वृक्ष, वृषभ हस्ति, नंदीपद, स्वस्तिक तथा देवी-देवताओं एवं राजा तथा राजवंशों का अंकन का उद्देश्य प्राचीन भारतीय संस्कृति, सभ्यता तथा व्यवस्था एवं प्रमाणों का प्रकटीकरण रहा होगा।

संदर्भ ग्रन्थ सूची-

1- अग्रवाल वासुदेव शरण, भारतीय कला, पृथ्वी प्रकाशन
2- चट्टापोध्याय, बी. 1906 क्वान्स एण्ड आईकान्स : ए स्टडी ऑफ माइथस एण्ड सिम्बल्स इन इण्डियन न्यूमिस्मेटिक आर्ट, पृ. 196
3- गुप्त, पी.एल. 2003, भारत के पूर्वकालिक सिक्के, विश्वविद्यालय प्रकाशन, वाराणसी, पृ. 256
4- शर्मा, सविता, 1990, अर्ली इण्डियन सिक्वल्स : न्यूमिसमेटिक्स ऐविडेन्सेस अगम कला प्रकाशन, दिल्ली, पृ. 12
5- राम गोविन्द्र चन्द्र, प्राचीन भारत में लक्ष्मी की प्रतिमा पृ. 22
6- स्मिथ, क्वाइन्स ऑफ इन्शिएण्ट इण्डिया, पृ. 38-39
7- भास्कर चट्टापोध्याय, क्वाइन्स एण्ड आइकन्स, पृ. 40
8- अजीत राय जादा, भारतीय सिक्कों का इतिहास, पृ. 109
9- ए.एस. अल्तेकर, गुप्त कालीन मुद्रायें, पृ. 1
10- अनूप कुमार, प्राचीन भारतीय मुद्राशास्त्रीयण इतिहास में देशी एवं विदेशी तत्व, पृ. 59

UGC Journal No. (Old) 2138
Peer-Reviewed Research Journal
Impact Factor 4.875, ISSN 0975-4083
Vol.- 24, Hindi Edition, Year-12, Oct. 2022- March 2023

आयोनिक मत में परम तत्व

• सत्यनारायण

सारांश- पाश्चात्य दर्शन के ग्रीक दर्शन में सबसे पहला दार्शनिक मत आयोनिक मत है। इसे माइलेटस सम्प्रदाय भी कहा जाता है। क्योंकि इस प्राचीनतम सम्प्रदाय की स्थापना माइलेटस में हुई थी और इसके सभी दार्शनिक आयोनिया एशिया माइनर के निवासी थे। इसी कारण इसे आयोनिक मत कहा जाता है। इस मत के प्रमुख विचारक थेलीज, एनेग्जीमेण्डर और एग्जीमेनीज थे। इन दार्शनिकों का चिन्तन शुद्ध दार्शनिक अथवा वैज्ञानिक नहीं था क्योंकि प्रारम्भिक काल में उनके समक्ष तो यह स्पष्ट ही नहीं था कि दर्शन और विज्ञान मे क्या भेद था। परन्तु ऐतिहासिक दार्शनिक दृष्टि से इस मत का अत्याधिक महत्व है। क्योंकि इनके चिन्तन के बिना दार्शनिक चिन्तन आगे नहीं बढ़ सकता था। इन्हीं दार्शनिकों ने पाश्चात्य दर्शन के इतिहास मे सर्वप्रथम इस प्रश्न पर विचार किया कि वह कौन-सा आधारभूत परम-तत्व है जिससे सम्पूर्ण ब्रह्मण्ड की वस्तुऐं बनी हैं। इन दार्शनिकों ने अपने-अपने ढंग से इस प्रश्न को हल करने का प्रयास भी किया। जैसे थेलिज ने जल को परम तत्व माना है। एनेग्जीमेण्डर के अनुसार वह परम तत्व असीम-निर्विशेष है और एनेग्जीमेनीज उसे वायु कहते हैं। इनके परम तत्व को पूर्ण तो नही माना जा सकता कि उसी से जगत् की सभी वस्तुएं बनी हैं। परन्तु उनका महत्व इतना ही है कि इन्होंने पौराणिक परम्पराओं से हट कर एक जागरूक-बौद्धिक व्यक्ति की भांति स्वतन्त्र चिन्तन करने का प्रयास किया।

मुख्य शब्द- दर्शन, विज्ञान, परम-तत्व, व्यक्ति

विश्व में अति प्राचीनतम सभ्यता एवं संस्कृति भारत, चीन तथा ग्रीस की ही स्वीकार की गई है। इसलिए यह ऐतिहासिक साक्ष्य है कि उक्त देशों में मौलिक एवं स्वतन्त्र विचारकों का कभी अभाव नहीं रहा। जिस प्रकार प्राचीन सभ्यता एवं संस्कृति को जन्म देने का श्रेय भारत को प्राप्त है उसी प्रकार पाश्चात्य दर्शन तथा धर्म के सूत्रपात का श्रेय ग्रीस को जाता है।

आयोनिक मत पाश्चात्य के ग्रीक दर्शन का प्राचीनतम मत है। इस मत को माइलेशियन मत भी कहते हैं। क्योंकि इस मत की स्थापना 624 ई.पू. ग्रीस उपनिवेश में हुई और इसके सभी दार्शनिक आयोनिया-एशिया माइनर के निवासी थे। इस मत के तीन दार्शनिक हैं, थेलीज, एनेग्जीमेण्डर और एग्जीमेनीज।[1] इन्होंने बाह्र जगत के परम तत्व की

• एसोसियट प्रोफेसर, राजकीय स्नातकोत्तर कन्या महाविद्यालय, पंचकुला

व्याख्या करने का प्रयास किया था। इनके अनुसार परम तत्व मूर्त था, जिससे जगत की समस्त वस्तुऐं बनी हैं। इसका यह है कि पाश्चात्य दर्शन के इतिहास में सर्वप्रथम इन दार्शनिकों मे ही इस प्रश्न पर विचार किया कि वह कौन-सा परम तत्व है जिससे जगत की समस्त वस्तुएं बनी हैं।

थेलीज की जन्म-तिथि के बारे में निश्चित ज्ञात नही है। परन्तु यह माना जाता है कि ने वे हेब्रू सन्त जेरेमिया के समकालीन थे जिन्होंने जेरुसमल के पतन की भविष्यवाणी की थी जो उन्हीं के सामने 586 ई. पू. में सिद्ध हुई थी।[2]

परम तत्व के बारे में थेलीज ने कहा है कि जल ही विश्व का परम तत्व है। विश्व के सभी पदार्थ जल का ही रुपान्तर है। जल ही वाष्प बनकर सबको जीवन प्रदान करता है। पृथ्वी भी जल पर तश्तरी के समान तैरती है। जल से ही सृष्टि की उत्पत्ति, स्थिति और प्रलय होती है। इसलिए जल ही विश्व का उपादान कारण है।[3] अतः उसास अरस्तू के उद्धरण से ज्ञात होता है कि थेलीज ने सभी वस्तुओं का उपादान कारण जल को स्वीकार किया था।

थेलीज द्वारा जल को परम तत्व मान लेने में काई तात्त्विक विचार को कोई विशेष गहनता प्रतीत नहीं होती है। परन्तु थेलीज का सबसे बड़ा महत्व यह है कि उन्होंने सबसे पहले दार्शनिक प्रश्न को विशुद्ध बौद्धिक रूप में उठाया। अर्थात् वह कौन-सा परम तत्व है जिससे बाह्य जगत् की सभी बस्तुऐं बनी हुई हैं। यही वह प्रश्न है जिसके आधार पर थेलीज को प्रथम दार्शनिक अथवा वैज्ञानिक होने का श्रेय दिया जाता है।[4] ऐसा लगता है कि थेलीज के चिन्तन का वैशिष्ट्य, जिसके लिए उसको विशेष रूप से श्रेय दिया जाता है, इस बात में निहित है कि उन्होंने अपने द्वारा उठाए गए प्रश्न का उत्तर अनुभव तथा तर्क से निर्मित युक्ति-सम्मत तरीके के देने का प्रयास किया है, भले ही वह तरीका कितना ही अनगढ़ क्यों बन रहा हो।

पाश्चात्य दर्शन के दार्शनिक इतिहास प्रथम दार्शनिक थेलीज ने जिस दार्शनिक विचारधारा का प्रतिपादन किया उसे विकसित रूप से श्रेय एनेग्जीमेण्डर को जाता है। एनेग्जीमेण्डर अपने गुरू थेलीज के समान ही प्रतिभा सम्पन्न व्यक्ति थे। उनकी जन्म-तिथि के विषय में भी लोगो में मतभेद है। फिर भी जो कुछ तथ्य उपलब्ध हैं उनके आधार पर वे 611 ई.पू. में पैदा हुए थे।

यूरोप के दार्शनिक साहित्य में एनेग्जीमेण्डर द्वारा प्रकृति पर लिखा 'ऑन नेचर' निबंध, प्रथम कृति माना जाता है। दुर्भाग्यवश इस निबन्ध के कुछ ही अंश प्राप्त है। साथ ही यह भी माना जाता है कि इन्होंने ही सर्वप्रथम मानचित्र का निर्माण किया था, जिसका व्यवहार माईलेशियन लोग काला सागर में भ्रमण करते समय किया करते थे।[5]

एनेग्जीमेण्डर की जिज्ञासा भी जगत के परम तत्व की खोज थी। उनका दृष्टिकोण थेलीज से भिन्न था। वे किसी भौतिक तत्व को जगत का मूल तत्व नहीं मानते। क्योंकि ये तत्व परस्पर-विरोधी होते हैं। जैसे- अग्नि में उष्णता, जल में आर्द्रता और हवा में शीतलता। इन तत्वों में से किसी को भी परम तत्व स्वीकार नहीं किया जा सकता। क्योंकि ये परस्पर विरोधी तत्व आपस में संघर्षरत हैं। अब प्रश्न यह है कि इन परस्पर विरोधी तत्वों का मूल क्या है । जिससे जगत की उत्पत्ति होती है। किसी एक तत्व को

मानने से परस्पर विरोधी तत्वों वाले जगत् की उत्पत्ति सम्भव नहीं। अर्थात् परस्पर संघर्षरत अग्नि, वायु और जल पृथ्वी के विरुद्ध युग्मों में से कोई भी जगत का मूल तत्व नहीं हैं। अतः जिस तत्व से जगत की सृष्टि हुई है वह इन तत्वों से अधिक मूलभूत होना चाहिए और इन्हें उत्पन्न करने में समर्थ भी होना चाहिए। एनेग्जीमेण्डर के अनुसार वह तत्व असीम-निर्विशेष है। अरस्तू के शब्दों में वह परम तत्व नित्य, अविनाशी, अज, कालातीत, सर्वव्यापी और सर्वनियन्त्रक दैवी-शक्ति है।

वह मिश्रित तत्वों और गुणों की एक अविभक्त और अनन्त शक्ति है जो आकाश के प्रतीक छोर पर अनन्त रूप से फैली हुई है और जगत् को आवृत किए है। इसी में सभी विरुद्धयुग्म समाहित हैं।[6] यही जगत का आधार है। यही अक्षय भण्डार हैं जिससे समस्त संभूति की उत्पत्ति होती है। इसी से युगपद असंख्य विश्वों की सृष्टि होती है और इसी में युगपद असंख्या विश्व विलिन हो रहे हैं।

एनेग्जीमेण्डर के विषय में हमें जो भी जानकारी है वह सुप्रसिद्ध डॉक्सोग्राफर थियाफ्रेस्टस से मिली हैं। क्योंकि उसने एनेग्जीमेण्डर के ही शब्दों का ठीक इसी प्रकार उद्धरण पेश किया था। थियाफ्रेस्टस ने लिखा कि ''एनेग्जीमेण्डर ने कहा था कि 'असीम' सभी वस्तुओं का मूल और उपादान कारण है। वह प्रथम व्यक्ति था जिसने 'उपादान कारण' यह नाम प्रचलित किया। वह कहता है कि मूल कारण न तो जल है और न दूसरे कोई यथाकथित तत्व है, बल्कि ऐसा तत्व है जो उन सबसे भिन्न है, जो अनन्त है और जिससे सभी ग्रह, नक्षत्र, पिण्ड तथा उनके अन्दर के संसार उत्पन्न होते हैं वे आगे कहते हैं कि यह ''शाश्वत एवं कालातीत'' और ''सम्पूर्ण जगत् को परिवलमित किए हैं'' और जिससे समस्त वस्तुओं की उत्पत्ति होती है और फिर वे विलिन हो जाती हैं, जैसा कि कालक्रम के अनुसार यह उचित भी है।

थियोफ्रेस्टस के उक्त उद्धरण से ज्ञात होता है कि एक ऐसा शाश्वत और अविनाशी तत्व है जिससे सम्पूर्ण सृष्टि की उत्पत्ति होती है और फिर उसी में सृष्टि का विलय होता है। वह शाश्वत तत्व निर्विशेष होना चाहिए। प्रश्न उठता है कि उस असीम और निर्विशेष तत्व से जगत की उत्पत्ति कैसे होती है। एनेग्जीमेण्डर के अनुसार वह तत्व स्वयं नित्य गति से युक्त है। उसी के स्पन्दन से उसमें व्याप्त विरुद्ध युग्म पृथक हो जाते हैं और उस पृथक्करण की प्रक्रिया के फलस्वरूप जगत की उत्पत्ति होती है।[7]

एनेग्जीमेण्डर का परम तत्व भौतिक तत्व है अथवा कोई दैवीय इस पर अरस्तु मानते हैं कि एनेग्जीमेण्डर का परम तत्व एक भौतिक तत्व है। यही नहीं बल्कि अरस्तू को उसमें अपने विशुद्ध तत्व[8] के दर्शन होते हैं। किन्तु सी. एल. त्रिपाठी बताते हैं कि तत्व और आकार का भेद उस युग में नहीं था। अतः उनका परम तत्व सभी वस्तुओं में व्याप्त है।[9] इसी प्रकार एनेग्जीमेण्डर के 'असीम' से असंख्य संसारों की उत्पत्ति के विषय में भी विद्वानों में मतभेद है। इस सम्बन्ध मे जेलर यह मानते हैं कि एनेग्जीमेण्डर असंख्य संसारों के क्रमिक अस्तित्व में विश्वास रखते थे।[10] परन्तु बर्नेट जेलर के मत से सहमत नहीं हैं। उनके अनुसार ऐनेग्जीमेण्डर एक साथ कई संसारों के अस्तित्व में विश्वास करते थे।[11] अतः यह मान लिया जाए तो कह सकते हैं कि एनेग्जीमेण्डर के अनुसार संसार परिवर्तनशील अवश्य ही होगा।

एनेग्जीमेण्डर का मत निश्चित रूप से थैलीज के मत से उत्कृष्ट है। क्योंकि थेलीज का मूल तत्व एक विशिष्ट पदार्थ है और एनेग्जीमेण्डर एक परम तत्व को असीम और निर्विशेष मानते हैं। जिससे कि एनेग्जीमेण्डर का दार्शनिक चिन्तन स्थूल से सूक्ष्म की ओर आगे बढ़ता है। जबकि थेलीज ने इस समस्या को छुआ भी नहीं कि मूल तत्व से जगत् किस प्रकार उत्पन्न हुआ। ऐनेग्जीमेण्डर ने परम तत्व से जगत, ब्रह्मण्ड और जीव सभी की उत्पत्ति दिखाने का प्रयास किया है। इन्होंने मूल तत्व को सनातन और शाश्वत माना है। इनके चिन्तन में सबसे पहले अमूर्तकरण की प्रवृति दिखलाई पड़ती है। जैसे कि जेलर के मत से भी जान पड़ता है कि एनेग्जीमेण्डर के असीम तत्व को उद्देश्य नही बल्कि विधेय माना जाना चाहिए। वह अमूर्त न होकर मूर्त था किन्तु उसकी मूर्तता वस्तुओं की मूर्तता से भिन्न थी। अतः जगत की मूर्त वस्तुओं की अमूर्त तत्व से व्याख्या दार्शनिक चिन्तन की दशा में निश्चित ही एक अगला प्रयास था। इससे यह जान पड़ता है कि एनेग्जीमेण्डर के सृष्टि-विज्ञान के अनेक तत्व आधुनिक सिद्धान्तों का पूर्वाभास दिखलाते हैं और आने वाले दार्शनिकों के लिए प्रकाशस्तम्भ का कार्य करते हैं।

एनेग्जीमेनीज आयोनिक मत के अन्तिम दार्शनिक थे। वे एनेग्जीमेण्डर के शिष्य और सहयोगी थे। अपने गुरू के समान ही उन्होंने भी अपने विचारों को आयोनिक लिपि में लिपिबद्ध किया। ऐतिहासिक साक्ष्य के आधार पर उनकी जन्म तिथि 588 ई. पू. मानी गई है।[12] दर्शन के क्षेत्र में एनेग्जीमेनीज ने थेलिज और एनेग्जीमेण्डर दोनों के विचारों को समन्वित करने का प्रयास किया। उन्होंने जगत् का परम तत्व वायु को माना।

एनेग्जीमेनीज ने परमतत्व के विषय में कहा कि मूल तत्व एक और असीम है। यह तक तो वे एनेग्जीमेण्डर के मूल तत्व की धारणा से सहमत नजर आते हैं। परन्तु वह एनेग्जीमेण्डर के समान परमतत्व को अनिश्चित नहीं मानता। उसके अनुसार वह वायु है। अर्थात् इन्होंने वायु को विश्व का परम तत्व माना है। वायु ही मनुष्य का प्राण है । वायु, अग्नि और जल के मध्य आती है। वह शुष्क और शीत है अर्थात वायु ही अग्नि का रूप ले लेती है और तरल होकर जल में परिणत हो जाती है तथा जमकर पृथ्वी का रूप ले लेती है। वायु को ही हम श्वास के द्वारा ग्रहण करते हैं और पवन बनकर चारों दिशाओं में यही व्याप्त है।[13] जिस प्रकार वह आत्म तत्व के रूप में मनुष्य को जोड़े रखती है उसी प्रकार वह समस्त जगत के चारों ओर व्याप्त है और उसे बनाए रखती है। अतः सभी लोक वायु के आधार पर टिके हुए हैं।

वायु से उनका तात्पर्य उस वस्तु से या जिसे हम श्वास के रूप में ग्रहण करते हैं और उससे भी, जो जमकर धुन्ध तथा जल बन जाती है- दोनों से है। उनका यह विचार थेलीज से मिलता है। दूसरी ओर उन्होंने वायु को असीम तथा असंख्य लोकों को धारण करने वाला बताया। इस दृष्टि से वे एनेग्जीमेण्डर के अनुयायी प्रतीत होते हैं। उनकी रचना का जो एकमात्र अंश मिलता है उससे लगता है कि वे विराट-विश्व तथा अणुविश्व के सादृश्य से प्रभावित थे। उनका कहना है कि जिस प्रकार हमारी आत्मा वायु में होने के कारण, हमें धारण किए हैं। उनका विचार था कि विश्व अपने बाहर स्थित असीम संघात की वायु से श्वास लेता है। अतः एनेग्जीमेनीज के अनुसार वायु सतत् गतिशील है। गति के अभाव में इसके विविध परिवर्तन सम्भव नहीं।[14]

एनेग्जीमेनीज ने पहली बार सृष्टि प्रक्रिया की वैज्ञानिक व्याख्या करने का प्रयत्न किया। उन्होंने मूल तत्व से प्रत्यक्ष मूलक तत्वों के उदय के लिए अमूर्तकरण और घनीकरण का प्रत्यय प्रयोग किया। अत्यन्त अल्प हो जाने पर वायु अग्नि में परवर्तित हो जाती है और अग्नि के उर्ध्वगमन के परिणाम स्वरूप नक्षत्रों की उत्पत्ति होती है। घनीकरण की प्रक्रिया से वायु बादल, जल, पृथ्वी और पत्थर बन जाती है। इस प्रकार एनेग्जीमेनीज ने मूल तत्व के फैलने और सिकुड़ने से जगत् की विभिन्न वस्तुओं की उत्पत्ति दिखलाई है। अतः एनेग्जीमेनीज ने वायु की इन विविध प्रक्रियाओं की तुलना क्रमशः तापक्रम सें वृद्धि और ह्रास से की हैं। उनके अनुसार जिस प्रकार एक ही वायु मुँह खोलकर श्वास बाहर फेंकने पर गर्म निकलती है और होठ सिकोड़कर निकालने पर शीतल रूप धारण करती है। उसी प्रकार ही वायु विरलीकरण की प्रक्रिया में ऊष्ण रूप धारण कर सूर्य, चन्द्रमा, नक्षत्र आदि अग्निमय पिण्डों का रूप धारण करती है और घनीकरण की प्रक्रिया मे शीतल होकर पवन, बादल, जल, पृथ्वी और हिमखण्डों का रूप धारण करती है। सिकुड़ना और फैलना मात्रा सम्बन्धी धारणाएँ हैं। इस प्रकार सम्बन्ध को मात्रात्मक सम्बन्ध में घटाया जा सकता है। अतः समस्त परिवर्तन को गति में घटाने की यह धारणा आधुनिक वैज्ञानिक सिद्धान्त के अत्यन्त निकट है।[15]

एनेग्जीमेनीज ने वायु को परम तत्व माना और कहा कि वायु ही सृष्टि का आधार है। उन्होंने अपने मूल तत्व को सिद्ध करने के लिए कुछ प्रमाण भी प्रस्तुत किए। जैसे वायु, श्वास और प्रस्वास के रूप में सभी जीवों का आधार है। हमारी आत्मा भी प्राण-वायु ही है। कोई भी प्राणी वायु के बिना जीवित नहीं रह सकता इत्यादि। यह उचित भी है कि वायु सचमुच जीवन के लिए बहुत उपयोगी है और किसी अंश में यह जीव-जगत का आधार भी है। परन्तु एनेग्जीमेनीज भी थेलीज और एनेग्जीमेण्डर की तरह परम तत्व की पूर्ण व्याख्या नहीं कर पाए। यह अस्वभाविक भी नहीं, क्योंकि दार्शनिक चिन्तन के प्रारम्भिक काल के विचारकों से यह अपेक्षा नहीं की जा सकती कि उन्हें वैज्ञानिक पद्धति का पूर्ण ज्ञान हो। फिर भी एनेग्जीमेनीज ने ही पहली बार यह बतलाने का प्रयास किया कि मूल तत्व से कैसे सृष्टि की उत्पत्ति होती है। उनका यह प्रयास ही वैज्ञानिक दृष्टिकोण की ओर ले जाने वाला था।

सारांश के लिए यह कहा जा सकता है कि आयोनिक मत के दार्शनिकों ने अपने-अपने ढंग से जगत के मूल तत्व और सृष्टि प्रक्रिया को समझने का प्रयास किया। उनके चिन्तन को दार्शनिक या वैज्ञानिक नहीं कहा जा सकता क्योंकि उस प्रारम्भिक-काल में उनके समक्ष तो स्पष्ट नहीं था कि दर्शन और विज्ञान में क्या भेद है। वैज्ञानिक व्याख्या कैसे की जाती है। उनका महत्व इतना ही है कि उन्होंने पौराणिक परम्पराओं से हटकर एक जागरुक, बौद्धिक- व्यक्ति की भांति कहीं बहिर्मुखी होकर, तो कहीं तार्किक कल्पना का आश्रम लेकर स्वतन्त्र चिन्तन करने का प्रयास किया। अतः युक्तिमूलक दुर्बलताएं उनके तत्वविषय निष्कर्षो में हो तो कोई आश्चर्य की बात नहीं। इन दार्शनिकों ने मानव के चारों तरफ फैले अनेकरूप से पूर्ण जगत् को एक तत्व से समझने का प्रयास किया। इस प्रयास में कहीं अनुभवमूलक प्रेक्षणों की भूमिका रही, कहीं तार्किक कल्पना का योगदान रहा तो कहीं मांग अटकल पर आधारित कल्पना का

समावेश हो गया। इनके चिन्तन की यही विशेषता इन्हें प्रारम्भिक दार्शनिक अथवा वैज्ञानिक बनाती है।

संदर्भ ग्रन्थ सूची-

1. एस. सन्तोष, द्रव्य की दार्शनिक विवेचना, निर्मल पब्लिकेशन्स, दिल्ली, पृ. 15
2. जॉन बर्नेट, अर्ली ग्रीक फिल, सॉफी, आदम एण्ड चार्ल्स ब्लैक, लंदन, पृ. 39
3. वही, पृ. 49
4. स्मरण रहे कि दर्शन के प्रारम्भिक काल में 'दर्शन' और 'विज्ञान' में कोई अन्तर नहीं किया जाता था।
5. डॉ. बद्रीनाथ सिंह, पाश्चात्य दर्शन, स्टूडेन्ट्स फ्रेण्ड्स एण्ड कम्पनी, वाराणसी, पृ. 9
6. जॉन बर्नेट, अली ग्रीक फिलॉसफी, आदम एण्ड चार्ल्स ब्लैक, लंदन, पृ. 61
7. वही
8. एस. सन्तोष, प्रव्य की दार्शनिक विवेचना, निर्मल पब्लिकेशन्स, दिल्ली, पृ. 23.
9. वही।
10. जेलर एडवर्ड, आउटलाईन ऑफ द हिस्ट्री ऑफ ग्रीक फिलॉसफी, भाग-1, स्टलेज एण्ड कीगन पॉल, लिमिटेड, लंदन, पृ. 230
11. बर्नेट जॉन, ग्रीक फिलॉसफी (थेलीज टू प्लेटो), मैक्मिलन एण्ड कम्पनी लिमिटेड, सेन्ट मार्टिन्स स्ट्रीट, लंदन, पृ. 23-24
12. या० मसीह, पाश्चात्य दर्शन का समीक्षात्मक इतिहास, नरेन्द्र प्रकाश जैन, मोतीलाल बनारसी दास, बंगलो रोड़, दिल्ली, पृ. 20
13. जॉन बर्नेट, अर्ली ग्रीक फिलॉसफी, आदम एण्ड चालर्स ब्लैक, लंदन, पृ. 76
14. बर्नेट, ग्रीक फिलासफी (थेलीज टू प्लेटो), मैक्मिलन एण्ड कम्पनी लिमिटेड, सेन्ट मार्टिन्स स्ट्रीट, लंदन, पृ 26
15. फ्रेन्क थिल्ली, ए हिस्ट्री ऑफ फिलासफी, सेन्ट्रल बुक डिपो, इलाहाबाद पृ. 27

UGC Journal No. (Old) 2138
Peer-Reviewed Research Journal
Impact Factor 4.875, ISSN 0975-4083
Vol.- 24, Hindi Edition, Year-12, Oct. 2022- March 2023

अवतारवाद

• आशुतोष शुक्ल

सारांश- अवतारवाद की धारणा सनातन धर्म की अपनी देन है। हम उससे अगुण, अगोचर, निराकार आदि मानते है। उसी का किसी न किसी रूप आकार में धराधाम में प्रकटीकरण ही उसका अवतार है। क्योकि भक्त अपने आराध्य के जिस रूप की कल्पना करता है तथा उसे जिस रूप में देखना चाहता है। उसको उसी रूप में दर्शन देने के लिए तथा लोक शिक्षण के लिए अवतरित होता है। यही उसका अवतार है।

मुख्य शब्द - अवतारवाद, सनातन धर्म, अगुण, अगोचर, निराकार

भारतीय प्राचीन साहित्य के अध्ययन से यह जात होता है कि इसका बहुत भाग अवतारों के वर्णन से भरा है। चाहे वह शिव के आवतार से हो या विष्णु के या उनके पार्षदों के। पुराण तो भगवान के विभिन्न अवतारों की कथा का गान ही है। अवतार की अवधारणा सनातन धर्म की अपनी देन है। अवतारवाद के कल्पना की भित्ति पुनर्जन्मवाद के नीव पर आधारित है। अवतार शब्द का शाब्दिक अर्थ किसी ऊचे स्थान से नीचे उतरने की क्रिया अथवा उतरने का स्थान है। किन्तु इसके अतिरिक्त अवतार अपने विशिष्ट अर्थ-किसी महनीय शक्ति सम्पन्न भगवान या देवता का मानव लोक में मानव या अमानव रूप में आविर्भूत होने के रूप में ही अधिक मान्य है। अवतार भगवान व उनके नित्य पार्षद दोनों के होते है। पर ईश्वर का स्वरूप क्या है। इस विषय में बहुत विवाद है। कोई उन्हे निर्गुण, निराकार मानता है तो कोई सगुण, साकार पर इन दोनों के अतिरिक्त एक मान्यता है जो दोनों के सामंजस्य स्वीकारती हुई एक ही ईश्वर को निराकर और साकर दोनों मानती है वही ईश्वर निर्गुण भी है और सगुण भी है। सम और विषम रूप भी वही है, वस्तुतः ईश्वर कैसा है यह वाणी का विषय नही है। पर व्यक्ति को जैसे ईश्वर की अवधारणा होती है वह वैसे ही गुण आरोपित कर लेता है। उसकी भावना के अनुसार ईश्वर उसके समक्ष स्वयं को प्रकट कर देता है। ''भगति हेतु लीला तनु गहही'' ईश्वर सर्वव्यापक है पर वह उसी प्रकार अदृष्य है जैसे काष्ठ में अग्नि। यज्ञादि में अरणि अग्नि प्रकट की जाती है उसी प्रकार ईश्वर को प्रकट करने के लिए उसमें संकल्प जागृत करने की आवश्यकता है। निराकार प्रेम और प्रार्थना के माध्यम से सगुण साकार रूप में परिणत होता है। विरूद्ध धार्माश्रयी भक्त के प्रेमवस सामान्य धर्माश्रयी हो जाता है। यद्यपि वह बिना पैर के चलता है, बिना कान के सुनता है, बिना हाथ के सारे कार्य करता है, बिना मुख के सर्व रसो का आस्वादन करता

• सहायक प्राध्यापक, संस्कृत, एस.आर.पी. कालेज, हनुमना

है, बिना वाणी के बहुत बड़ा वक्ता है और बड़ा योगी है। पर भक्तवाच्छा कल्प तरु वही भक्त की इच्छानुसार लीला वपुधारण कर नृपांगण में पैरो वाला होकर नाचता है और घुटने के बल चलता हुआ मानव सुलभ लीला में कारण है। यही तो उसका अवतरण है। इसका तात्पर्य हुआ कि ईश्वर कही से आता जाता नही है वह विभु है, व्यापक है, सर्वरूप है, उस परमात्मा का प्रकट होना ही, निराकार से साकार होना ही उसका अवतार है। वह अदृष्य है सर्वव्यापक में भी जब ममत्व व राग की सृष्टि की जाती है तो वह व्यक्ति या समाज की स्थिति से द्रवित होकर अपने को प्रकट करता है। अर्थात अवतारधारण कारण है। जगत में जो कुछ है और जो कुछ जगत है वह परमात्मा का ही रूप है, इसलिए परमात्मा व्यक्त होकर भी अव्यक्त है और प्रकट होने पर भी गुप्त है।

अवतार एक ओर यदि वैचारिक स्तर पर जीव की हृदयस्थ भावनाओं और कामनाओं की पूर्ति के लिए होता है तो दूसरी ओर समग्र समाज की समस्याओं का समाधान देने की भूमिका भी निभाता है। विभिन्न युगों की सामाजिक समस्यायें भी समाजिक रूप से भिन्न होती है, इसलिए प्रत्येक युग में अवतारों की भूमिका भी पृथक-पृथक दिखायी देती है यद्यपि स्थूल रूप में यह कहा जाता है कि जब-जब समाज में धर्म की हानि होती है, सृष्टि संचालन का संतुलन बिगड़ जाता है, अनाचार अत्याचार बढ़ जाता है। सनातन मर्यादायें नष्ट होने लगती है, तब जगत की सुव्यवस्था के लिए विश्वनियामिका सत्ता अवतीर्ण होकर प्रकृति की आवश्यकतानुसार समुचित व्यवस्था किसी न किसी रूप में करती है।

अवतारवाद हिन्दू धर्म का सबसे महत्वपूर्ण एवं आकर्षक विषय है। उपासना या साधना के साथ अवतार का बड़ा घनिष्ठ सम्बन्ध है। कोई भी भक्त शिव या विष्णु मंत्र की सद्‌गुरु से दीक्षा प्राप्त कर उसी के आधार पर सालोक्य, सारूप्य, सामिप्य एवं सायुज्य मुक्ति प्राप्त करता है। मुक्ति इन चारों आवस्थाओं को प्राप्त व्यक्ति मानव की परिधि से कुछ ऊपर उठकर जब पृथ्वी में अवतार लेता है तब अवतारी कहलाने लगता है। क्योकि उसके कर्मादि दिव्य होते है। उपर्युक्त तीन मुक्तिवाले दिव्य पुरूषों का अवतार अंशावतार व सायुज्य मुक्ति प्राप्त का अवतार पूर्णावतार मानकर ईश्वर के अंशावतार व पूर्णावतार की पुष्टि की जा सकती है। या सर्व व्यापक परमात्मा कार्यकारण की अपेक्षा अपनी कम या अधिक शक्ति को अवतरित कर अंशावतार या पूर्णावतार की विरूद को धारण करता है।

अवतार शब्द वैदिक साहित्य से लेकर आधुनिक साहित्य में अक्षुण्य रूप से प्रयुक्त हुआ है, यद्यपि वैदिक साहित्य में अवतार का स्पष्ट उल्लेख नही है। फिर भी "अवतृ" धातु से बनने वाले अवतारी "अवतार" शब्दों का प्रयोग संहिताओं और ब्राह्मण ग्रंथों में मिलते है। इन शब्दों से ज्ञात होता है कि वेदों में पूर्ण ही अवतारवाद का बीज अंकुरित हो चुका था। अवतारवाद की सिद्धि माया द्वारा इन्द्र के नानारूप धारण करने की सूचना देने वाले ऋग्वेद के मंत्र से होती है। इन्द्र "श्रृंग वृष" के पुत्र का रूप धारण करने वाले माने गये है। उपर्युक्त विवरण से इन्द्र के अवतार का स्पष्ट विवरण मिलता है। विष्णु के वामन अवतार का उल्लेख भी ऋग्वेद में मिलता है। जो वेद की निर्विवाद अवतार का मूल स्त्रोत सिद्ध करता है। कहने का भाव यह है कि वैदिककाल में अवतारवाद की

भावना किसी न किसी रूप में विद्यमान थी।

चाहे जो भी हो देवों को अपना रूप बदलकर पृथ्वी पर मानव या मानव से कुछ उत्कृष्ठ रूप में या अमानव रूप में जन्म लेकर सामान्य लोगों के हित साधन की बात प्रचलित हो चुकी थी। अवतारवाद के जो बीज वेदों में उपलब्ध होते है वे ब्राह्मण ग्रंथों में विशेष विकसित दिखाई पड़ते है। प्रजापति के मत्स्य, कुर्म तथा वाराह अवतार की कथा का स्पष्ट उल्लेख सतपथ ब्राह्मण में है। यह बात सत्य है कि वैदिक साहित्य में अवतारों का विशेष सम्बन्ध प्रजापति से था, विष्णु या शिव से इनका स्पष्ट सम्बन्ध नही था। किन्तु आगे चलकर ये अवतार विशेष रूप से विष्णु से सम्बन्धित हो गये। ऋग्वेद में शिव के रूद्र रूप का प्रादुर्भाव अवश्य हो चुका था पर उनके अन्य अवतारों का नही किन्तु आगे चलकर रूद्र के महनीयत्व एवं शिवत्व की चर्चा उनके अवतार धारण करने की दिशा की ओर स्पष्ट संकेत देती है।

उपनिषदों में अवतारवाद की प्रवृत्ति का कुछ विकसित रूप उपलब्ध होता है। ब्रह्म अकले होने के कारण विभूति युक्त कार्य करने के लिए इन्द्र, वरूण, सोम, रूद्र, मेघ एवं ईशानादि को उत्तपन्न करता है इससे स्पष्ट होता है कि सामुहिक अवतार, अंशावतार, विभूति अवतार आदि का कोई पाचीन रूप था। उपनिषद काल में उपासना का क्षेत्र निर्गुण ब्रह्म से सगुण ब्रह्म की ओर अग्रसर होता परिलक्षित होता जाता है। अवतारी ब्रह्म का जो सिमित रूप उपनिषदों में दिखायी देता है। वह सगुण की अपेक्षा समिति हो गया है।

ब्रह्म अपने विशुद्ध रूप मे अनादि, अप्रमेय, अजन्मा, अघोरणीयन, महतोमहियान, आत्मा और अविनाशी है। पर वह संसारी मनुष्यों के ज्ञान और अनुभूति से परे होने के कारण अबोध्य है। इसीकारण उपनिषदों में ब्रह्म के दोनों रूपों की चर्चा की गई है। जिसमें मूर्त, मर्त्य, स्थित तथा सतरूप अवतारी उपास्यों की सीमा में आते है। ब्रह्म अनेक रूपों में उत्पन्न होने की कामना करता है। इसका स्वरूप भर नही है पर रमण के लिए जाया भी कामना करता है। जिसके कारण वह मनुष्यों का उपास्य हो सका है और भक्त उसके कल्याणकारी रूप को ही देखने लगे। उपनिषदों के इस उपास्य ब्रह्म की रूपरेखा के विकास के साथ ही अवतारी उपास्यों को साहित्य और काव्य में पूर्ण स्थान मिला। उपनिषद काल में माया के द्वारा अवतार की विचारणा के साथ महेश्वर के माया के द्वारा प्रकट होने के प्रसंग आये है यह औपनिषदिक अवतारवाद वर्तमान युग तक उपलब्ध है। आग एवं सूत्र काल में अवतारवाद के सूत्र मिलते है।

रामायण और महाभारत में पुनर्जन्मवाद के सिद्धान्त को पूर्ण प्रश्रय मिला जिसके फलस्वरूप देवता और दानव विभिन्न रूपों में अवतरित होते है। रामायण में ब्रह्म का राम रूप में अवतार दुष्ट राक्षसों से देवताओं ओर मनुष्यों की रक्षा करना तथा मर्यादा की स्थापना करना प्रतीत होता है। यही विष्णु ही भर अवतार नही लेते बल्कि उनकी सहभ्राता के लिए अन्य वैदिक देवता भी सामूहिक रूप से अवतार ग्रहण करते है। इसी सामूहिक अवतार में हनुमान को शिव का आवतार माना गया है। रामायण काल तक वैदिक देवता ही अवतरित नही होते थे बल्कि तात्कालीक युग तक प्रचलित सिद्ध गंधर्व, अप्सरा, नाग आदि का भी सामूहिक अवतार होता है।

महाभारतकाल तक अधिकतर नायक देवताओं में अवतरित रूप माने जाते हैं। यहा कृष्ण पुरूष, नारायण या विष्णु के अवतार है। यहा स्वतंत्र अवतरत्व का परिचायक, पुरूष सूक्त से विकसित विराट रूप रहा है। महाभारत के अवतारवाद का रूप वैदिक परम्परा के अधिक समीप प्रतीत होता है। भगवान लीला करने के लिए जो-जो रूप धारण करना चाहते है, उस-उस रूप में अपनी आत्मा को सन्निधापित कर लेते है। महाभारत में गीता में वर्णित अवतारवाद का विस्तृत उल्लेख है। गुण परिवर्तनों में प्रजा की हित कामना से ईश्वर विभिन्न योनियों में अवतार धारण करते है। इस प्रकार हम देखते है कि महाभारत में अवतारवाद पूर्ण विकास पर था।

रामायण और महाभारत के अध्ययन से स्पष्ट हो जाता है कि अनेक साम्प्रदायिक तत्वों के समाविष्ट होने पर भी अवतारवाद का एक प्रचीन रूप भी था। जिसमें विष्णु या शिव तथा उनके अवतार निष्पक्ष ब्रह्न होने की अपेक्षा दो पक्षीय अधिक है। यद्यपि कहीं-कहीं दैत्यों के पक्ष का भी समर्थन करते दिखते है। पर देव पक्ष के आगे दैत्य पक्ष में कोई त्रुटि निकालकर उसे त्याग देते है। इससे ब्रह्न का पक्षपाती होना सिद्ध न होकर सद्‌गुण एवं सत्य का प्रतिष्ठापकत्व सिद्ध होता है। कुछ समय बाद यह देव पक्षीय अवतारवाद गौड़ हो गया और उस पर सामप्रदायिक और दार्शनिक प्रवित्तियों का पूर्ण प्रभाव पड़ा जिसका रूप पुराड़ो एवं तत्रों में स्पष्ट परिलक्षित होता है।

पुराणों के अनुशीलन से ज्ञात होता है कि अष्टादश पुराणों में दश पुराण शैव माने जाते है। इन पुराणों में शिव की लिलाओं एवं विभिन्न अवतारों का वर्णन मिलता है। त्रिदेवों में प्रधान होने के कारण शिव का करीब सभी पुराणों में वर्णन मिलता है। किन्तु शिव सम्बन्धी पुराणों में शिव की विशेष चर्चा है। फिर भी शिव पुराण में सब की अपेक्षा शिव का विशद वर्णन प्राप्त होता है। वैसे पुराणों में ईश्वर के अनेक अवतारों की कथाओं का वर्णन है, जिसमें ईश्वर के तथा उनके नित्य पार्षदों के भी अवतार आते है, पर पुराणों में अधिकतर दो ही अवतारों का विशेष विस्तार मिलता है, जिसका महाभारत में स्पष्ट रूप मिलता है। इनमें पहला साम्प्रदायिक अवतारवाद है। जिसे हम विभिन्न सम्प्रदायों के उपास्य के विभिन्न रूपों में अवतरित होकर धर्मादि की स्थापना तथा किन्ही विशेष धर्म को प्रवर्तित करने वाला मान सकते है। दूसरा अवतार का व्यापक रूप है। इस कोटि में अवतारी देव स्वयं औपनिषदिक ब्रह्न की कोटि में आता जाता है और वह नाना योनियों में प्रयोजनानुसार अवतरित होता है। जैसा कि विभिन्न पुराणों के अध्ययन से ज्ञात होता है कि जो पुराण विष्णुपरक है। वे विष्णु के चौबीस अवतारों या दशावतारों का विषद विवेचन करते है तथा विष्णु को ब्रह्नरूप प्रदान करते है। कृष्णपरक पुराण कृष्ण को ही ब्रह्न मानते है और उन्ही के अवतार आदि शिवपरक पुराणों में शिव ही प्रमुख है तथा वे ही ब्रह्म, विष्णु, रूद्र रूप में अवतरित होकर सृष्टि की स्थिति, पालन और संहार करते है। पुराणों में अवतारी पुरूष के शिष्य, प्रशिष्य भी अवतार मान लिये गये है। पुराणों में अवतारवाद अपने पूर्ण अवस्था में था। पुराणकार "पुरूष सूक्त" या ब्राह्णों के पुरूष को ही आदि अवतार माना है। इस तरह अधिक पुराणों में वैदिक मान्यताओं के आधार पर ही अवतारवाद का व्यापक रूप प्रस्तुत किया गया है। इस समिष्टगत अवतार की व्यपक चर्चा करते हुए भागवत में कहा गया है कि जितनी वस्तुए ऐश्वर्य, तेज, इन्द्रियबल,

मनोबल, शरीबल और क्षमा से मुक्त है या जिनमें सौदर्य, सज्ञा, वैभव, विभूति, अद्भूत रूप या वर्ण विद्यमान है। वे सभी परम् तत्व में ईश्वर स्वरूप है। इन शास्त्रों में वर्णित लीला अवतारों की संज्ञा दी गई है। इसप्रकार प्रयोजनात्मक अवतार के बाद एक वर्गात्मक अवतार का भी उल्लेख पुराणों में मिलता है।

पुराणों के बाद अवतार एवं आचार्यो द्वारा रचित ग्रंथों में भी अवतारवाद का क्रम लक्षित होता है। आधुनिककाल में अधिकतर पौराणिक अवतार ही उपासना के अंग है। पर सभी अवतार अपना अलग सात्व रखते है। उत्तर भारत में अधिकरत विष्णु के अवतार राम-कृष्ण प्रभिति की स्वतंत्र रूप से अवतारी पुरूष के रूप में तथा देवी व शिव के हनुमदा अवतार की विशेष पूजा होती है, जबकि दक्षिण भारत में शिव की उपासना होती है, और उनके विभिन्न अवतारों एवं योगाचार्य अवतारों की उपासना होती है। इसके अतिरिक्त निम्न लोगों में भूत, प्रेत, पिशाचों को भी अवतार रूप मानकर उपासना की जाती है जो आधुनिक युग की कोई मौलिक देन न होकर वैदिक रूद्र की उपासना से सम्बन्धित मानी जा सकती है।

उपर्युक्त अध्ययन से यह निष्कर्ष निकलता है कि शास्त्रो का जो सर्वव्यापक अनीह एवं निष्क्रिय ब्रह्म है, उससे व्यक्ति व समाज का हित नही हो सकता। उसके लिए तो एक इच्छा मुक्त सक्रिय ब्रह्म की आवश्यकता है। अवतारवाद की धारणा इसी से जुड़ी हुई है।

उसकी मान्यता यह है कि सर्व देशी होते हुए भी स्वयं को देश विदेश में अभिव्यक्त कर सकता है। सर्वव्यापक और कालातीत ब्रह्म को काल और देश की सीमा में लाने की चेष्ठा भक्तों द्वारा की जाती है। अवतारवाद की मूल प्रक्रिया प्रेम से जुड़ी हुई है इसलिए भगवान का भक्त के प्रति प्रेम बढ़ता ही जाता है। और उसी के अनुकूल ईश्वर का रूप भी स्पष्ट होता जाता है। इस तरह परमात्मा के अवतार में जहॉ भक्त की उत्कृष्ट साधाना कारण है वही उनकी अनंत करूणा भी उनके विभिन्न रूप में अवतार के लिए कारण है। अनीह, आगम तथा गुणहीन ब्रह्म की अभिव्यक्ति अवतार मानव के पर कल्याण के लिए है। यदि परमात्मा का अवतार इस धारा धाम पर न होता तो उनके अशेष गुण समुदाय का पता ही अल्पज्ञ जीव को कैसे चलता। भगवान का भौतिक सौदर्य, चारित्रिक-माधुर्य, अप्रमेय आकर्षण का परिचय जीव को तभी मिलता है। जब उनकी अभिव्यक्ति अवतार के रूप में जगती तल पर होती है। भगवान की लीला, चरित्र, उपदेश, भाषण आदि के माध्यम से तथा उनके अवयवों की अलौकिक आभा से भक्तों का मन विषयों से आहृत होकर भगवान में ही केन्द्रित हो जाता है। इस तरह अलौकिक रागामिकता वितरण ही भगवान के प्राक्कलन का उच्चतर तात्पर्य है, साथ ही ज्ञान का वितरण एवं जीव को बंधन मुक्त कर मोक्ष प्रदान करना अवतरण मूल उद्येश्य लगता है। धर्मादि का व्यवस्थापन तो उस परम् शक्ति सम्पन्न का लघुतर व्यापार है।

संदर्भ ग्रन्थ सूची-

1. उपनिषद (108 श्रीराम शर्मा कृत)
2. रामायण महाभारत
3. अष्टादश पुराण
4. पुराण विमर्श
5. पुराण परशीलन– पंण्डित गिरधर शर्मा चतुर्वेदी
6. शिवपुराण की धार्मिक तथा दार्शनिक समालोचना डॉ. रमाशंकर त्रिपाठी

UGC Journal No. (Old) 2138
Peer-Reviewed Research Journal
Impact Factor 4.875, ISSN 0975-4083
Vol.- 24, Hindi Edition, Year-12, Oct. 2022- March 2023

भारत का आर्थिक विकास

• मंजरी अवस्थी

सारांश- वैश्विक अर्थव्यवस्था लगभग 6 चुनौतियों का सामना कर रही है। कोविड-19 से संबंधित चुनौतियों के कारण रूकावट आई, रूस-यूक्रेन संघर्ष और इसके प्रतिकूल प्रभाव के साथ - साथ आपूर्ति श्रृंखला, मुख्य रूप से खाद्य, ईंधन तथा उर्वरक की आपूर्ति में बाधा उत्पन्न हुई और मंहगाई को रोकने के लिए फेडरल रिजर्व की दरों में वृध्दि के कारण विभिन्न देशों के केंन्द्रीय बैंकों के सामने समस्याएं उत्पन्न हुईं। इसके परिणामस्वरूप अमेरिकी डॉलर में उछाल आया और सकल आयात अर्थव्यवस्थाओं में चालू खाता घाटा बढ़ा वैश्विक गतिरोध की संभावनाओं का सामना करते हुए, राष्ट्रों ने अपनी संबंधित आर्थिक स्थिति की रक्षा करने के लिए मजबूरी महसूस की, सीमापार व्यापार धीमा कर दिया, जिसने विकास के लिए चौथी चुनौति पेश की।

मुख्य शब्द - आर्थिक विकास, चुनौतियॉ, प्रभाव, बाधा, अर्थव्यवस्था

2023-24 के दौरान भारत की जीडीपी विकास दर 6.0 से 6.8 प्रतिशत रहेगी,जो वैश्विक आर्थिक और राजनीतिक घटनाक्रमों पर निर्भर है। आर्थिक सर्वेक्षण 2022-23 का अनुमान है कि जीडीपी विकास दर वित वर्ष 2024 के लिए वास्तविक आधार पर 6.5 प्रतिशत रहेगी अर्थव्यवस्था की विकास दर मार्च 2023 को समाप्त होने वाले वर्ष के लिए 7 प्रतिशत (वास्तविक) रहने का अनुमान है, पिछले वित वर्ष में विकास दर 8.7 प्रतिशत रही थी सूक्ष्म, लघु और मध्यम उद्यम (एमएसएमई) क्षेत्र के लिए ऋण में तेज वृद्धि दर्ज की गई है, जो जनवरी-नवम्बर, 2022 के दौरान औसत आधार पर 30.5 प्रतिशत रही केन्द्र सरकार का पूंजीगत व्यय (कैपेक्स), जो वित वर्ष 2023 के आठ महीनों के दौरान 63.4 प्रतिशत की दर से बढ़ा, यह वर्तमान वर्ष के लिए भारतीय अर्थव्यवस्था के विकास को गति देने का प्रमुख कारण रहा है आरबीआई का अनुमान है कि वित वर्ष 2023 के लिए महंगाई दर 6.8 प्रतिशत रहेगी, जो इसकी लक्ष्य सीमा से अधिक है निर्माण गतिविधियों में प्रवासी श्रमिकों के लौटने से, निर्माण सामग्री के जमा होने की प्रक्रिया, जो पिछले साल के 42 महीनों के मुकाबले वित्त वर्ष 2023 की तीसरी तिमाही में 33 महीनों की रही है, में महत्वपूर्ण कमी दर्ज करने में मदद मिली है वित्त वर्ष 2022 में निर्यात में तेजी दर्ज की गई, वित्त वर्ष 2023 की पहली छमाही में उत्पादन प्रक्रिया में तेज वृध्दि दर्ज की गई है। वित्त वर्ष 2023 पहली छमाही में उत्पादन प्रक्रिया में तेज वृद्धि दर्ज की गई है।

• सहायक प्राध्यापक, अर्थशास्त्र, शासकीय कन्या महाविद्यालय, इटारसी

वित्त वर्ष 2023 की दूसरी तिमाही में निजी खपत जीडीपी के प्रतिशत के रूप में 58.4 प्रतिशत रही, जो 2013-14 के बाद के सभी वर्षों की दूसरी तिमाहियों के मुकाबले सबसे ज्यादा है, जिसे संपर्क आधारित सेवाओं जैसे व्यापार, होटल और परिवहन की मजबूती से समर्थन मिला विश्व व्यापार संगठन का अनुमान है कि वैश्विक व्यापार में वृद्धि 2022 के 3.5 प्रतिशत के मुकाबले 2023 में 1.0 प्रतिशत के निम्न स्तर पर रहेगी सर्वेक्षण ने इस तथ्य को रेखांकित किया है।

2023 -24 के दौरान भारत की जीडीपी विकास दर 6.0 से 6.8 प्रतिशत रहेगी, जो वैश्विक आर्थिक और राजनीतिक घटनाक्रमों पर निर्भर है। विकास अनुमान का आशावादी पक्ष विभिन्न सकारात्मक तथ्यों पर आधारित है, जैसे निजी खपत में मजबूती जिसमें उत्पादन गतिविधियों को बढ़ावा दिया है विकास अनुमान का आशावादी पक्ष विभिन्न सकारात्मक तथ्यों पर आधारित है, जैसे निजी खपत में मजबूती जिसमें उत्पादन गतिविधियों को बढ़ावा दिया है पूंजीगत व्यय की उच्च दर (कैपेक्स) सार्वभौमिक टीकाकरण कवरेज, जिसने संपर्क आधारित सेवाओं- रेस्टोरेंट, होटल शॉपिंगमॉल, सिनेमा आदि के लिए लोगों को सक्षम किया है शहरों के निर्माण स्थलों पर प्रवासी श्रमिकों के लौटने से भवन निर्माण सामग्री के जमा होने में महत्वपूर्ण कमी दर्ज की गई है, कॉरपोरेट जगत का लेखा विवरण पत्रों में मजबूती पूंजी युक्त सार्वजानिक क्षेत्र के बैंक जो ऋण देने में वृद्धि के लिए तैयार हैं तथा सूक्ष्म, लघु और मध्यम उद्यम क्षेत्र के लिए ऋण में बढ़ोतरी। केन्द्रीय वित्त एवं कॉरपोरेट कार्य मंत्री श्रीमती निर्मला सीतारमण ने आज 31 जनवरी 2023 को संसद में 'आर्थिक सर्वेक्षण 2022-23' पेश किया, जिसका अनुमान है कि जीडीपी विकास दर वित्त वर्ष 2024 के लिए वास्तविक आधार पर 6.5 प्रतिशत रहेगी। इस अनुमान की बहुपक्षीय एजेंसियों जैसे विश्व बैंक, आईएमएफ, एडीबी और घरेलू तौर पर आरबीआई द्वारा किए गए अनुमानों से तुलना की जा सकती है। सर्वेक्षण कहता है कि वास्तविक स्तर पर मार्च, 2023 को समाप्त होने वाले वर्ष के लिए अर्थव्यवस्था में 7 प्रतिशत की दर से वृद्धि होगी। पिछले वित्तय वर्ष के दौरान विकास दर 8.7 प्रतिशत रही थी। काविड-19 के तीन लहरों तथा रूस - यूक्रेन संघर्ष के बावजूद एवं फेडरल रिजर्व के नेतृत्व में विभिन्न देशों की अर्थव्यवथाओं के केन्द्रीय बैंकों द्वारा मंहगाई दर में कमी लाने की नीतियों के कारण अमेरिकी डॉलर में मजबूती दर्ज की गई है और चालू खाता घाटा (सीएडी) बढ़ा है। दुनियाभर की एजेंसियों ने भारत को सबसे तेजी से बढ़ने वाली बड़ी अर्थव्यवस्था माना है, जिसकी विकास दर वित्त वर्ष 2023 में 6.5-7.0 प्रतिशत रहेगी। सर्वेक्षण के अनुसार, वित्त वर्ष 2023 के दौरान भारत के आर्थिक विकास का मुख्य आधार निजी खपत और पूंजी निर्माण रहा है, जिसने रोजगार के सृजन में मदद की है। यह शहरी बेरोजगारी दर में कमी तथा कर्मचारी भविष्य निधि के कुल पंजीकरण में तेजी के माध्यम से दिखाई पड़ती है। इसके अतिरिक्त, विश्व के दूसरे सबसे बड़े टीकाकरण अभियान, जिसमें 2 बिलियन खुराकें दी गई हैं, ने भी उपभोक्ताओं के मनोभाव को मजबूती दी है, जिससे खपत में वृद्धि होगी। निजी पूंजीगत निवेश का नेतृत्व करने की आव'यकता है ताकि रोजगार के अवसरों का तेजी से सृजन हो सके।

भारत के विकास दृष्टिकोण को निम्न से बढ़ावा मिला है- (1) चीन के काविड-19 संक्रमण की वर्तमान लहर से पूरी दिनिया के प्रभावित होने की तुलना में भारत में स्वास्थ्य और अर्थव्यवस्था पर अपेक्षाकृत कम असर पड़ा है, जिससे आपूर्ति श्रंखलाएं सामान्य रही हैं। (2) चीन की अर्थव्यवस्था के फिर से खुलने के कारण मृद्रास्फीति बढ़ने की संभवना न तो महत्वपूर्ण है और न ही निरंतर है। (3) विकसित अर्थव्यवस्थाओं में (एई) मंदी के रूझानों से मौद्रिक मजबूती में कमी आई है, भारत में घरेलू मुद्रास्फीति दर 6 प्रतिशत से कम रही है, जिससे देश में पूजीगत प्रवाह बढ़ा है तथा (4) उद्योग जगत का रूझान बेहतर हुआ है, जिससे निजी क्षेत्र निवेश में वृद्धि हुई है। सर्वेक्षण कहता है कि सूक्ष्म, लघु और मध्यम (एमएसएमई) क्षेत्र के लिए ऋण में तेज वृद्धि दर्ज की गई है, जो जनवरी - नवम्बर, 2022 के दौरान औसत आधार पर 30.6 प्रतिशत रही और इसे केन्द्र सरकार की आपात ऋण से जुड़ी गारंटी योजना (ईसीएलजीएस) का समर्थन मिला। एमएसएमई क्षेत्र में रिकवरी की गति तेज हुई है, जो उनके द्वारा भुगतान किए जाने वाले वस्तु एवं सेवाकर (जीएसटी) की धनराशि से परिलक्षित होती है। उनकी आपात ऋण से जुड़ी गारंटी योजना (ईसीएलजीएस) ऋण संबंधी चिंताओं को दूर कर रही है। इसके अलावा बैंक ऋण में हुई वृद्धि, उधार लेने वालों के बदलते रूझानों से भी प्रभावित हुई है, जो जोखिम भरे बॉन्ड मार्किट मे निवेश कर रहे हैं, जहां धन अर्जन अधिक होता है। यदि मुद्रास्फीति वित्त वर्ष 2024 में कम होती है और ऋण इसके अलावा बैंक ऋण में हुई वृद्धि, उधार लेने वालों के बदलते रूझानों से भी प्रभावित हुई है, जो जोखिम भरे बॉन्ड मार्किट में निवेश कर रहे हैं, जहां धन अर्जन अधिक होता है। यदि मुद्रास्फीति वित्त वर्ष 2024 में कम होती है और ऋण की वास्तविक लागत नहीं बढ़ती है जो वित्त वर्ष 2024 के लिए ऋण वृद्धि तेत रहेगी।

केन्द्र सरकार का पूंजीगत व्यय (कैपेक्स) वित्त वर्ष 2023 के पहले 8 महीनों में 63.4 प्रतिशत तक बढ़ गया, जो चालू वित्त वर्ष में भारतीय अर्थव्यवस्था के विकास का प्रमुख घटक रहा है। 2022 की जनवरी- मार्च तिमाही से निजी पूंजीगत व्यय में वृद्धि हुई है। वर्तमान रूझानों के अनुसार लगता है कि पूरे वर्ष के लिए पूंजीगत व्यय बजट हासिल कर लिया जाएगा। निजी पूंजीगत निवेश में भी वृद्धि होने का अनुमान है, क्योंकि कॉपोरेट जगत लेखा विवरण पत्र मजबूत हुए है जिससे ऋण देने में वृद्धि होगी।

सर्वेक्षण ने महामारी के कारण निर्माण गतिविधियों में आई बाधाओं को रेखांकित किया है। सर्वेक्षण कहता है कि टीकारण से प्रवासी श्रमिकों का शहरों में वापस आने में सुविधा मिली है। इससे आवास बाजार मजबूत हुआ है। यह इस बात से परिलक्षित होता है कि विनिर्माण सामग्री के भंडार में महत्वपूर्ण कमी दर्ज की गई है, जो पिछले साल के 42 महीनों के मुकाबले वित्त वर्ष 2023 की तीसरी तिमाही में 33 महीने रह गया है।

सर्वेक्षण कहता है कि महात्मा गांधी राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार गारंटी योजना (एमजीएनआरईजीएस) ग्रामीण क्षेत्रों में प्रत्यक्ष तौर पर ग्रामीण परिवारों को अपनी आय के स्त्रोतों में बदलाव लाने में मदद कर रही है। पीएम किसान और पीएम गरीब कल्याण योजना जैसी योजनाएं देश में खाद्य सुरक्षा सुनिश्चित कर रही है और इनके प्रभावों को संयुक्त राष्ट्र विकास कार्यक्रम (यूएनडीपी) ने भी शामिल किया गया है। सर्वेक्षण उम्मीद

करता है कि भारतीय अर्थव्यवस्था महामारी के प्रभावों से मुक्त हो चुकी है और वित्त वर्ष 2022 में दूसरे देशों की अपेक्षा तेजी से पहले की स्थिति में आ चुकी है। भारतीय अर्थव्यवस्था अब वित्त वर्ष 2023 में महामारी-पूर्व के विकास मार्ग पर आगे बढ़ने के लिए तैयार है। हालांकि चालू वर्ष में भारत ने यूरोपीय संघर्ष के कारण हुई मुद्रास्फीति में वृद्धि को कम करने की चुनौती का सामना किया है। सरकार और आरबीआई के द्वारा किए गए उपायों और वैश्विक स्तर पर वस्तुओं की कीमतों में आई कमी से नवंबर, 2022 से खुदरा मुद्रास्फीति को आरबीआई की लक्ष्य-सीमा से नीचे लाने में मदद मिली। वैश्विक बाजार के आकार को कम करता है।

इस प्रकार से वर्ष 2023 में वैश्विक वृद्धि में गिरावट का अनुमान लगाया गया है और इसके बाद के वर्षों में भी आमतोर पर कमजोर रहने की संभावना है। धीमी मांग की वजह से वैश्विक कमोडिटी की कीमतों में कमी आएगी और वित्त विर्ष 2024 में भारत के सीएडी में सुधार होगा। हालांकि चालू खाता शेष के लिए नकारात्मक जोखिम मुख्य रूप से घरेलू मांग और कुछ हद तक निर्यात द्वारा संचालित तेज रिकवरी से उत्पन्न होता है। सीएडी पर बारीकी से नजर रखने की आवश्यकता है क्योंकि चालू वर्ष की विकास गति बनाए रखेगी।

सर्वेक्षण में इस महत्वपूर्ण तथ्य की भी जानकारी दी गई है सामान्य तौर पर, पिछले समय में वैश्विक आर्थिक झटके काफी गंभीर रहे हैं लेकिन समय के बीतने सीएडी पर बारीकी से नजर रखने की विकास गति अगले वर्ष की विकास गति बनाए रखेगी।

सर्वेक्षण में इस महत्वपूर्ण तथ्य की भी जानकारी दी गई है कि सामान्य तौर पर, पिछले समय में वैश्विक आर्थिक झटके काफी गंभीर रहे हैं लेकिन समय के बीतने के साथ इनसे बाहर निकला गया है परनतु इसने शताब्दी के तीसरे द'ाक में परिवर्तन किया क्योंकि 2020 के बाद से वैश्विक अर्थव्यवस्था को कम से कम तीन झटके झेलने पड़े हैं।

यह सब महामारी से प्रभावित वैश्विक उत्पादन में आई कमी से प्रारंभ हुआ जिसे रूस-यूक्रेन संघर्ष ने विश्र को मुद्रास्फीति की ओर अग्रसर कर दिया फिर फेडरल रिजर्व के पीछे-पीछे अर्थव्यवस्थाओं के केन्द्रीय बैंकों ने मुद्रस्फिीति पर अंकुश लगाने के लिए समकालिक नीतिगत दरों में वृद्धि की। यूएस फेड द्वारा दरों में की गई वृद्धि ने अमेरिकी बाजारों में पूंजी को।

भारत का आर्थिक लचीलापन और विकास संचालक- भारतीय रिजर्व बैंक द्वारा मौद्रिक सख्ती, सीएडी का बढ़ना, और निर्यात की स्थिर वृद्धि अनिवार्य रूप से यूरोप में भू- राजनीतिक विवाद का परिणाम है। जैसा कि इन गतिविधियों ने वित्त वर्ष 2023 में भारतीय अर्थव्यवस्था के विकास के लिए नकारात्मक जोखिम पैदा किया है, दुनिया भर में कई एजेंसियां रूक-रूक कर भारतीय अर्थव्यवस्था के अपने विकास पूर्वानुमान को नीचे की ओर संशोधित कर रही हैं। एनएसओ द्वारा जारी किए गए अग्रिम अनुमानों सहित ये पूर्वानुमान अब मोटे तौर पर 6.5-7.0 प्रतिशत की सीमा में है।

भारतीय अर्थव्यवस्था में मैक्रोइकोनॉमिक और विकास संबंधी चुनौतियां- भारत पर महामारी के प्रभाव के कारण वित्त 2021 में एक महत्वपूर्ण जीडीपी संकुचन देखा गया। अगले वर्ष, वित्तीय वर्ष 2022 में भारतीय अर्थव्यवस्था जनवरी 2022 की ओमिक्रॉन लहर के बावजूद पटरी पर आने लगी थी। इस तीसरी लहर ने भारत में आर्थिक गतिविधियों को उतना प्रभावित नहीं किया, जितना महामारी की पिछली लहरों ने जनवरी 2020 में इसका प्रकोप शुरू होने पर प्रभावित किया था। हालांकि, यूरोप में संघर्ष ने वित्त वर्ष 2023 में आर्थिक संवृध्दि और मुद्रास्फीति की प्रत्याशा में एक संशोधन आवश्यक कर दिया। जनवरी 2022 में देश की खुदरा मुद्रास्फीति आरबीआई की स्वीकार्य सीमा से ऊपर चली गई थी। यह 2023-24 के लिए अनुमान के विवरण में समीक्षा में बताया गया है कि महामारी से भारत की भरपाई अपेक्षाकृत तीव्र थी और ठोस घरेलू मांग के समर्थन व पूंजीगत निवेश में वृध्दि से आगामी वर्षों में प्रगति होगी। इसमें बताया गया है कि सशक्त वित्तीय घटकों के बल पर निजी क्षेत्र में पूंजी निर्माण प्रक्रिया का अंतर्निहित लक्षण परिलक्षित है और पूजीगत व्यय में निजी क्षेत्र की सावधानी के लिए भरपाई करना और सरकार द्वारा पर्याप्त पूंजीगत व्यय जुटाना इससे भी अधिक महत्वपूर्ण बात है।

सर्वेक्षण के अनुसार, वित्त वर्ष 2016 से वित्त वर्ष 2023 तक पिछले 7 वर्षों में बजटीय पूंजीगत व्यय में 2.7 गुणा वृद्धि हुई, जिससे पूंजीगत व्यय को मजबूती मिली। वस्तु एवं सेवाकर की शुरूआत और दिवाला एवं दिवालियापन संहिता। वस्तु एवं सेवाकर की शुरूआत और दिवाला एवं दीवालियापन संहिता जैसे रचनात्मक सुधारों से अर्थव्यवस्था की क्षमता और पारदर्शिता बढ़ी और वित्तीय अनुशासन एवं बेहतर अनुपालन सुनिश्चित हुआ।

अंतर्राष्ट्रीय मुद्राकोष इकोनॉमिक आउटलुक, अक्टूबर 2022 के अनुसार, वैश्विक विकास के वर्ष 2022 में 3.2 प्रतिशत से धीमा होकर वर्ष 2023 में 2.7 प्रतिशत होने का अनुमान है। आर्थिक उत्पादन में धीमी वृद्धि के साथ बढ़ती अनिश्चितता व्यापार वृद्धि को कम कर देगी। वैश्विक व्यापार में वृद्धि के संबंध में विश्व व्यापार संगठन द्वारा वर्ष 2022 में 3.5 प्रतिशत से 2023 में 1.0 प्रतिशत गिरावट का पूर्वानुमान किया गया है। बाह्य दृष्टि से, चालू खाता शेष के जोखिम अनेक स्त्रातों से उत्पत्र होते हैं, जबकि वस्तुओं की कीमतें रिकार्ड ऊंचाई से कम हो गई हैं, वे अभी भी संघर्ष-पूर्व के स्तर से ऊपर हैं।

भारत का समावेशी विकास- सर्वेक्षण में इस बात पर जोर दिया गया है कि विकास तब समावेशी होता है, जब यह रोजगार सृजित कराता है। आधिकारिक और गैर-आधिकारिक दानों स्त्रोत इस बात की पुष्टि करते हैं कि चालू वित्त वर्ष में रोजगार के स्तर मं वृध्दि हुई है। आवधिक श्रम बल सर्वेक्षण (पीएलएफएस) से पता चलता है कि 15 वर्ष और उससे अधिक आयु के लोगों के लिए 'शहरी बेरोजगारी दर सितंबर 2021 का समाप्त तिमाही में 9.8 प्रतिशत से घटकर एक वर्ष बाद (सितंबर 2022 को समाप्त तिमाही में) 7.2 प्रतिशत हो गई। इसके साथ-साथ श्रम बल भागीदारी दर (एलएफपीआर) में भी सुधार हुआ है। यह वित्त वर्ष 2023 की शुरूआत में अर्थव्यवस्था के महामारी से प्रेरित मंदी से उभरने की पुष्टि करता है।

वैश्विक अर्थव्यवस्था विशिष्ट चुनौतियों का सामना कर रही है- सर्वेक्षण में बताया गया है कि वैश्विक अर्थव्यवस्था लगभग 6 चुनौतियों का सामना कर रही है। कोविड-19 से संबंधित चुनौतियों के कारण रूकावट आई, रूस-यूक्रेन संघर्ष और इसके प्रतिकूल प्रभाव के साथ-साथ आपूर्ति श्रृंखला, मुख्य रूप से खाद्य, ईंधन तथा उर्वरक की आपूर्ति में बाधा उत्पन्न हुई और मंहगाई को रोकने के लिए फेडरल रिजर्व की दरों में वृद्धि के कारण विभिन्न देशों के केंन्द्रीय बैंकों के सामने समस्याएं उत्पन्न हुईं। इसके परिणामस्वरूप अमेरिकी डॉलर में उछाल आया और सकल आयात अर्थव्यवस्थाओं में चालू खाता घाटा बढ़ा वैश्विक गतिरोध की संभावनाओं का सामना करते हुए, राष्ट्रों ने अपनी संबंधित आर्थिक स्थिति की रक्षा करने के लिए मजबूरी महसूस की, सीमा पार व्यापार धीमा कर दिया, जिसने विकास के लिए चौथी चुनौती पेश की।

संदर्भ ग्रन्थ सूची-

1. प्रो. बी.एल ओझा, भारतीय अर्थव्यवस्था
2. डॉ. विनय ऋषीश्वर, आर्थिक पर्यावरण
3. डॉ. विनय ऋषीश्वर, व्यावसायिक पर्यावरण
4. प्रो. बी एल ओझा, विकास का अर्थशास्त्र
5. डॉ. सिन्हा एवं सिन्हा, भारत में आर्थिक विकास

UGC Journal No. (Old) 2138
Peer-Reviewed Research Journal
Impact Factor 4.875, ISSN 0975-4083
Vol.- 24, Hindi Edition, Year-12, Oct. 2022- March 2023

पुस्तकालय एक सर्वेक्षण

• स्वाति पाण्डेय

सारांश- पुस्तकालय वह स्थान है जहाँ विविध प्रकार के ज्ञान, सूचनाओं, स्रोतों, सेवाओं आदि का संग्रह रहता है। पुस्तकालय शब्द अंग्रेजी के लाइब्रेरी शब्द का हिंदी रूपांतर है। लाइब्रेरी शब्द की उत्पत्ति लेटिन शब्द लाइवर से हुई है, जिसका अर्थ है पुस्तक। पुस्तकालय का इतिहास लेखन प्रणाली पुस्तकों और दस्तावेज के स्वरूप को संरक्षित रखने की पद्धतियों और प्रणालियों से जुड़ा है। पुस्तकालय, यह शब्द दो शब्दों से मिलकर बना है- पुस्तक + आलय। पुस्तकालय उस स्थान को कहते हैं जहाँ पर अध्ययन सामग्री (पुस्तकें, फिल्म, पत्रपत्रिकाएँ, मानचित्र, हस्तलिखित ग्रंथ, ग्रामोफोन रेकार्ड एव अन्य पठनीय सामग्री) संगृहीत रहती है और इस सामग्री की सुरक्षा की जाती है। प्रस्तुत शोध पत्र पुस्तकालय के महत्व एवं समस्या से सम्बंधित है पुस्तकालय किसी भी संस्था का ह्रदय माना जाता है ग्रंथालय पुस्तकालय एक सामाजिक संस्था है जो समाज के कल्याण में निरंतर रहती है। भारत वर्ष में विद्यादान की सर्वाधिक महिमा है, विद्यादान को सभी दानो में श्रेष्ठ माना जाता है। मध्य प्रदेश में स्थित शहडोल संभाग के पुस्तकालय की स्थिति, उपयोग सेवा आदि के बारे में जानना व पाठक को उससे अवगत करना ही इस शोध का मुख्य उद्धेश्य है।

मुख्य शब्द - पुस्तकालय, गुणवत्ता, प्रबंधन, आधुनिकिकरण

प्रस्तुत शोध पत्र पुस्तकालय के महत्व एवं समस्या से सम्बंधित है पुस्तकालय किसी भी संस्था का ह्द्य माना जाता है ग्रंथालय पुस्तकालय एक सामाजिक संस्था है जो समाज के कल्याण में निरंतर रहती है। भारत वर्ष में विद्यादान की सर्वाधिक महिमा है, विद्यादान को सभी दानो में श्रेष्ठ माना जाता है। पुस्तकालय वह संस्था है जन्हा पर व्यक्ति अपने ज्ञान में वृद्धि करता है, विद्यार्थियों के लिए अति आवश्यक होती है।

- शिक्षा के छेत्र में
- उद्योग एवं व्यापार के क्षेत्र में
- व्यवसाय के छेत्र में
- शोध एवं तकनीकी क्षेत्र में
- मनोरंजन के क्षेत्र में
- प्रगति के आधार में

• पीएच.डी शोध छात्रा, सनराइज विश्वविद्यालय अलवर, राजस्थान

समाज के अन्य सामाजिक संस्थाओं की तरह पुस्तकालय भी एक संस्था है जो अन्य संस्थाओं की तरह ही कार्य करती है। पुस्तकालय में सूचना एवं ज्ञान का संकलन, संग्रहण, वर्गीकरण, प्रक्रियाकारण, व्यवस्थापन, संकीर्णन तथा वितरण प्रलेखबद्ध किया जाता है। पुस्तकालय समाज के व्यक्तियों को शिक्षा देने में, अनुसन्धान के विकास में तथा सांस्कृतिक गतिविधियों आदि में अभूतपूर्व योगदान देती है। पुस्तकालय उस संस्था को कहते है जहां अध्ययन सामग्री जैसे पुस्तकें, फिल्म, पत्र- पत्रिकाएँ, मानचित्र, हस्तलिखित ग्रन्थ, ग्रामोफोन रिकॉर्डर एवं अन्य पठनीय सामग्री संगृहीत होती हैं। इन सामग्रियों का रख-रखाव भी सही ढंग से किया जाता है। वर्तमान समय में पुस्तकालय संचित पुस्तकों का कोषग्रह मात्र नहीं बल्कि सामाजिक जीवन के साथ हर संभव सम्बन्ध स्थापित करने वाला बहुसूत्रीय संस्थान बन गया है जो नई आवश्यकताओं को अपनी सूचनाओं द्वारा पूर्ण करने की वित्तीय एवं सामग्रियों से संपन्न होता है। आधुनिक युग में पुस्तकालय का कार्य विभिन्न कार्यक्रमों द्वारा न केवल पाठकों को इच्छित पुस्तकें उपलब्ध करना है बल्कि समाज के प्रत्येक व्यक्तियों में ज्ञान प्राप्ति की आकांछा को भी पैदा करना भी है तथा उनकीं ज्ञान पिपासा को कम करना है। आज के आधुनिक युग में पुस्तकालय व ग्रंथालय को एक सामाजिक व शैक्षणिक केंद्र माना जा रहा है।

जैसा की हम जानते हैं की महाविद्यालय, विश्वविद्यालय आदि को कोई भी संस्था एक सामुदायिक संस्था होती है, जिसका मस्तिष्क शिक्षक होता है तथा ह्द्य ग्रंथालय होता है, अपने उद्देश्यों के अनुसार ग्रंथालय पुस्तकालय निम्न प्रकार के होते हैं-

1. शैक्षणिक ग्रंथालय
2. व्यक्तिगत ग्रंथालय
3. सार्वजनिक ग्रंथालय
4. विशिष्ट ग्रंथालय

पुस्तकें ही शिक्षा का आधार हैं तथा ग्रंथालय शिक्षा के पूरक एवं सहयोगी होते है बहुत से ऐसे ग्रंथालय होते हैं जंहा ग्रंथालय सेवा नहीं पंहुच पाती है अतः ऐसे स्थानों पर अध्यन केंद्र के रूप में छोटे – छोटे ग्रंथालय स्थापित किये जा सकते हैं तथा पाठक सेवा उपलब्ध कराई जा सकती है तथा इसी प्रकार पुस्तकालय का स्तर बढ़ने के लिए तथा पाठक तक ज्ञान पंहुचाने के लिए बुक स्टॉल लगाये जा रहे हैं, उनमे से शहडोल संभाग में भी लाइब्रेरी स्थापित की गई है। सन्न 1990 के दशक में रेलवे फाटक के पास रामकुमार लाइब्रेरी स्थापित हुआ करती थी। अब पब्लिक लाइब्रेरी के रूप में विवेकानंद पुस्तकालय जिसे ई – लाइब्रेरी का रूप दिया जा रहा है, स्थापित है। ज्ञान सभी के लिए आवश्यक है। ज्ञान जितना ही बांटा जाय उसकी उतनी ही बढ़ोत्तरी होती है। तात्पर्य पाठकों की विभिन्न एवं विशिष्ट आवश्यकताओं हेतु अन्य आधुनिक कार्य जो निम्नलिखित है वो संपन्न किये जा रहे हैं-

- पाठकों को आधुनिक सर्वोत्तम सेवा, सन्दर्भ सेवा व सूचना सेवा को प्रदान करना है।
- पाठकों के लिए प्रचार सेवाओं की व्यवस्था।

शहडोल,उमरिया,एवं अनूपपुर आते हैं। चूकि शहडोल जिला उमरिया,और अनूपपुर के मध्य में स्थित है, इसलिये शहडोल संभाग को मुख्यालय बनाया गया हैं। शहडोल का नाम मुख्यालय शहर शहडोल के नाम पर रखा गया हैं। शहडोल म.प्र. के उत्तर पूर्वी भाग में स्थित हैं। शहडोल जिला मुख्यता पहाड़ी जिला हैं। इसका कुल भौगोलिक क्षेत्रफल 6205 वर्ग किलोमीटर हैं।

सुझाव– इस शोध में जो निष्कर्ष प्राप्त हुए हैं उसके आधार पर महाविद्यालयों की पुस्तकालयों को इस प्रकार से सुझाव दिए जा रहे हैं–

- पुस्तकालय भवन की व्यवस्था
- पुस्तकालय कर्मचारी की व्यवस्था
- नवीन पुस्तकों की संख्या में वृद्धि
- छात्र / छात्राओं की पुस्तकों को क्रय करना
- आलमारियां व आधुनिकीकरण की व्यवस्था करना
- पर्याप्त पात्र–पत्रिकाओं की व्यवस्था करना व पुस्तकालय बजट को बढ़ाना

निष्कर्ष- शहडोल संभाग में पुस्तकालयों में छात्र / छात्राओं के लिए पर्याप्त व आधुनिक पत्र–पत्रिकाओं की कमी है और एक और मध्य प्रदेश शाशन पुस्तकालयों की आधुनकीकरण के लिए प्रयत्नशील है द्य वंही दूसरी ओर HARDWER & SOFTWRE क्षेत्र में लोगों को प्रशिक्षित करने की व्यवस्था नहीं है। शासन द्वारा अनुदान व पर्याप्त बजट की व्यवस्था आवश्यक है, प्रयास जारी है जिससे पुस्तकालयों को ई–लाइब्रेरी का रूप प्रदान किया जा सके। शहडोल संभाग में स्थित महाविद्यालयों/विश्वविद्यालय की लाइब्रेरी की स्थिति नि:संदेह काफी अच्छी है।

संदर्भ ग्रन्थ सूची-

1– पुस्तकालय व सूचना विज्ञान – वी.के. शर्मा
2– पुस्तकालय वर्गीकरण
3– फाइव लॉज ऑफ लाइब्रेरी साइंस
4– RESEARCH MATHODOLOGY @ L- N- KOLI
5– शर्मा वी.के., शोध प्रविधियां एवं सांख्यिकीय तकनीकी

विशिष्ट अध्येताएँ– जैसे शोधकर्ता, वैज्ञानिक, डॉक्टर, इंजिनियर आदि के लिए सूचना का संग्रहण करना आवश्यक है। शिक्षा व ग्रंथालय दो जुड़वाँ बहने हैं, एक को दूसरे से अलग नहीं किया जा सकता। ग्रंथालय आधुनिक शैक्षिक संरचना की नीव है, कोई भी शिक्षण संसथान अपने शैक्षिक कार्य को पूरा करती है तो इसी तरह ग्रंथालय अपने ज्ञान समाप्ति को सही समय पर सही व्यक्ति को सही रूप में प्रदान कर उसके शैक्षिक कार्यक्रम को प्रोत्साहित करती है। भविष्य में शैक्षिक पुस्तकालय विद्यालय, महाविद्यालय, यांत्रिकी विद्यालय, विश्वविद्यालय और अन्य प्रकार की पुस्तकालय जैसे सार्वजनिक, शैक्षिक, विशिष्ट, व्यक्तिगत और बाह्य प्रचार सेवा के लिए संचार माध्यम प्रदर्शनी आदि ग्रंथालय को शिक्षा की नीव कहा जॉय तो अतिश्योक्ति नही होगी।

पुस्तकालय के द्वारा विद्यार्थी के साथ–साथ इस संस्था के सभी व्यक्ति के व्यक्तित्व का विकास होता है तथा ज्ञान की वृद्धि के साथ–साथ व्यक्तियों के पढ़ने व स्वाध्ययन की रूचि भी बढ़ती है। महाविद्यालय तथा ग्रंथालय का विद्यार्थियों के व्यक्तित्व विकास में महत्वपूर्ण योगदान रहा है। इसकी महत्ता को देखते हुए पंडित जवाहर लाल नेहरु ने कहा था कि, विश्वविद्यालय का अस्तित्त्व मानवता के लिए सहिष्णुता और विवेक के लिए विचारगत साहस तथा सत्य की खोज के लिए होता है। उसका लक्ष्य है मानव समाज निरंतर उद्देश्य के लिए कदम बढ़ाये। राष्ट्र जनता जनता की भलाई इसी में है की विश्वविद्यालय अपने दायित्व का समुचित निर्वहन करे। राधाकृष्णन आयोग ने कहा कहा था कि, यदि शिक्षा और व्यक्ति के व्यक्तित्व का विकास करना चाहते हो तो प्रत्येक गाँव में ग्रंथालय की स्थापना करना आवश्यक है, पुस्तकालय शिक्षा संस्था का ह्द्य है।

पुस्तकालय का समुचित विकास करने के सम्बन्ध में पुस्तकालय विज्ञान के जनक डॉ. एस. आर. रंगनाथन ने कहा था कि, पुस्तकालय का अर्थ मात्र पुस्तकालयों का विकास ही नही वरन पुस्तकालयों का नियोजन विकास है। इसी क्रम में डॉ. रंगनाथन के द्वारा निर्मित भारत में पुस्तकालयों के विकास हेतु एक 30 वर्षीय योजना 1950 में प्रकाशित की गई थी। यह अवश्य कहा जाता है कि डॉ. रंगनाथन के पांच सूत्रों के उद्देश्यों को पूरा करना है तो शासन एवं पुस्तकालय व शासन प्रबंधन पाठको व सभी का सहयोग प्राप्त होना चाहिए।

उद्देश्य-

- पुस्तकालय में विभिन्न प्रकार की कमियों के बारे में पता लगाना
- पुस्तकालय का छात्रों द्वारा उपयोग कितना किया जाता है, उसकी जानकारी प्राप्त करना व भवन के विकास की जानकारी प्राप्त करना

उपकल्पना- पुस्तकालय का संचालन पुस्तकालय विज्ञान के निम्नानुसार हो रहा है व पुस्तकालय में आधूनकीकरण की वर्तमान स्थिति क्या है।

अध्ययन क्षेत्र- कोई भी अध्ययन पूर्णत: सफल हो सके उसके लिए आवश्यक है, कि किये जा रहे अध्ययन को क्रमबद्ध एवं वैज्ञानिक पद्धति से किया जाये व व्यक्ति आसानी से समझ सके।

शहडोल संभाग का परिचय- शहडोल संभाग के अंतर्गत तीन जिले

UGC Journal No. (Old) 2138
Peer-Reviewed Research Journal
Impact Factor 4.875, ISSN 0975-4083
Vol.- 24, Hindi Edition, Year-12, Oct. 2022- March 2023

मध्य प्रदेश एवं भारत की प्रति व्यक्ति आय का तुलनात्मक अध्ययन

• राकेश कुमार दिलावरे

सारांश- मध्य प्रदेश एवं भारत की प्रति व्यक्ति आय की तुलना करने से पता चलता है कि मध्य प्रदेश राज्य की प्रति व्यक्ति आय भारत की प्रति व्यक्ति आय से आपेक्षाकृत कम हैं। मध्य प्रदेश सरकार के द्वारा प्रति व्यक्ति आय को लगातार सुधारा जा रहा हैं जो कि मध्य प्रदेश के विकास को दिखा रहा हैं।

मुख्य शब्द - प्रति व्यक्ति आय, औसत आय, विकास, मानव विकास सूचकांक

प्रस्तावना- प्रति व्यक्ति आय एक देश के लोगो की औसत आय होती हैं प्रति व्यक्ति एक देश के विकास को नापने का एक अच्छा पैमाना हैं। एक देश की प्रति व्यक्ति आय बढ रही हैं तो इसका मतलब हैं, देश विकास कर रहा हैं और प्रति व्यक्ति आय स्थिर बनी हैं इसका मतलब हैं कि देश में विकास की दर धीमी हैं एक देश के विकास को देखने के लिये मानव विकास सूचकांक भी प्रति व्यक्ति आय को महत्वपूर्ण चर के रुप में उपयोग करता हैं प्रति व्यक्ति आय राष्ट्रीय आय की एक अवधारणा हैं, एक देश के प्रति व्यक्ति आय के आंकड़े पूरे देश के व्यक्तियों की प्रति व्यक्ति आय बताते हैं या हम कह सकते हैं कि पूरे देश के व्यक्तियों की औसत आय को दर्शाते हैं। भारत की प्रति व्यक्ति आय में सभी राज्य शामिल हैं। हम उपरोक्त शोध में मध्य प्रदेश राज्य की प्रति व्यक्ति आय की तुलना पूरे देश की प्रति व्यक्ति आय से कर, जानने का प्रयास करेगे की मध्य प्रदेश एवं भारत की प्रति व्यक्ति आय किस प्रकार परिर्वतीत हो रही हैं।

अध्ययन की विधि- प्रत्येक विषय की अध्ययन प्रणाली विषय से संबंधित दृष्टिकोण होता है जो समय एवं विषय के साथ विकसित हो जाता है। विषय के विकास के इस क्रम में मान्य विशिष्ट दृष्टिकोण विधिया बन जाती है। एक सामाजिक शोध को वैज्ञानिक स्वरुप प्रदान करने के लिए एवं सुविधापूर्वक परिणाम प्राप्त करने के लिए एक उचित अध्ययन विधि का चयन करना आवश्यक है, ताकि आँकड़ों का संकलन विश्लेषण एवं निष्कर्ष सुविधापूर्वक प्राप्त किए जा सके। प्रस्तुत शोध में द्वितीयक आकड़ो का उपयोग कर समाधान प्रस्तुत किया गया हैं।

उपरोक्त शोध में हम द्वितीयक आंकड़ो का प्रयोग कर रहे है मध्य प्रदेश एवं भारत की प्रति व्यक्ति आय की तुलना करने के लिए हम भारत आर्थिक सर्वेक्षण वर्ष

• सहायक प्राध्यापक (अर्थशास्त्र), शहीद भगतसिंह शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय पिपरिया जिला होंशगाबाद (म.प्र.)

2022-23 एवं मध्य प्रदेश आर्थिक सर्वेक्षण वर्ष 2022-23 के आंकडो का प्रयोग कर रहे है।

अध्ययन के उददेश्य-

1 मध्य प्रदेश राज्य की प्रति व्यक्ति आय का अध्ययन करना।
2 भारत की प्रति व्यक्ति आय का अध्ययन करना।
3 मध्य प्रदेश एवं भारत की प्रति व्यक्ति आय में हो रहे परिर्वतन की तुलना करना।

प्रति व्यक्ति आय सम्बन्धी ऑकड़ें-

भारत की प्रति व्यक्ति आय सम्बन्धी आंकड़े
वर्ष 2011-12 से 2022-23 तक रुपये में

वर्ष	प्रति व्यक्ति आय वर्तमान मूल्यों पर	प्रति व्यक्ति आय आधार मूल्यों पर
2011-12	63462	63462
2012-13	70983	65338
2013-14	79118	68572
2014-15	86647	72805
2015-16	94797	77659
2016-17	104880	83003
2017-18	115224	87576
2018-19	125946	92133
2019-20	132115	94270
2020-21	126855	85110
2021-22	150007	91481
2022-23	170620	96522

स्त्रोत- भारत आर्थिक सर्वेक्षण वर्ष 2022-23

उपरोक्त सारणी में वर्ष 2011-12 से 2022-23 तक के भारत की प्रति व्यक्ति आय के आंकड़े दिये गये है उपरोक्त आंकड़ो का अध्ययन करने से ज्ञात होता हैं कि वर्ष 2011-12 से भारत की प्रति व्यक्ति आय लगातार बढ़ती जा रही है, किन्तु वर्ष 2020-21 में कोविड-19 के कारण अचानक घट जाती हैं फिर दोबारा बढ़ना शुरु हो गयी। इसके साथ ही हम भारत की प्रति व्यक्ति आय को वर्तमान मूल्यों एवं आधार मूल्यो के आधार पर देखे तो पता चलता है कि दोनो में अन्तर लगातार बढ़ रहा हैं, जिससे साफ पता चलता हैं कि महगाई बढ़ रही हैं।

मध्य प्रदेश की प्रति व्यक्ति आय सम्बन्धी
आंकड़ें वर्ष 2011-12 से 2022-23 तक रुपये में

वर्ष	प्रति व्यक्ति आय वर्तमान मूल्यो पर	प्रति व्यक्ति आय आधार मूल्यो पर
2011-12	38497	38497
2012-13	44773	41142
2013-14	51849	42548
2014-15	55678	44027
2015-16	62080	47351
2016-17	74324	52782
2017-18	81966	54824
2018-19	92337	59005
2019-20	101909	60452
2020-21	103654	56320
2021-22	121594	61534
2022-23	140583	65023

स्त्रोत- मध्य प्रदेश आर्थिक सर्वेक्षण वर्ष 2022-23

उपरोक्त सारणी में वर्ष 2011-12 से 2022-23 तक के मध्य प्रदेश की प्रति व्यक्ति आय के आंकडे दिये गये हैं उपरोक्त आंकड़ों का अध्ययन करने से ज्ञात होता हैं कि वर्ष 2011-12 से भारत की प्रति व्यक्ति आय लगातार बढ़ती जा रही है किन्तु वर्ष 2020-21 में कोविड-19 के कारण अचानक घट जाती हैं फिर दोबारा बढ़ना शुरु हो गयी। इसके साथ ही हम मध्य प्रदेश की प्रति व्यक्ति आय को वर्तमान मूल्यों एवं आधार मूल्यों पर के आधार पर देखे तो पता चलता है कि दोनो में अन्तर लगातार बढ़ रहा हैं जिससे साफ पता चलता हैं कि महगाई बढ़ रही हैं।

मध्य प्रदेश एवं भारत की प्रति व्यक्ति आय का तुलना
वर्ष 2011-12 से 2022-23 तक रुपये में

वर्ष	भारत की प्रति व्यक्ति आय वर्तमान मूल्यो पर	मध्य प्रदेश की प्रति व्यक्ति आय वर्तमान मूल्यो पर	भारत की प्रति व्यक्ति आय आधार मूल्यो पर	मध्य प्रदेश की प्रति व्यक्ति आय आधार मूल्यो पर
2011-12	63462	38497	63462	38497
2012-13	70983	44773	65338	41142
2013-14	79118	51849	68572	42548
2014-15	86647	55678	72805	44027
2015-16	94797	62080	77659	47351
2016-17	104880	74324	83003	52782
2017-18	115224	81966	87576	54824
2018-19	125946	92337	92133	59005
2019-20	132115	101909	94270	60452
2020-21	126855	103654	85110	56320
2021-22	150007	121594	91481	61534
2022-23	170620	140583	96522	65023

स्त्रोतः भारत आर्थिक सर्वेक्षण वर्ष 2022-23। स्त्रोतः मध्य प्रदेश आर्थिक सर्वेक्षण वर्ष 2022-23।

उपरोक्त सारणी में वर्ष 2011-12 से 2022-23 तक के भारत एवं मध्य प्रदेश राज्य के प्रति व्यक्ति आय के आंकड़े दिये गये हैं उपरोक्त आंकड़ों में हम वर्तमान मूल्यो एवं आधार मूल्यो पर भारत एवं मध्य प्रदेश राज्य के प्रति व्यक्ति आय के आंकड़ो की तुलना करते है तो पाते है कि प्रत्येक वर्ष की स्थिति में मध्य प्रदेश की अपेक्षा भारत की प्रति व्यक्ति आय अधिक हैं, इसका अर्थ हैं कि मध्य प्रदेश राज्य अभी भी प्रति व्यक्ति आय के मामले में पिछड़ा हुआ हैं और प्रति व्यक्ति आय कम होने का एक कारण मध्य प्रदेश राज्य की अधिक जनसंख्या भी हैं।

मध्य प्रदेश की प्रति व्यक्ति आय कम होने के कारण-

1 लघु एवं कुटिर उद्योगो की कमी।
2 मध्य प्रदेश राज्य की अधिक जनसंख्या होना।
3 मध्य प्रदेश के औद्योगिकरण का धीमा विकास।
4 कृषि पर अधिक निर्भरता होने के कारण।
5 ग्रामीण विकास की कमी।

मध्य प्रदेश की प्रति व्यक्ति आय बढ़ाने हेतु उपाय-

1 लघु एवं कुटीर उद्योगो को बढ़ावा देना।
2 परिवार नियोजन कार्यक्रम द्वारा जनसंख्या नियंत्रित करना।
3 औद्योगिकरण के तीव्र विकास के भरसक प्रयास करना।
4 कृषि क्षेत्र से शून्य सीमांत उत्पाद वाले लोगो को हटाकर अन्य क्षेत्रो में लगाकर।
5 ग्रामीण विकास को प्राथमिकता देना।

निष्कर्ष- भारत एवं मध्य प्रदेश राज्य की प्रति व्यक्ति आय की तुलना करने से पता चलता हैं कि भारत की अपेक्षा मध्य प्रदेश राज्य की प्रति व्यक्ति आय आपेक्षाकृत कम हैं क्योकि भारत की प्रति व्यक्ति आय में सभी राज्यो के लोगो की औसत आय शामिल हैं, भारत की प्रति व्यक्ति आय में बहुत से विकसित राज्यो की प्रति व्यक्ति आय शामिल हैं। मध्य प्रदेश की प्रति व्यक्ति आय को बढ़ाने के लिये राज्य सरकार के द्वारा हर क्षेत्र में भरसक प्रयास किये जा रहे हैं, जिससे हाल ही के वर्षो में मध्य प्रदेश राज्य की प्रति व्यक्ति आय बढ़ रही हैं, मेक इन इंडिया, डिजिटल इंडिया एवं स्टार्ट आफ के माध्यम से मध्य प्रदेश सरकार हर क्षेत्र में कार्य कर तेजी से विकास कर रही हैं जिससे कृषि, लघु एवं कुटीर उद्योगों, ग्रामीण विकास, सेवा क्षेत्र हर जगह तेजी से विकास हो रहा हैं।

संदर्भ ग्रन्थ सूची-

- https://mpplanningcommission.gov.in
- https;//www.indiabudget.gov.in

UGC Journal No. (Old) 2138
Peer-Reviewed Research Journal
Impact Factor 4.875, ISSN 0975-4083
Vol.- 24, Hindi Edition, Year-12, Oct. 2022- March 2023

भारतीय पुनर्जागरण और दिनकर-काव्य

• डॉ. जय शंकर शाही

सारांश- राष्ट्रकवि डॉ. रामधारी सिंह दिनकर (1908-1974) के काव्य में पुनर्जागरण की चेतना, राष्ट्रीयता, क्रान्तिकारी वैचारिकी, ब्रिटिश औपनिवेशिक-साम्राज्यवादी आधिपत्य के खिलाफ आक्रोश और विद्रोह, कृषक-विमर्श और प्रगतिवादी-मानवतावादी संवेदना निहित है। इस शोध पत्र में यह उद्घाटित किया गया है कि किस प्रकार दिनकर की कविताएँ भारतीय पुनर्जागरण की चेतना से उद्भूत है तथा ये पुनर्जागरण को प्रखरता से अभिव्यक्त करती हैं।

मुख्य शब्द - भारतीय पुनर्जागरण, साम्राज्यवाद, उपनिवेशवाद, ब्रिटिश आधिपत्य, भारतीय स्वतंत्रता आंदोलन, राष्ट्रीयता, क्रान्ति, संस्कृति, मिथक, प्रतीक, काव्य

19वीं-20वीं शताब्दी में उद्भूत-उत्प्रेरित भारतीय पुनर्जागरण (Indian Rennaissance) युगान्तकारी परिघटना (Epoch making phenomenon) है, जिसने साम्राज्यवादी-उपनिवे'ावादी ब्रिटि'ा आधिपत्य के खिलाफ लगभग 200 वर्षों तक निरन्तर संचालित भारतीय स्वतंत्रता संग्राम को प्रेरित-प्रभावित-परिचालित किया। सुविख्यात इतिहासकारों-डॉ. तारचन्द, डॉ. यू.एन. घोषाल, डॉ. आर.सी. मजूमदार, डॉ. के.के. दत्ता, डॉ. सुमित सरकार, डॉ. विपन चन्द्र आदि ने 19वीं-20वीं शताब्दी के भारतीय सामाजिक-सांस्कृतिक-धार्मिक सुधार आंदोलनों का विश्लेषण करते हुए भारत के पुनर्जागरण (Rennaissance)[1] की अवधारणा प्रस्तुत की। 'यंग बंगाल आंदोलन', 'तत्वबोधिनी सभा', 'आत्मीय सभा', 'ब्रह्म समाज' (1828), 'आर्य समाज', 'प्रार्थना समाज', 'थियोसोफिकल सोसायटी' (1882), 'वहाबी', 'अहमदिया', 'अलीगढ़ आंदोलन', 'श्री नारायण गुरू परिपालनयोगम', 'रामकृष्ण मिशन', 'आत्मसम्मान आंदोलन', 'रहनुमाई माज्दायसनाम' आदि संस्थाओं-आंदोलनों ने भारतीय पुनर्जागरण का रोमांचकारी वातावरण निर्मित किया था, जिसे प्रसिद्ध इतिहासकार डॉ. बिपन चन्द्र 'Socio-religious reforms and the national awakening'[2] कहते हैं। 'सुधार आंदोलन की शायद सबसे बड़ी उपलब्धि यह थी कि इसने भारतीयों को समानता, स्वतंत्रता एवं जागरण का संदेश एक ऐसे समय पर दिया जब देश गुलामी की बेडियों में जकड़ा हुआ था और समस्त जन-जीवन अंधविश्वास, रूढ़िवादिता एवं अज्ञान के अंधकार में भटक रहा था'।[3]

• प्रोफेसर, हिन्दी विभाग, बाबू शोभाराम राजकीय कला महाविद्यालय, अलवर (राजस्थान)

राष्ट्रकवि दिनकर (1908-1974) की क्रान्तिकारी कविताओं का उद्‌गम पुनर्जागरण की इसी आलोकित चेतना में है। दिनकर काव्य भारतीय पुनर्जागरण को अभिव्यक्त करते हैं। प्रसिद्ध इतिहासकार अयोध्या सिंह लिखते हैं-'1878 तक भारत में नवजागरण के चिन्ह् उसकी विभिन्न भाषाओं में देखे गये। उनमें राष्ट्रीय साहित्य का जन्म हुआ जो एक तरफ भारतवासियों के बढ़ते राष्ट्रीय आंदोलन का दपर्ण था और दूसरी तरफ उसे आगे बढ़ाने का प्रबल अस्त्र।'[4]

दिनकर जी ने अपनी कविताओं में नवजागरण (Awakening)[5], देशभक्ति (Patriotism)[6], भारतीय गौरवशाली अतीत का अन्वेषण (Rediscovery of India's past)[7], साम्राज्यवाद-उपनिवेशवाद के खिलाफ गहरा आक्रोश, क्रान्ति की भावना, मानवतावाद, समानता, स्वतंत्रता, विश्वबन्धुत्व तथा समाज सुधार से सम्बन्धित चेतना को अभिव्यक्त किया है। 'जन जागरण के वैतालिक'[8], 'राष्ट्रीय अस्मिता के पक्षधर'[9], 'स्वतंत्रता आंदोलन के प्रवक्ता'[10], 'युगचारण'[11] दिनकर के काव्य में 'मानवतावाद का आदर्श पूरे जोर पर'[12] है।

प्रसिद्ध साहित्यकारों-समीक्षकों जैसे- श्री मन्मथनाथ गुप्त, डॉ. खगेन्द्र ठाकुर, डॉ. विजेन्द्र नारायण सिंह, डॉ. शिव सागर मिश्र, डॉ. दिवाकर, डॉ. शंभूनाथ, डॉ. जयसिंह नीरज, डॉ. सुरेन्द्रनाथ दीक्षित, डॉ. कामेश्वर शर्मा, डॉ. प्रमोद नारायण सिंह, डॉ. कुमार विमल, डॉ. वचनदेव कुमार तथा डॉ. रेणु व्यास आदि ने राष्ट्रकवि दिनकर के व्यक्तित्व और कृतित्व का विषद अनुशीलन किया है। 'दिनकर की सबसे बड़ी विशेषता है अपने देश और युग-सत्य के प्रति जागरूकता। वे छायावादोत्तर काल की राष्ट्रीय-सांस्कृतिक काव्य-धारा के सबसे सशक्त कवि है। दिनकर ने राष्ट्र को उसकी तात्कालीन घटनाओं, यातनाओं, विषमताओं, समताओं आदि के ही रूप में नहीं, उसकी सं'लिष्ट सांस्कृतिक परम्परा के रूप में पहचाना है और उसके प्राचीन मूल्यों का नये जीवन-संदर्भों के परिप्रेक्ष्य में आकलन कर एक ओर उन्हें जीवन्तता प्रदान की है, दूसरी ओर वर्तमान की समस्याओं और आकांक्षाओं को महत्व देते हुए उन्हें अपने प्राचीन किन्तु जीवन्त मूल्यों से जोड़ना चाहा है।'[13]

डॉ. रामधारी सिंह 'दिनकर' के काव्य संग्रह 'रेणुका' (1935), 'हुंकार' (1938), 'द्वंद्वगीत' (1940), 'कुरूक्षेत्र' (1946), 'सामधेनी' (19417), 'रश्मिरथी' (1952), 'नीलकुसुम' (1954), 'चक्रवाल' (1956) तथा 'परशुराम की प्रतीक्षा' (1963) में जागरण, राष्ट्रीय चेतना, क्रान्ति, गौरवपूर्ण अतीत के प्रति सम्मान, स्वतंत्रता हेतु उत्सर्ग-भावना प्रमुखता से अभिव्यक्त हैं। राष्ट्रकवि दिनकर लिखते हैं-

'मैं विभा-पुत्र, जागरण गान है मेरा/जग को अक्षय आलोक दान है मेरा
उदयाचल पर आलोक शरासन ताने/आया मैं उज्ज्वल गीत विभा के गाने'[14]

महाकवि दिनकर स्वयं के बारे में बताते हैं कि वे प्रकाश पुत्र हैं और उनका गान जनजागरण के लिए है। संसार के अंधकार को मिटाकर जिस प्रकार सूर्य प्रकाश फैलाता है, उसी प्रकार कवि जगत को अपनी कविता के माध्यम से आलोक का दान करते हैं। कवि का कहना है कि पूर्व दिशा में जिस प्रकार सूर्योदय होता है, उसी प्रकार कवि आलोक अर्थात प्रकाश का धनुषबाण लिए हुए प्रकट होता है और ज्योति के गीत रचता है,

सुनाता है। उपर्युक्त काव्यांश भारतीय पुनर्जागरण की आलोकित चेतना को चित्रित करती है। कवि लिखते हैं–'तिमिर ज्योति की समर भूमि का मैं चारण, मैं वैताली'। दिनकर कहते हैं कि वे अंधकार और प्रकाश के बीच निरन्तर चलने वाले युद्ध के रणक्षेत्र का चारण और वैताली हैं। अंधकार प्रतीक रूप में यहाँ भारत देश की परधीनता को संकेतित करता है, वहीं प्रकाश पुनर्जागरण की चेतना और भारतीय स्वतंत्रता संग्राम को ध्वनित करता है। 'नयी दिल्ली', 'तांडव', 'दिगम्बरी', 'हाहाकार', 'त्रिपथगा', 'पाटलीपुत्र की गंगा', 'अनल किरीट' जैसी कविताओं में कवि ने विदेशी शासन से देश को मुक्त करने का आह्वान किया है–

"वह प्रदीप जो दीख रहा है झिलमिल, दूर नहीं है
थक कर बैठ गए क्या साथी, मंजिल दूर नहीं है।"

'हिमालय' (1933) शीर्षक कविता में दिनकर जी ने पर्वतराज हिमालय को 'नगपति', 'जननी का हिमकिरीट','भारत का दिव्य भाल' कहा है। यह प्रतीकात्मक कविता मिथकीय, सांस्कृतिक-आध्यात्मिक-ऐतिहासिक-पौराणिक संदर्भों को समाहित किये हुए है। कवि हिमालय से आह्वान करता है कि वह अपना मौन साधना-तपस्या त्यागे और भारत माता पर आए हुए गुलामी के संकट का समाधान करे। कवि का मानना है कि हिमालय पर्वत भारत भूमि का सदियों से पहरेदार रहा है और सेनापति की तरह उसने भारत की सीमाओं को विदेशी आक्रमणकारियों से बचाया है। कवि हिमालय को संबोधित करते हुए कहते हैं कि भारत की पुण्य भूमि के प्रति उसकी अपार करूणा की भावना रही है जो गंगा, यमुना, झेलम, चिनाब, रावी, सतलज आदि नदियों में प्रवाहित होने वाले जल में परिलक्षित होती है। कवि पर्वतराज को बताता है कि जन्मभूमि भारतमाता ब्रिटि'I आधिपत्य के तहत गुलामी की बेड़ियों में जकड़ी है, फिरंगी शासन देश की सम्पदा का दोहन कर रहे हैं, देशवासियों पर अत्याचार-अनाचार कर रहे हैं और पूरा देश आर्थिक-सामाजिक-राजनीतिक-सांस्कृतिक समस्याओं के सर्प के दंश से पीड़ित है। भारत के उज्जवल अतीत को याद करता हुआ कवि पर्वतराज हिमालय से अनुरोध करता है कि वह दे'I की पराधीन-हीन दशा का समाधान खोजे।

यह कविता चेतना प्रवाह शैली (Stream-of-Consciousness) में रचित है, जिसमें कवि भारत के इतिहास, भूगोल, संस्कृति, आध्यत्म आदि का सिंहावलोकन करता हुआ पर्वतराज हिमालय से संवाद करता है। कवि लिखते हैं–

'पैरों पर ही पड़ी हुई, मिथिला भिखारिनी सुकुमारी
तू पूछ, कहाँ इसने खोई अपनी अनन्त निधियाँ सारी'?[15]

दिनकर प्राचीन भारत की मिथिला की संस्कृति को याद दिलाते हुए हिमालय से कहते हैं कि वह वैभवशाली मिथिला नगरी आज पराधीनता के कारण भिखारिनी बन गई है, जो कभी राजा जनक और जानकी माता के गौरवशाली स्मृतियों की प्रतीक थी। कवि भारत के गौरवशाली इतिहास का स्मरण हिमालय पर्वत को दिलाता है। यह देश राम के रामत्व और कृष्ण के कृष्णत्व की आभा से उद्‌भाषित है। इतिहास का पुनरान्वेषण करता हुआ कवि प्राचीन मगध के चक्रवर्ती सम्राट चन्द्रगुप्त मोर्य और देवानांप्रियदर्शी अशोक के पुरूषार्थ को याद करता है और हिमालय को सम्बोधित करता है–

"तू पूछ अवध से राम कहाँ?/वृन्दा बोलो घनश्याम कहाँ?
ओ मगध, कहाँ मेरे अ'ोक?/वह चन्द्रगुप्त बलधाम कहाँ?[16]

कवि हिमालय से कहते हैं कि भारत की स्वतंत्रता प्राप्ति हेतु हमें धर्मराज युधिष्ठिर की जरूरत नहीं है, हमें गांडीव धनुषधारी अर्जुन और गदाधारी भीम की जरूरत है, जो भारत माता को गुलामी की जंजीरों से मुक्त करा सकें-

"रे, रोक युधिष्ठिर को न यहाँ,/जाने दे उनको स्वर्ग धीर।
पर फिरा हमें गांडीव-गदा,/लौटा दे अर्जुन-भीम वीर।"[17]

कवि इस कविता में महात्मा बुद्ध के उपदेश को भी याद करते हैं, साथ ही विद्यापति कवि का भी स्मरण करते हैं। दिनकर पर्वतराज हिमालय से कहते हैं-

'पूछ सिकता-कण से हिमपति तेरा वह राजस्थान कहाँ?
वन-वन स्वतंत्रता दीप लिए फिरने वाला बलवान कहाँ?[18]

कवि राजस्थानी शौर्य और गौरवशाली इतिहास का स्मरण करते हुए राणाप्रताप की वीरता का यहाँ संकेत करते हैं कि किस प्रकार उन्होंने स्वतंत्रता का दीप जलाये रखा, वन-वन भटकते रहे, घास की रोटी खाई लेकिन अकबर की अधीनता स्वीकार नहीं की। दिनकर हिमालय पर्वत से आह्वान करते हैं-

"कह दे शंकर से आज करें/वे प्रलय-नृत्य फिर एक बार।
सारे भारत में गूंज उठे/'हर-हर बम' का फिर महोच्चार।"[19]

हिमालय के कैलाश पर्वत पर महादेव शंकर का निवास माना जाता है और कवि हिमालय से अनुरोध करता है कि वह आशुतोष शिव से कहे कि वे लास्य नृत्य नहीं बल्कि प्रलयंकर तांडव नृत्य करें और सारे भारत में हर-हर-बम-बम का महोच्चार गूंज उठे। विदेशी ब्रिटिश पराधीनता की जंजीरों में जकड़ी भारतमाता मुक्त हो सके। इस तरह की क्रांतिकारी वैचारिकी दिनकर की इस कविता में संगुफित है, जो भारतीय पुनर्जागरण की चेतना का ही प्रक्षेपण है। कवि दिनकर हिमालय से कहते हैं कि आज जननी जन्मभूमि पर संकट आ पड़ा है और यह समय मौन साधने का और तपस्या का नहीं है बल्कि जागरण का है। हिमालय को मौन त्यागने और हुँकार भरने का कवि आह्वान करते हैं-

'नवयुग शंख-ध्वनि जगा रही/तू जाग जाग मेरे विशाल'।[20]

इस तरह हम देखते हैं कि हिमालय कविता जागरण की कविता है। इसमें कवि पर्वतराज को जगाने के साथ ही प्रतीकात्मक रूप से सम्पूर्ण भारतवासियों को जगाना चाहते हैं जिससे सारे भारतवासी संगठित होकर, एकता के सूत्र में बंधकर देश की स्वतंत्रता के आंदोलन को और उग्र और प्रखर बनाए जिससे भारतमाता विदेशी गुलामी से आजाद हो सके। इस प्रकार यह कविता भारतीय पुनर्जागरण की चेतना से उद्भूत है, साथ ही यह भारतीय पुनर्जागरण को अभिव्यक्त करती है। 'सामधेनी' काव्य संग्रह में स्वाधीनता के यज्ञ में बलि होने वाली जवानियों का आह्वान किया गया है-

"जला अस्थियाँ बारी-बारी,/छिटकाई जिनने चिन्गारी,
जो चढ़ गये पुण्य वेदी पर/लिए बिना गर्दन का मोल।"

दिनकर की कविताएँ देशभक्ति, बलिदान और क्रान्ति की प्रेरणा देती है। कवि भारतीय इतिहास के उन वीर बांकुरों, सूरमाओं को नमन करता हुआ मेवाड़ के राणा

प्रताप का दृष्टान्त देता है जिन्होंने मेवाड़ की स्वतंत्रता को सुरक्षित रखने के लिए जंगलों में भटकते हुए घास की रोटी खाई लेकिन मुगलों की अधीनता स्वीकार नहीं की–

"सूख रही है बोटी–बोटी,/मिलती नहीं घास की रोटी।
गढ़ते हैं इतिहास देश का,/सहकर कठिन क्षुधा की मार,
नमन उन्हें मेरा शत बार

दिनकर–काव्य में भारत राष्ट्र का भास्वर बिम्ब है। कवि का मानना है कि भारत सम्पूर्ण संसार के सूर्य की तरह प्रदीप्त है, भारत एकता और प्रेम का संदेश देता है–

"किसको नमन करूँ मैं भारत/किसको नमन करूँ मैं?...
जहाँ कहीं एकता अखण्डित, जहाँ प्रेम का स्वर है
देश–देश में वहाँ खड़ा, भारत जीवित भास्वर है।"

कवि दिनकर का विश्वास क्रान्ति में था, वे भगत सिंह, चन्द्रशेखर आजाद, सुभाष चन्द्र बोस के सिद्धान्तों से प्रभावित थे और ब्रिटिश दासता से मुक्ति के लिए सशस्त्र क्रान्ति के पक्षधर थे–

"छीनता हो स्वत्व कोई और तू,/त्याग, तप से काम ले यह पाप है,
पुण्य है विच्छिन्न कर देना उसे/बढ़ रहा तेरी तरफ जो हाथ है।"

दिनकर जी किसान और मजदूरों की सहभागिता स्वतंत्रता–आंदोलन में चाहते थे। अमीरी और गरीबी की खाई को वे पाटना चाहते थे। सामाजिक असमानता के प्रति उनके मन में बड़ा क्षोभ था–

"वानों को मिलता दूध वस्त्र,/भूखे बच्चे अकुलाते हैं।
माँ की गोद से ठिठुर चिपक/जाड़े की रात बिताते हैं।"

दिनकर–काव्य स्वतंत्रता, समानता और विश्व–बंधुत्व की प्रेरणा देता हुआ पुरूषार्थ, प्रगति और पराक्रम का संदेशवाहक है–

"नींद कहाँ उनकी आँखों में,/जो धुन के मतवाले हैं?
गति की तृषा और ही बढ़ती,/पड़ते पग में जब छाले हैं।"

इस प्रकार दिनकर काव्य में भारतीय स्वतंत्रता–संग्राम का जयघोष, भारत राष्ट्र का उज्जवल बिम्ब, अन्याय, अनीति, शोषण के विरूद्ध संघर्ष और क्रान्ति का स्वर, समतामूलक समाज की स्थापना का स्वप्न, सर्वोदय तथा विश्व शांति के आदर्श निहित हैं।

साहित्य को समाज का दर्पण माना गया है क्योंकि यह देश और समाज के यथार्थ का वर्णन करता है। भारतीय पुनर्जागरण की प्रेरणा से ब्रिटिश शासन के खिलाफ संचालित स्वतंत्रता आंदोलन के समानान्तर अनेकानेक किसान आंदोलन हुए जिनका उद्देश्य साम्राज्यवादी ब्रिटिश सत्ता को हटाकर किसानों की समस्याओं का समाधान खोजना था। राष्ट्रकवि दिनकर की कविताओं में किसान जीवन की दुर्दशा का भी वर्णन मिलता है, साथ ही विभिन्न किसान आंदलनों का साक्ष्य भी प्राप्त होता है।

ब्रिटिश शासन के उत्पीड़न और शोषण के खिलाफ किसानों के अनेक आंदोलन हुए जैसे–बंगाल का नील आंदोलन (1859–60), पाबना (बंगाल) का किसान आंदोलन (1870–80), पंजाब का कूका आंदोलन (1872), दक्कन के आंदोलन,

चम्पारन का नील आंदोलन और सत्याग्रह (1917), केरल में मोपला किसानों का आंदोलन आदि।

स्वतंत्रता आंदोलन के समानान्तर चलने वाले इन किसान आंदोलनों की प्रतिध्वनि दिनकर काव्य में सुनाई पड़ती है। इनका काव्य 'युगधर्म का हुंकार'[21] है, जिसमें 'किसान विमर्श का व्यापक केनवास मिलता है।'[22] प्रसिद्ध समीक्षक डॉ. नन्दकिशोर नवल लिखते हैं-'जनता को इस कदर प्यार करने वाला कवि उनके बाद नागार्जुन और मुक्तिबोध के अलावा कोई और नहीं हुआ।'

हिन्दी कविता के लगभग हजार वर्षों से अधिक के इतिहास में पहली बार दिनकर की कविता में ही किसान-जीवन की त्रासदी को इतने व्यापक तरीके से चित्रित किया गया है। जिस प्रकार उपन्यास सम्राट प्रेमचन्द की रचनाओं में किसान जीवन की विविध समस्याओं का वर्णन मिलता है उसी प्रकार दिनकर की कविताओं में भारतीय किसानों की दयनीय दशा का पोट्रेट मिलता है। बारदोली सत्याग्रह के बारे में कवि दिनकर ने 1928 ई. में लिखा- 'रखी लाज भारत की इस दम हँसुए, खुरपी वालों ने/शस्त्र बिना ही युद्ध किया है इन माई के लालो ने/दिखा दिया स्वेच्छाचारी को शुभ सत्याग्रह की क्षमता/तोप, तमंचे, जेल करेंगे कब यारों! इसकी समता/जनसत्ता की राजशक्ति है उठो! उठो! आँखे खोलो।/सदियों की भूलों पर रो लो आँसू में आँखे धो लो।/सत्याग्रह स्वाधीन करेगा, जन्मभूमि की जय बोलो/बलि-वेदी पर चढ़कर जग में अनुपम कीर्ति कमाई है/वीर बारदोली वालों की गाओ विजय बधाई है।'[23]

राष्ट्रकवि डॉ. रामधारी सिंह दिनकर ने किसानों की गरीबी और विषमता का चित्रण करते हुए 1937 ई. में लिखा कि किस तरह ब्रिटिश शासन में असमानता गरीबी विद्यमान है, किसानों और उनके बच्चों को भोजन भी उपलब्ध नहीं है जबकि विदे'ाी शासकों के कुत्ते भी खुशहाल है- 'वानों को मिलता दूध-वस्त्र, भूखे बच्चे अकुलाते हैं/माँ की गोद से ठिठुर-चिपक जाड़े की रात बिताते हैं।'[24] 1931 ई. में किसान आंदोलन के दौरान दिनकर लिखते हैं-

'देख, कलेजा फाड़ कृषक/दे रहे हृदय- शोणित की धारों
बनती ही उनपर जाती है/वैभव की ऊँची दीवारें।
धन-पि'ााच के कृषक-मेघ में/नाच रही पशुता मतवाली,
आगन्तुक पीते जाते हैं/दीनों के शोणित की प्याली।'[25]

कवि बताता है कि किस तरह किसान एड़ी-चोटी का पसीना बहाकर, खून-पसीना एक कर अन्न उत्पादन करते हैं वहीं विदेशी पूँजीपति वर्ग धन दौलत का पिशाच बना हुआ है जो किसानों की बलि लेकर प्रसन्न होता है। जिस प्रकार पुराने समय में सम्राट अपने चक्रवर्तीत्व स्थापित करने के लिए अश्वमेघ यज्ञ किया करते थे जिसमें अंततः यज्ञ के अश्व की बलि दी जाती थी ठीक उसी प्रकार ब्रिटिश शासक 'कृषकमेध' अर्थात् किसानों की बलि ले रहे हैं।

इस कविता में स्वतंत्रता आंदोलन के समानान्तर संचालित किसान-आंदोलन के कारणों की झलक मिलती है। ब्रिटिश शासन में किसानों की बढ़ती हुई निर्धनता, ऋणग्रस्तता और बदहाली का दस्तावेज यह काव्य है। कवि दिनकर किसानों की समस्या

के समाधान के लिए स्वर्ग को लूटने तक की बात कहते हैं, यह स्वर्ग साम्राज्यवादी औपनिवेशिक ब्रिटिश शासन और सत्ता का है–

'हटो व्योम के मेघ, पंथ से/स्वर्ग लूटने हम आते हैं
'दूध दूध' ओ वत्स! तुम्हारा/दूध खोजने हम जाते हैं।'

इन कविताओं में 1920 तथा 1930 के दशकों में पुनर्जागरण की चेतना के परिणामस्वरूप हुए विभिन्न किसान आंदोलनों की प्रतिध्वनि सुनाई पड़ती है।

निष्कर्ष-

1. दिनकर काव्य भारतीय पुनर्जागरण की चेतना से उद्भूत होकर इसे प्रखरता से अभिव्यक्त करता है।
2. दिनकर 'ज्योतिर्धर', 'आलोकधन्वा' तथा 'रश्मिरथी' कवि हैं जो जागरण का संदेश प्रसारित करते हैं।

संदर्भ ग्रन्थ सूची-

1. सिंह धीरेन्द्र (2011)–पंचायतीराज में महिलाओं की सहभागिता http://www.sriprbhu.blogspot.in
2. Chandra Dr. Bipan, Mridula Mukherji, Aditya Mukherji, K.N. Pannikar, Sucheta Mahajan (Editor)- India's struggle for Independence, Penguin book India Ltd., Delhi (1989) pg. 74
3. Chandra Dr. Bipan, Mridula Mukherji, Aditya Mukherji, K.N. Pannikar, Sucheta Mahajan (Editor)- India's struggle for Independence, Penguin book India Ltd., Delhi (1989) pg. 82
4. शुक्ल डॉ. आर.एल.–आधुनिक भारत का इतिहास (1987) हिन्दी माध्यम कार्यान्वय निदेशालय, दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली पृ. 269
5. सिंह अयोध्या(1977) भारत का मुक्ति संग्राम, मेकमिलन इंडिया लि. दिल्ली
6. Sarkar Dr. Sumit (1983) Modern India, Macmillan India Ltd. Delhi Pg. 76
7. Sarkar Dr. Sumit (1983) Modern India, Macmillan India Ltd. Delhi Pg. 82
8. Chandra Dr. Bipan (1988) Modern India, NCERT, Delhi pg. 156
9. सिंह डॉ. बच्चन : हिन्दी साहित्य का दूसरा इतिहास (2006) राधाकृष्ण प्रकाशन प्रा.लि. दिल्ली पृ. 405
10. स्नातक डॉ. विजयेन्द्र : हिन्दी साहित्य का इतिहास (1996) साहित्य अकादमी, दिल्ली पृ. 270
11. नवल डॉ. नन्दकिशोर (2013) दिनकर अर्धनारीश्वर कवि, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली पृ. 4
12. सिन्हा डॉ. सावित्री (1963) युगचारण दिनकर, नेशनल पब्लिशिंग हाउस, नई दिल्ली, पृ. 1
13. द्विवेदी आचार्य हजारी प्रसाद (1990) हिन्दी साहित्य : उद्भव विकास, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली पृ. 251
14. डॉ. नगेन्द्र (सम्पादक) : 'हिन्दी साहित्य का इतिहास'(1990) में डॉ. रामदरश मिश्र का लेख, नेशनल पब्लिशिंग हाउस, दिल्ली पृ. 629
15. नवल डॉ. नंदकिशोर, तरूण कुमार (सम्पादक) (2011) दिनकर रचनावली खंड–1, लोकभारती प्रकाशन, इलाहबाद पृ. 105
16. नवल डॉ. नंदकिशोर, तरूण कुमार (सम्पादक) (2011) दिनकर रचनावली खंड–1,

लोकभारती प्रकाशन, इलाहबाद पृ. 112

17. नवल डॉ. नंदकिशोर, तरूण कुमार (सम्पादक) (2011) दिनकर रचनावली खंड-1, लोकभारती प्रकाशन, इलाहबाद पृ. 112
18. नवल डॉ. नंदकिशोर, तरूण कुमार (सम्पादक) (2011) दिनकर रचनावली खंड-1, लोकभारती प्रकाशन, इलाहबाद पृ. 113
19. नवल डॉ. नंदकिशोर, तरूण कुमार (सम्पादक) (2011) दिनकर रचनावली खंड-1, लोकभारती प्रकाशन, इलाहबाद पृ. 113
20. नवल डॉ. नंदकिशोर, तरूण कुमार (सम्पादक) (2011) दिनकर रचनावली खंड-1, लोकभारती प्रकाशन, इलाहबाद पृ. 113
21. नवल डॉ. नंदकिशोर, तरूण कुमार (सम्पादक) (2011) दिनकर रचनावली खंड-1, लोकभारती प्रकाशन, इलाहबाद पृ. 114
22. शाही डॉ. जयशंकर -'दिनकर काव्य : युगधर्म का हुंकार', शोध समीक्षा और मूल्यांकन Vol. IV Sept. 2012, जयपुर, पृ. 105-106
23. शाही डॉ. जयशंकर -'धरती है केवल किसान की : हिन्दी कविता में किसान विमर्श', रिसर्च जरनल ऑफ आर्ट्स मैनेजमेन्ट एण्ड सोसल साइंस, अंक IX-II Sept. 2013ए गायत्री पब्लिकेशन्स, रीवा (म.प्र.) पृ. 9-14
24. नवल डॉ. नन्दकिशोर, तरूण कुमार (सम्पादक) दिनकर रचनावली, खण्ड-1 (2011) लोकभारती प्रकाशन, इलाहबाद पृ. 105
25. नवल डॉ. नन्दकिशोर, तरूण कुमार (सम्पादक) दिनकर रचनावली, खण्ड-1 (2011) लोकभारती प्रकाशन, इलाहबाद पृ. 117
26. नवल डॉ. नन्दकिशोर, तरूण कुमार (सम्पादक) दिनकर रचनावली, खण्ड-1 (2011) लोकभारती प्रकाशन, इलाहबाद पृ. 135

Centre for Research Studies Rewa-486001 (M.P.) India
Registered Under M.P. Society Registration Act,
1973, Reg. No. 1802, Year-1997
www.researchjournal.in

ISSN 0975-4083

9 770975 408002

Published by Dr. Gayatri Shukla on behalf of Gayatri Publications Rewa- 486001 (M.P.)
Printed at Glory Offset, Nagpur